कर्म-साधना

प्रकाशक
साहित्य-प्रकाशन
मालीवाडा, दिल्ली ।

मूल्य—चार रुपया

मुद्रक
विश्वभारती प्रेस
पहाड़गंज, नई दिल्ली ।

विन्ध्य-प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत तथा उच्च शिक्षालयों के
पुस्तकालयों एवं पुरस्कार-वितरण के लिए स्वीकृत

कर्म - साधना

लेखक
रामसागर शास्त्री
दो शब्द
वृन्दावनलाल वर्मा

१९५४
साहित्य - प्रकाशन, दिल्ली

दो शब्द

'कर्म-साधना' की भाषा मे प्रवाह है और भाव गहरे हैं। लेखक ने अपने विषय के प्रतिपादन में परिश्रम और विचार से काम लिया है। प्रादेशिक बोली का अच्छा उपयोग हुआ है। ऐसे उद्देश्य-मूलक उपन्यासो की साहित्य और समाज को बडी आवश्यकता है।

— वृन्दावनलाल वर्मा

परमादरणीय
प्रोफेसर महावीरप्रसाद जी अग्रवाल को,
जिन्होंने मुझे साहित्य-साधना की
प्रेरणा दी,
सादर समर्पित ।

निवेदन

पाठकों के समक्ष 'कर्म-साधना' का जो स्वरूप उपस्थित है उसमें मैंने मानवीय आशाओं का वह रूप उपस्थित करने का प्रयास किया है, जो अविरल गति से बहनेवाले समय के इस प्रबल-प्रवाह में सुदृढ़ जलयान का काम दे। दिवा-रात्रि, सुख-दुःख एवं उत्थान-पतन का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। विषम परिस्थितियों में बहना, नैतिक निर्बलता का प्रतीक है। विषम-परिस्थिति ही सच्चे मानव-जीवन की कसौटी है। जैसे कुशल चित्रकार अपने चित्र में अप्रत्याशित रूप दिखाने का प्रयत्न नहीं करता, उसी प्रकार आदर्श मानव कठिन-से-कठिन परिस्थितियों में पड़कर भी कर्तव्य-च्युत नहीं होता। मेरे पात्र पृथ्वी से असंयुक्त नहीं, स्वर्ग के निवासी नहीं, अपितु इसी वसुन्धरा की गोद में खेलनेवाले मानव हैं। आशा है, उनके चरित्र-बल और जीवन की कुशलता से निराश हृदय में आशा का संचार होगा।

मैं अपने प्रयत्न में चाहे भले ही असफल हुआ हूँ, किन्तु आशा है जिस प्रेरणा को लेकर मैंने लेखनी उठाई है, उसका ध्यान रखते हुए पाठकगण इसे अवश्य अपनायेंगे।

रामसागर मिश्र

: १ :

शान्ति अधिक दिन दाम्पत्य-सुख न भोग सकी। २५ वर्ष की आयु मे ही गिरीश तथा श्याम को गोदी मे पाकर वह पति-सुख से वञ्चित हो गई।

शान्ति का जन्म काशी के सुप्रसिद्ध कर्मकाडी विद्वान् पडित विष्णुदेव के यहाँ हुआ था। पडित जी का घराना पुश्तैनी प्रतिष्ठित धनी व्यक्तियो मे गिना जाता था, और आज भी वृद्ध-परम्परा के अनुकूल ही है। ऐसी दशा मे उसका लालन-पालन ऐश्वर्यमय वातावरण मे हुआ था। माता-पिता धार्मिक, भारतीय सस्कृति के उपासक थे। अस्तु उसकी पढाई धार्मिक रीति से होना स्वाभाविक था। मिडिल तक स्कूली शिक्षा एव साधारण सस्कृत का ज्ञान उसे घर पर ही कराया गया था। माँ-बाप की अकेली लाडली बेटी होने पर भी गृहस्थ-जीवन से सबधित प्रत्येक कार्य करना उसे भली भाँति आता था।

"आप सोचा दूर हे, प्रभु सोचा तत्काल"—पडित विष्णुदेव सोचते थे—रूप, गुण तथा ऐश्वर्य-सपन्न श्रेष्ठ कुल में उत्पन्न लडके के साथ अपनी बेटी का विवाह करूँगा। किन्तु भाग्य ने पलटा खाया—पूर्व जन्म का सस्कार उदय हुआ। वह रूप-गुण-सपन्न युवक से, किन्तु लक्ष्मी-विहीन कुलीन परिवार मे ब्याही गई। पतिदेव बडे ही सरल, सुशील एव मृदुभाषी थे। प्रसन्नता तो सदा उनके मुख पर खेलती रहती थी। दुखित व्यक्तियो की सतप्त आत्माएँ उनके पास पहुचते ही आनदित हो जाती थी—पडोसी उन्हें 'सकटमोचन' के नाम से पुकारा करते थे। जैसे ही लोगो ने नाम रखा था, उसी के अनुकूल

भगवान् ने शरीर, बल, बुद्धि तथा भगवद्भक्ति आदि देने मे भी कजूसी न की थी। उनका छोटा-सा कद, गौर वर्ण, लम्बी भुजाएँ, छरहरा मुख बडा ही मोहक था। उनके शरीर की दृढता देखते ही सहसा हनुमान जी का स्मरण हो आता था। केवल देवत्व-मनुष्यत्व का ही भेद दिखाई देता था।

पडित जी का विद्वान्-मडली मे काफी सम्मान था। काशी नगरी अपनी भारतीय सस्कृति की प्रतीक है। इस नगरी की विशेषता ससार से न्यारी है। यहाँ की सपूर्ण वस्तुएँ अपना कुछ विशिष्ट स्थान रखती है—विद्वान्-गुण्डे, दानी-कगले, त्यागी-लोभी, परोपकारी-अपकारी तथा पुण्य-पाप आदि सपूर्ण वस्तुओ की अपनी-अपनी विशेषताएँ अलग-अलग है। भूल-भुलैये के लिए तो काशी प्रसिद्ध ही है। यहाँ की गलियो में प्रवेश करने का द्वार घर के दरवाजो के ही समान है, इसलिए यात्रियो को भूलने मे थोडी भी हिचकिचाहट नही होती। इसका पूर्ण अनुभव उसी को हो सकता है, जिसने एक बार भूलकर काशी की गलियों का अनुभव किया हो। गलियो मे प्रवेश करने के पूर्व ऐसा लगता है कि टूटे-फूटे, जैसे-तैसे मकान बने होगे, किन्तु उन सँकरी गलियो के बीच भव्य-भवन नयनों को लुभा लेते है।

काशी के पडित-समाज का आज के वैज्ञानिक युग मे भी अपने वेश-भूषा का विचित्र ही ढंग है—पंडिताऊ धोती, दुपट्टा तथा एक अँगोछी शान-शौकत के लिए पर्याप्त है। कठ मे रुद्राक्षी माला, हाथ मे कमडल तथा ललाट पर भस्म आज भी महर्षियो का स्मरण कराती है। पडितो की बात तो दूर रही, धनी-मानी व्यक्ति भी बिलकुल पडिताऊ वेश मे गगास्नान, विश्वनाथ-दर्शन करने आते-जाते देखे जाते है। उत्सवो एव सभाओ में बृन्दावनी टोपी का उपयोग करते है। जिस प्रकार यह नगरी विद्या, भारतीय वेश-भूषा तथा धर्म-सबधी विशेषताएँ रखती है उसी भाँति यहाँ की वेश्याएँ भी अपना गौरव समस्त भारत से अलग ही रखती है। अपना जीवन केवल भोग-लिप्सा मे ही समाप्त नही करती; बल्कि

साथ ही कलाकारो को वह शक्ति प्रदान करती है, जिसका सामना करना ससार की शक्ति के बाहर है। आज भी काशी के कलाकारो की भूरि-भूरि प्रशसा होती है। इन्ही सम्पूर्ण विशेषताओ से 'काशी त्रिलोक मे न्यारी' है।

काशी नगरी के विद्वानो को अपनी भारतीय सस्कृति पर अभिमान है। भारत मे ही नही, समस्त देशो मे भारतीय शास्त्रो मे किसी प्रकार का सदेह उपस्थित हो जाने पर इसी नगरी के विद्वानो को निर्णय करने का अधिकार प्राप्त है। इन निर्णायको मे पडित 'सकटमोचन' का स्थान प्रमुख था। इन्होने वेद, व्याकरण, न्याय, वेदान्त, दर्शन, मीमासा तथा ज्योतिष आदि विषयो का यथावत् अध्ययन कर पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया था, किन्तु थे प्रमाण-पत्र विहीन।

पडित जी ने नौकरी करने के लिए शास्त्रो का अध्ययन नही किया था—आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त कर देश को शिक्षित बनाने के लिए उन्होने शास्त्रो का अध्ययन किया था।

पडित जी व्यवसायी न थे। अपनी प्राचीन परम्परानुकूल अध्ययन-अध्यापन मे दिन व्यतीत करते थे। साहू छगनलाल की पाठशाला मे पढाते थे। तीस रुपये मासिक वेतन मिलता था, किन्तु स्वच्छन्द थे। उन्हे उपस्थिति-समय तथा अध्यापन-घटे नही बताये गये थे। अपना कर्तव्य समझकर स्नान-पूजा के बाद जो समय बचा पाते वह अध्यापन मे ही लगाते थे। वे केवल भाषण देकर कुछ मिनटो मे ही अपना जी बचाकर भागना नही चाहते थे—जब तक विद्यार्थियो को पूर्ण ज्ञान नही हो जाता था, पढाई नही छोडते थे।

पडित जी के पढाने का अपना ढग था वे। छात्रो के अधकार को ज्ञान-ज्योति जगाकर दूर करते थे। उन्हे ससार की अन्य चीजो की चिन्ता न रहती थी—केवल छात्रो को पढाना ही अपना महत्त्वपूर्ण धर्म समझते थे।

विद्यार्थीगण पडित जी की शैली पर मुग्ध थे। अन्य पाठशालाओ

से भी छात्र पढने आया करते थे। कोठरी मे तिल रखने की जगह नहीं रहती थी।

विद्यार्थियो के अलावा बहुत से नवीन अध्यापक पडित जी की सहायता से अपने विषय का प्रतिपादन करते थे। छात्रो से बचा हुआ समय इन्ही लोगो के ज्ञान-वर्धन मे समाप्त होता था। इन्ही सपूर्ण विशेषताओ के कारण पडित जी एक साधारण व्यक्ति से लेकर बडे लोगो तक के पूज्य थे। आपने अपने सरल व्यवहार से जन-समूह मे अपना विशेष स्थान बना लिया था।

: २ :

शान्ति अपने सौन्दर्य मे अद्वितीय थी। उसकी तुलना ससार की किसी रमणी से नही की जा सकती थी। उसके दर्शन से लोगो को भ्रम हो जाता था कि कही देवराज के यहाँ से रूठकर कोई अप्सरा तो इस मृत्युलोक का सुख भोगने नही चली आई है। धनी-परिवार मे जन्म पाकर सम्पूर्ण ऐश्वर्य-सुख प्राप्त होने पर भी यदि सुन्दरता न मिली, तो अन्यत्र कैसे सभव हो सकती है? उसकी रचना मे विधाता ने खूब परिश्रम किया था, और इसे अनुकूल सफलता भी मिली थी, किन्तु सौन्दर्य-रचना के प्रलोभन मे पडकर भाग्य-रेखा अकित करने मे उन्होने भूल कर दी जिसका परिणाम आज शान्ति को भुगतना पड रहा है।

वर्तमान समय मे अपने को सभ्यता की चरम सीमा पर विद्यमान कहने वाले समाज के निर्माताओ मे जो दाम्पत्य-जीवन का ढकोसला देखा जाता है, वह शान्ति के जीवन मे फटकने नही पाया था। वह नित्यप्रति अपने पतिदेव को अपनी भारतीय सभ्यतानुकूल प्रसन्न रखने के लिए सचेत रहा करती थी। वह वर्तमान सभ्यता मे अशिक्षित, किन्तु भारतीय सभ्यता की साक्षात् देवी थी। पतिदेव के समक्ष कभी किन्ही कष्टो का आभास नही होने देना चाहती थी। सदा प्रसन्न चित्त से परिचर्या करती थी। पति-पत्नी दोनो मे प्रेम-बधन था, भारतीय दाम्पत्य-जीवन का

आदर्श था, साथ ही अपनत्व का दोनो मे अभिमान भी । पतिदेव के अल्प वेतन से ही शान्ति अपने परिवार का भरण-पोषण तथा अतिथियो का सत्कार उचित रीति से बडी कुशलतापूर्वक करती थी ।

पति-पत्नी दोनो का जीवन-निर्वाह बडे ही सुख से होता था, किन्तु ईश्वर से यह न देखा गया । किंचित् बीमारी मे ही पडित जी शान्ति को, यह आशा न थी, कि पतिदेव नन्हे बच्चो-सहित उसे असहाय तथा अभागिन बनाकर इस ससार की यातनाएँ भोगने के लिए छोड स्वय गो-लोकवासी हो जायँगे । पर विधि के विधान को रोकने की किसमे सामर्थ्य है ? स्वय विधाता ही जब अपने बनाये हुए विधान मे किंचित्मात्र परिवर्तन एव परिवर्द्धन नही कर सकते, तो अन्य की बात ही क्या ? शान्ति ब्रह्मा के इस विधान पर कर ही क्या सकती थी ? अपने कर्मों के परिणाम से खीझकर दूसरे पर दोषारोपण करना भी एक अपराध है । शान्ति विधाता को दोषी ठहराने मे भी हिचकिचा रही थी वह मूक अन्तर्ज्वाला मे अपने को भस्म कर देना चाहती थी, परन्तु इसमे भी बच्चो के भरण-पोषण की समस्या बाधक हो जाती थी ।

पतिदेव को इस ससार से उठे दो वर्ष बीत चुके, परन्तु आज भी उनके प्रयाण के चित्र शान्ति के समक्ष बिलकुल नवीन है । वह सोचती थी, "उन्होने केवल दो दिन की अस्वस्थता मे ही ससार-यात्रा समाप्त की थी । अतिम क्षण के दो घटे पूर्व तक वेदान्त-सूत्रो के भाष्य पढाते थे । गुरु दक्षिणा मे छात्रो ने उनका 'शव' ही मणिकर्णिका घाट (काशी) पहुँचाया था । उनकी आत्मा की पवित्रता के सबध मे सन्देह करना भूल है । सैकडो विद्यार्थियो ने दाह-सस्कार मे भाग लिया था । शरीर निर्जीव होने पर भी मुख पर मद मुस्कान थी । श्मशान मे चार घटे तक शरीर मे पुन प्राण-सचार होने की आशा से शिष्यो ने प्रतीक्षा की । पडित जी ने अपने जीवन-काल मे भरसक किसी को निराश नही होने दिया, किन्तु उस दिन विवशता थी । शिष्यो को हताश हो अपने पूज्य गुरुदेव के पार्थिव शरीर से वचित होना पडा ।"

शिष्य-मडली को अपने गुरुदेव के असामयिक निधन पर बडा दुख था। सद्गुरु बडे भाग्य से प्राप्त होते है। शिष्यो ने सोचा था, शास्त्रो का यथावत् अध्ययन कर दिग्विजयी बनेगे, किन्तु विचार पूर्ण न हो सका। शिष्य-वर्ग कई दिन तक उनके घर आना-जाना और शान्ति को कुछ सान्त्वना दे जाता था।

ज्यो-ज्यो समय बीतता गया, सभी ओर से लोगो के हाथ खिचते गये। फलत वर्षो होने तक शान्ति इस ससार मे रहते हुए भी सबसे नाता तोड बैठी। अब उसे सान्त्वना देने की बात तो दूर रही, कोई मिलने तक न आता। आते-जाते जब किसी से अचानक भेट हो जाती तो सीधे बात भी नही करता,— बल्कि जल्दी जी छुडाकर भागना चाहता। शान्ति को इन कटु व्यवहारो से और भी कष्ट होता था। साथ ही वह सोचती थी—ससार के प्राणी कितने स्वार्थी होते है ? आज मुझे असहाय देखकर लोग आँख फेर लेते है। किन्तु यदि, पैसे भर भी स्वार्थ होता तो जी हुजूरी करने मे न चूकते। हे भगवान् ! तुम्हारे इस ससार का कैसा विचित्र ढग ?

शान्ति के लिए पतिदेव का निधन-समय जितना ही बीतता जाता था, वह कष्टो के भार से उतना ही नवीन मालूम होता था। चारो ओर दुख का ही विस्तृत जाल फैला हुआ था। कोई क्षणमात्र के लिए सहायक न था। निस्सहाय वह करुण-क्रन्दन मे ही सारा जीवन बिताने को बाध्य हो रही थी।

मानव-जीवन जब दुखो के पहाड से दब जाता है, तब अपने सहयोगी व्यक्तियो एव सहवर्गियो की याद करता है और उन्ही याददाश्तो से शक्ति सचित कर आगे की ओर आपत्तियो का सामना करने के लिए बढता है। उसके हृदय मे विजयी होने का दृढ विश्वास हो जाता है और अपने कर्तव्य मे सफल भी होता है। ऐसी दशा मे शान्ति को भी अपने पतिदेव या अन्य सहयोगियो का स्मरण हो आना स्वाभाविक था, फिर स्त्री-जीवन मे पति का स्मरण, वह भी वैधव्य की

अवस्था मे, एक क्षण के लिए भी नही भूल सकता। पति-वियोग तथा अन्य सासारिक कष्टो से वह जर्जर हो चुकी थी।

शान्ति के घर मे पडित जी के बाद दरिद्रनारायण विराजमान होगये। उनकी कृपा हो तो कैसे कोई कष्टो से मुक्ति पा सकता है ? भाग्यवान् पुरुषो का भार दरिद्रदेव ही ग्रहण करते है। इस नियम के पालन मे थोडी भी भूल नही हुई थी। वह दिन-प्रतिदिन उपेक्षित होती जा रही थी।

शान्ति को अपने हृदय की सहन-शक्ति पर दुःख के साथ आश्चर्य भी हो रहा था। वह सोच रही थी—विधाता ने मेरे हृदय को कितना कठोर बनाया है जो इस कठिन बज्रपात से भी विदीर्ण नही होता, और न पति-वियोग की धधकती ज्वाला से ही जल सका। इतना दुस्साहस करने की सामर्थ्य कहाँ से पाई ? पतिदेव ! मैंने कौन-सी अवज्ञा की थी, जो मुझे दर-दर ठोकरे खाने के लिए छोड गये ? आप तो ससार के सब तरह के पापो से मुक्ति पाने के लिए उपाय बतलाते थे, क्या मेरे प्रायश्चित् का कोई उपाय नही था ?

× × × ×

शान्ति के पतिदेव की आय वर्तमान व्यय के लिए भी पर्याप्त न थी। शान्ति बडी कुशलता से कार्य-सचालन करती थी, किन्तु बचत करना हर दशा मे असम्भव था। दो वर्ष की इस अवधि मे ही सम्पूर्ण आभूषण बिक गए थे, बर्तन बिक गए और ओढने-बिछाने के वस्त्र भी बिक गए। भविष्य के लिए कोई अवलम्ब न था।

शान्ति के सामने दो बच्चो के पालन-पोषण की कठिन समस्या थी। उसने किसी पुस्तक में माँ-बाप के कर्तव्य के सम्बन्ध मे पढा था—"माँ-बाप का परम कर्तव्य होता है कि वे अपने बच्चों का लालन-पालन कर उन्हें योग्य बनाये। यदि माँ-बाप अपने कर्तव्य में असफल होते है, तो वे केवल अपने बच्चो के प्रति ही नही, अपितु अपने देश के साथ भी घोर अन्याय करते है। यही कारण था कि हमारी प्राचीन सभ्यता मे

सर्वसाधारण से लेकर जगत् विख्यात नृपति तक भी अपने बच्चो को त्रिकालज्ञ महर्षियो के आश्रम मे छोडकर अपने उत्तरदायित्व को सफल बनाते थे। वे उन्हे महलो मे रखकर लालन-पालन के साथ ज्ञान-वृद्धि नही कर सकते थे। इन्ही महर्षियो के आश्रमो से वे प्रकाण्ड विद्वान् होकर निकलते थे, जिनका नाम आज भगवान् भास्कर के समान देदीप्यमान है और भविष्य मे भी ऐसा ही रहेगा। साथ ही भारत का एक-एक बच्चा उन्ही महापुरुषो के नाम पर अभिमान करता है। किन्तु वर्तमान युग के माँ-बाप अपने इस पुनीत कर्तव्य की ओर कम ध्यान देते है, यदि प्रयत्न भी करते है तो असस्कृत।"

× × ×

शान्ति पर माँ-बाप दोनो का भार था। यदि अपना ही भार होता तो वह उचित रीति से वहन कर सकती थी, किन्तु एक रमणी को भार के वहन करने मे पथ-विचलित होने की आशका रहती है, और स्वाभाविक भी है।

शान्ति को अपने कर्तव्य मे सफल होने की आशा न थी, सफलता के मार्ग-दर्शक समाप्त हो चुके थे। उसे अपने पतिदेव की विद्वत्ता पर पूर्ण अभिमान था। और बच्चो के लिए भी ऐसा ही सोचती थी। पर अभागे किसी कार्य मे सफल नही होते। इस चिंता मे शान्ति को एक क्षण भी चैन नही पडता था। बच्चो को असहाय तथा मूर्ख देखने की उसने स्वप्न मे भी कल्पना न की थी, किन्तु भाग्य की विडम्बना उसके स्वप्नो को कब साकार देख सकती थी ?

: ३ :

गिरीश आठ वर्ष समाप्त कर नवे मे प्रवेश कर चुका था। छोटा भाई श्याम अभी पाँचवे वर्ष को भी पूर्ण नही कर पाया था। दोनो बडे प्रेम से खेलते-कूदते और मौज उडाते थे उन्हे किसी सासारिक वस्तु की चिन्ता न थी।

गिरीश रूपवान, होनहार लडका था । अपने पिता की ही तरह सरल, सहज, मृदु-भाषी तथा योग्यतानुकूल दूसरो को सहयोग देने वाला था। अपने सहवर्गियो से हृदय खोल कर मिलता था । उसे मित्रो की सख्या बढाने मे किंचित् देरी न लगती थी । एक बार मिलने पर गिरीश के सरल स्वभाव के कारण छोटा-बड़ा कोई भी व्यक्ति अलग नही हो सकता था। वह बडा ही मिलनसार था। पडोसियो को उसके स्वभाव पर बडा आश्चर्य होता था। सभी उसे देख कर 'होनहार बिरवानके होत चीकने पात' उक्ति को बडे गर्व से दुहराते थे।

वह एक मास से स्कूल जाने लगा है। बगल मे ही केशरबानी वैश्य विद्यालय है जिसमे अग्रेजी कक्षा ८ तक की शिक्षा दी जाती है। गिरीश ने कुछ पहले ही अपनी माता जी से अक्षर-ज्ञान प्राप्त करना आरम्भ कर दिया था, जब वह विद्यालय नही जाता था। अगल-बगल के विद्यालय जानेवाले लडको से उसका मेल था। विद्यालय की छुट्टी होने पर अपने सहवर्गियो से प्रतिदिन की पढाई का सम्पूर्ण समाचार प्राप्त कर उनके साथ स्वय अभ्यास कर लेता था। इसलिए उसे कक्षा दो तक की योग्यता विद्यालय मे प्रवेश करने के पूर्व ही हो चुकी थी। उसने विद्यालय की कक्षा तीन मे प्रवेश पाया। प्रखर बुद्धि के कारण एक माह के अन्दर ही उसने अध्यापको के हृदय मे स्थान पा लिया। वह प्रतिदिन नियत समय पर सहपाठियो के साथ विद्यालय जाता था।

× × • ×

गिरीश की ही कक्षा मे मोहन भी पढता था। वह नगर के सुप्रसिद्ध धनी-मानी रायसाहब भोलानाथ का लडका है। स्कूल जाने के समय बडा ही उपद्रव करता है, कभी भी सीधे मन नही जाता। पहुँचाने वाले नौकरो की दुर्दशा है। आये दिन नये-नये नौकर स्कूल पहुचाने के लिए ही रखने पडते हैं। घर मे कई एक अध्यापक समय-समय पर अपनी कला-कौशल से पढाया करते है। किन्तु मोहन ज्यो-का-त्यो मनहूस बना बैठा रहता है। लाख प्रयत्न करने पर भी एक शब्द नही बोलता।

बडे योग्य एव अनुभवी शिक्षक अपनी सम्पूर्ण मनोवैज्ञानिक शैलियों का प्रयोग कर चुके; पर सफ़लता से कोसो दूर रहे ।

'मोहन के लिए छः घण्टे विद्यालय मे बैठना कठोर कारावास था। रायसाहब ने कई बार विद्यालय मे आकर अपने लडके की परिस्थिति का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। अध्यापक महोदय अपने कर्तव्य में असफल रहे। विद्यालय के सम्पूर्ण अध्यापको ने अपना-अपना कला-कौशल दिखलाया, पर कसौटी मे खरे न उतरे। प्रधानाध्यापक महोदय को तीस वर्ष के अध्यापन-काल में इस तरह का कोई छात्र नही मिला था। यह प्रथम अवसर था, जबकि उनके सम्पूर्ण अस्त्र शक्ति-विहीन प्रमाणित हुए ।

प्रधानाध्यापक महोदय को अपनी शिक्षण-कला पर पूर्ण अभिमान था। वह मूर्ख-से-मूर्ख व्यक्ति को पढाने की क्षमता रखते थे। वह जीवन मे केवल रायसाहब के ही लडके से हारे। इसकी उन्हे बडी चिन्ता थी। इसके अलावा रायसाहब द्वारा उन्हे पाँच हजार रुपये की वार्षिक आय भी मिलती थी। विद्यालय को सबसे अधिक तथा उचित समय मे आपके यहाँ से ही सहायता पहुँचती थी। साथ ही पिछले दो वर्षो से वे विद्यालय के सभापति थे, और उन्ही का लडका निरक्षर रहे, यह बहुत ही अनुचित था।

रायसाहब शिक्षा के युग मे मोहन को किसी दशा मे मूर्ख नही रहने देना चाहते थे। ऊँची-से-ऊँची शिक्षा दिलाने का पूर्ण साधन ईश्वर ने उन्हे प्रदान किया था। किसी से कुछ माँगने की आवश्यकता न थी। एक साधारण आदमी भी अपने लडके को पढाने मे कोई कसर नही छोडता, तो भला रायसाहब ही कैसे अपने लडके को इस सुविधा से वचित रख सकते थे ।

रायसाहब के सब प्रयत्न विफल हुए। वे सोचते थे—विद्वान् होकर दरिद्र होना अच्छा, किन्तु धनवान् होकर मूर्ख होना अच्छा नही। रह रहकर उनका चित्त खिन्न हो जाता था। उन्होने मोहन की शिक्षा के

लिए कोई भी प्रयत्न उठा नही रखा । पडितो से पूछा, ग्रहो की शान्ति कराई तथा तरह-तरह की दवाइयो का प्रयोग किया । लाखो रुपये पानी की तरह बह गये । कोई लाभ न हुआ ।

मोहन पढने के ही समय पत्थर बन जाता था, वैसे बडा प्रतिभाशाली व बुद्धिमान था। स्मरण-शक्ति खूब प्रखर थी, किन्तु पढाई तथा अध्यापक का नाम लेते ही सम्पूर्ण बुद्धिमत्ता तथा प्रतिभा छाया-चित्र के समान अदृश्य हो जाती थी । बडी ही विलक्षण बात थी ।

मोहन अपनी कक्षा मे बैठा हुआ नागपचमी का उत्सव मनाने की बात सोच रहा था और उधर अध्यापक जी सवाल पढा रहे थे ।

"एक पैसे में साढे तीन आम मिलते है तो डेढ आने मे कितने आम मिलेगे ? सोहनलाल ?··· महावीर ?···सुखराम ? ··मोहन ?···"

सभी लडके नाम लेते ही उठ खडे हुए, किन्तु मोहन न उठा । अध्यापक महोदय ने दूसरी आवाज लगाई —"मोहन ?"

चौककर मोहन "जी मास्टर साहब !"

"सो रहे हो ?"

"जी, नही ।"

"जी, नही । सवाल का उत्तर देने को क्यो नही खडे हुए ?"

मोहन के लिए सवाल का उत्तर देना बडा कठिन था । पाँच वर्ष लगातार पढने के बाद रायसाहब के प्रभाव से कक्षा तीन में प्रवेश मिला था, योग्यता से नही । फिर भी नागपचमी के उत्सव की काल्पनिक तैयारी मे मोहन सवाल भी न सुन सका और उससे मास्टर साहब से दुबारा पूछना भी असभव था। मास्टर साहब ने स्वत. सवाल को दुहराया ।

"एक पैसे मे साढे तीन आम मिलते है, तो डेढ आने मे कितने आम मिलेगे ?"

सभी लडके मौन, केवल गिरीश उत्तर देने के लिए तैयार था ।

'गिरीश, रुको । इस सवाल का उत्तर और कौन दे सकता है ?"

सभी लडके एक-दूसरे की ओर देखने लगे; किन्तु कोई लडका उत्तर देने के लिए नही खडा हुआ। गिरीश पूर्ववत प्रस्तुत रहा, और मास्टर साहब के आदेश पर उत्तर दिया :

"मास्टर साहब, इक्कीस आम मिलेंगे।"

"ठीक! समझे! एक पैसे मे साढे तीन आम मिलते है, तो डेढ आने मै इक्कीस आम मिलेगे। कल से यदि कोई सवालो का जवाब न देगा तो उसकी (बेत को हिलाते हुए) इसी बेत द्वारा मरम्मत की जायगी। सुन रहे हो, मोहन ?"

मोहन चुपचाप सुनता हुआ कक्षा के बाहर चला गया। गिरीश भी उसके साथ ही निकला। दोनो ने एक-दूसरे की ओर निगाहे गडा कर देखा। नेत्रो के वार्तालाप से ही आत्माएँ सम्बद्ध हो गई। वे दोनो परम मित्र बन गये। गिरीश का निवास स्थान जानने की अभिलाषा से मोहन ने पूछा

"आपका घर कहाँ पर है ?"

गिरीश (मुस्करा कर) बोला "मेरा ?" फिर अगुष्ठ निर्देश करते हुए कहा, "यही स्कूल की बगल मे।"

"अच्छा, तब तो आपके घर मे ही स्कूल लगता है।"

"क्यो आपका दूर है क्या ?"

"नही, यही ठठेरी बाजार के नुक्कड पर है।"

"अच्छा! आज मास्टर साहब ने जब सवाल पूछा और आपका नाम लिया, तो खड़े क्यो नही हुए ?"

उसास लेते हुए—भाई साहब, मेरी पढने की इच्छा नही होती। मेरे पिता जी जबरन पढाते है। मै यहाँ से लौटकर नही पहुँच पाता और मास्टर साहब आते रहते है। एक के बाद दूसरे आ जाते है। इस तरह चार मास्टर घर पर पढाते है। कोई कुछ पढाता है, कोई कुछ। पढाई से हमारा जी ऊब गया है। नौकर स्कूल पहुँचा जाते है, मैं भी आ बैठता हूँ। स्कूल की भी पढाई हमारी समझ मे नही आती, खासकर सवाल। फिर आज

तो नागपचमी का उत्सव मनाने की सोच रहा था, उसी धुन में सवाल नही सुना ।"

"मोहन जी, न पढना ठीक नही है । घर मे बहुत मास्टरों के बजाय एक ही मास्टर से पढिए । साथ ही मास्टर साहब के सवालो का उत्तर देना सीखिए । स्कूल मे मास्टर साहब की आवाज पर तुरंत खडे हो जाइए, छिपने की कोशिश मत कीजिए । देखिएगा चार-छ दिन मे ही सवालो का उत्तर बनने लगेगा और पढने की इच्छा भी होगी ।"

गिरीश की बाते मोहन को अच्छी लग रही थी । गिरीश ने जो तरीका बतलाया, उसे करने के लिए वह दृढ प्रतिज्ञ होगया । मोहन के लिए पढाई के प्रति उदासीनता के बाद उत्साहित होने का आज प्रथम दिन था। वह गिरीश की मत्रणा से प्रभावित हो चुका था । अब उसे सरस्वती देवी के वरदान से वचित रहने की आशका न थी । दोनो की बातें खतम नही हो पाई थी कि मोहन को लेने के लिए बद्री नौकर आ गया । मोहन ने देखकर कहा :

"क्यो बद्री, हमारा नौकर कहाँ गया ?"

"दूसरे काम से गयल हउअइ, हमँ भेजले हउअइ ।"

'अच्छा, चलता हूँ ।" गिरीश से नमस्ते कर मोहन नौकर के साथ चल दिया, और गिरीश वही रह गया ।

: ४ :

शान्ति गिरीश के लौटने पर स्कूल का समाचार नित्यप्रति पूछा करती थी । गिरीश आते ही स्कूल की पढाई, खेल-कूद, आदि सारी बातें बडी प्रसन्नता से बतला देता था । अच्छे कामों के लिए प्रोत्साहन तथा बुरे कामो से सावधान करना शान्ति न भूलती थी । कभी-कभी जिद कर श्याम भी गिरीश के साथ स्कूल चला जाता था ।

श्याम स्कूल मे जाकर बडे कौतूहल से छात्रो को देखता, और न जाने क्या-क्या सोचता गिरीश से लिपटा रहता, एक क्षण भी अलग न

होता । वह गिरीश के लिये एक बला बन जाता था, इसलिये वह उसे साथ लेजाना नही चाहता था । श्याम जिस दिन साथ चला जाता उस दिन गिरीश खेलो मे भाग नही लेपाता था ।

श्याम सुबह से ही गिरीश के साथ स्कूल जाने के लिए रो रहा था । शान्ति ने डराया, धमकाया—बहुत कुछ-प्रयत्न किया, पर राजी न हुआ । गिरीश जी बचा कर भाग जाना चाहता था । दूसरे दिन नाग-पचमी उत्सव मनाने के लिए अपने साथियो से परामर्श करना चाहता था । किन्तु श्याम भी छोडने वाला न था । खाना बना न था । शाम की शेष बची एक रोटी रखी थी, दोनो ने खाया और स्कूल हाजिर हुए ।

गिरीश के साथ एक-दो बार मास्टर साहब ने श्याम को देखा था, किन्तु कोई आपत्ति नही की थी । गिरीश को कोई भय भी न था । कक्षा में अन्य छात्रो की तरह श्याम भी बैठा रहता । वह रह-रहकर लम्बी सासे लेकर इधर-उधर देखता था । कभी भाई के पढने मे बाधा पहुँचाता और कभी दूसरे लडको से शैतानी करता इन सब बातोसे जब थक जाता तो तो सो जाता था । स्कूल का समय समाप्त होने पर गिरीश श्याम को जगाकर घर लाता था ।

स्कूल पहुँचने मे आज गिरीश को देर हो गई थी, पर मास्टर साहब से पूर्व ही वह कक्षा मे पहुँच चुका था । वदना मास्टर साहब के आने पर ही होती थी । कुछ मिनटो में वदना आरभ होकर समाप्त हो गई । लडको ने अध्ययन आरम्भ कर दिया । कुछ लड़के कक्षा के बीच मे नागपंचमी की खुशहाली की बाते कर रहे थे । श्याम को नागपचमी का कोई ज्ञान न था, वह अपनी धुन में मस्त था । कुछ कागज के टुकडो को मोड़ता, फिर खोलता; न जाने उसे क्या बनाना चाहता था । वह बार-बार उसके बनाने में तन्मय था ।

मोहन प्रायः नित्य देर से पहुँचता था, किन्तु आज अधिक देरी हो गई थी । मास्टर साहब ने पढ़ाई आरम्भ कर दी थी, और उसमें अन्दर प्रवेश करने का साहस न था । वह गिरीश से बाते करने के लिए

कक्षा में जाना चाहता था । धीरे से कमरे के द्वार तक गया, गिरीश को देखा पर आगे न बढ सका । चुपके से लौट आना चाहता था, पर मास्टर साहब की नजर उस पर पड ही गई । अब भागना कठिन था । मोहन ने सोचा था—गिरीश को यह मालूम हो जाय कि मैं भी आया हूँ—छुट्टी होने पर बाते करूँगा । पर ऐसा न हुआ । मास्टर साहब ने मोहन को डॉटते हुए कहा

"मोहन, बाहर से तमाशा देख रहे हो ?"

"नही, मास्टर साहब, आज देर हो गई ।"

"क्यो देर हो गई ?"

"आज मेरे मामा जी आ गये, इसलिए ।"

"हाँ, तो ऐसा कहो । मामा जी की मिठाई खाने में देर हुई । बाद मे भी तो मिल सकती थी मिठाई । मामा जी मिठाई लाकर वापस नही लेजाते । चलो बैठो, घटे भर से पढाई हो रही है ।"

मोहन तुरत दौडकर गिरीश की बगल मे बैठ गया और श्याम को दूर कर दिया । श्याम झगडने लगा, वह गिरीश से थोड़ी देर के लिए भी दूर नही हो सकता था । फिर मोहन उसके लिए बिलकुल अपरिचित था । गिरीश ने श्याम को दूसरी ओर बैठा लिया । अगल-बगल मोहन-श्याम तथा बीच मे गिरीश । मास्टर साहब सवाल पढ़ा चुके थे । अब जबानी सवाल की बारी थी, मास्टर साहब ने पूछा :

"मोहन एक आँख से दस पेडे देखता है, तो दोनों आँखो से कितने पेडे देखेगा ? सोहनलाल !···धर्मपाल !···"

सभी लडको के मुख पर क्षण भर के लिए मद मुस्कान दौड़ गई । सोहनलाल खडा होकर चुप रहा, और धर्मपाल ने अपनी एक आँख बन्द करके देखा उत्तर देने के लिए खडा हुआ और बोला—

"मास्टर साहब, बीस पेड़े देखेगा ।"

"हूँ··· " मास्टर ने सिर हिलाते हुए कहा, "मोहन, तुम तो पेड़े खाकर ही आये हो" तुम बताओ ।"

मास्टर साहब के प्रश्न पर मोहन मुस्कराता हुआ खडा हुआ और बोला

"मास्टर साहब. अभी तक हमने एक आँख से इस प्रकार देखा ही नही।"

सभी लडके ठहाका मार कर हँस पडे। मोहन चुपचाप खडा रहा। मोहन पिछले दिन की गिरीश की मत्रणा पर सोच रहा था ··

मास्टर साहब की मुख-मुद्रा परिवर्तित हो गई। आवेग मे आकर कहा —

"अच्छा तो मैं ही देखकर बताऊँ ?"

सभी लडके सन्न हो गये। बेत की मार का आप-ही-आप अनुभव करने लगे। गिरीश ने साहसपूर्वक खडे होकर कहा...

"मास्टर साहब, मै बतलाऊँ ?"

"ठहरो, अब मै ही बतलाऊँगा !"

एक दिन पहले से ही मास्टर साहब ने सवाल का उत्तर न बनने पर मारने की सूचना दे दी थी। उससे मुक्ति पाना असम्भव था। सवाल का उत्तर देने में सोहनलाल से ही मार शुरू होने वाली थी, सभी को प्रसाद में बेत मिलेगी या कुछ को, यह अज्ञात था। मास्टर साहब ने सोहनलाल की ओर इशारा करते हुए कहा

"चलो," तेजी से बेत हिल रहा था।

सोहनलाल का हृदय बेत के साथ ही हिल उठा। न जाने कितने बेत पडेगे ! हाथ बढाया, सट से बेत लगा—बारी-बारी से दोनो हाथो में एक-एक बेत लगा। मुट्ठी बाँधकर हाथ छिपा लिया और रो पडा। मास्टर साहब ने दयाकर छोड दिया। अब धर्मपाल की बारी आई। इसे बेतो की परवाह नही थी। दस-पाँच बेत प्रतिदिन लगते ही थे। मास्टर साहब ने इसकी आखो मे आसू आते कभी न देखे थे, वह स्वय मारते-मारते हार खा जाते थे। दो-दो बेत हाथो मे और एक बेत पीठ पर मार कर पीछे हटा दिया।

मोहन भी बेतो का स्वाद पाने के लिए चला। घर मे कभी दुलार के भी चाँटे न मिले थे, किन्तु आज बेतो का सामना करना था। उसका हृदय काँप रहा था। मोहन को उठते समय गिरीश ने धीरे से सवाल का उत्तर बतला दिया, किन्तु उत्तर जानते हुए भी मोहन को मार खाने से वञ्चित रहना असभव लग रहा था। मास्टर साहब ने हाथ बढाने का इशारा किया—

हाथ बढाते हुए मोहन ने कहा, "मास्टर साहब क्या उत्तर बताने पर भी मार पडेगी ?"

मास्टर मुस्कराते हुए बोले —"नही उत्तर बताने पर मार न पडेगी, बतलाओ।"

मोहन मन ही मन सवाल को दुहराकर बोला— "दोनो आँखो से दस ही पेडे देखेगा।"

"क्यो ?"

मोहन बोला—"एक आँख बद करते हुए सम्पूर्ण चीजे दिखाई पड रही है ? आँख खोल कर दोनो आँखो से भी उतना ही दिखाई देता है।

"ठीक, धर्मपाल समझ रहे हो। एक आँख से जितनी वस्तुएँ दिखाई देती है, उतनी ही दोनो आँखों से। दूनी नही।"

मोहन प्रसन्नतापूर्वक अपने स्थान मे जा बैठा। मोहन के इस उत्तर से मास्टर साहब को उतना ही आश्चर्य हुआ जितना एक मूक के बोलने पर किसी को हो सकता है।

रायसाहब के सतत् प्रयत्न करने पर तथा अनेक योग्य अध्यापको के पढाने पर भी मोहन एक शब्द नही बोलता था। तीन वर्ष स्कूल में भी आते हो गये, किन्तु उत्तर देना तो दूर रहा, हाजिरी तक नही बोलता। आज आते ही अपने देरी का कारण बताया। अन्य दिनो जब देर हो जाती थी तो नौकर आकर कक्षा मे बैठा जाते थे, फिर भी वह बैठना नही चाहता था। क्या भगवान् ने इसकी बुद्धि मे परिवर्तन कर दिया ? या कोई उत्तम साथी मिल गया ? इसका रहस्य न खुल

पाया । मास्टर साहब के हृदय मे कौतूहल हो रहा था ।

दो बज गये छुट्टी की घटी बजी । दूसरे दिन नागपचमी के उपलक्ष मे छुट्टी होने वाली थी—आज दो घटे पहले ही हो गई । लडके कक्षा से भर्र-भर्र करके निकल पडे ।

मोहन तुरत निकलकर गिरीश की प्रतीक्षा मे चौगान मे खडा था । श्याम की वजह से गिरीश सब से बाद मे निकला । एक तो श्याम छोटा, दूसरे सो गया था । उसे साथ लेकर निकलने मे देर हो जाना स्वाभाविक था । मोहन की मुख-मुद्रा शायद जीवन मे इतनी प्रसन्न कभी न थी । उसे अपने मित्र के उपदेश-पालन का अभिमान था । जिस सवाल का उत्तर कई लोगो ने नही दिया था, मार पडी थी, और मोहन की भी वही दशा होने वाली थी; उस पर गरीश की कृपा से मार खाने से बचा, साथ ही उत्तर देकर लोगो को अचम्भे मे भी डाल दिया था । गिरीश के नज़दीक पहुँचने पर मुस्कराकर बोला

"कहिए भाई साहब, ये कौन है ?"

गिरीश बोला छोटा भाई है।"

"अच्छा, तुम कितने भाई हो ?"

"बस दो ?"

"दो ही ?"

"जी, हाँ । कहिए आज के सवाल का उत्तर कैसा रहा ?"

"ह. ! ह. ! ह. ! बहुत अच्छा !"

"मैने कहा था न, तुम बहुत अध्यापको के फेर मे मत पडो एक ही से पढा करो और स्कूल मे मास्टर साहब के बुलाने पर निर्भीकता-पूर्वक सामने खडे होकर जो बने उत्तर दो । चार-छ: दिन मे आप-से-आप उत्तर बनने लगेगा और दूसरे लड़के तुम्ही से पूछेगे । किन्तु ज़रा परिश्रम करने की आवश्यकता है ।"

"मित्रवर, तुमने जैसा बताया है वैसा ही करूँगा । अभी तो हमने पिता जी से कुछ नही कहा है । आज पच्चीस तारीख हो गई, पाँच दिन

मे मास्टरो का महीना पूरा हो जायगा और मै कह दूँगा। पहली तारीख से मुक्ति मिल जायगी। अच्छा, कल नागपचमी का उत्सव है, उसके लिए तुमने क्या सोचा है ? हमने आठ आने के छोटे-बडे सभी तरह के नाग मँगवाये है। अब आगये होगे।"

"ठीक है, किन्तु मै कैसे मंगवा सकता हूँ। मेरी माँ तो मुझे पैसा ही नही देती और जरूरत भी नही पडती।"

"माँ पैसा नही देती ? तो बाबूजी से माँग लो।"

"ठीक कहते हो, लेकिन मेरे बाबूजी नही है।"

"बाबूजी नही है ? कहाँ रहते है वह ?"

"माँ कहती है कि बहुत दिन हो गये मर गये वह ।"

मोहन की आवाज रुक गई। उत्साह पर पानी फिर गया। जेब मे हाथ डाला— एक दुअन्नी निकाली, गिरीश को देते हुए कहा —

"लो, इसमे छोटे-बडे आठ नाग आयेगे।"

"नही-नही, तुम रहने दो मा से मागूगा।"

"माँ से मत माँगना, इसी से नाग ले लेना,"उसने हाथ मे दुअन्नी रखते हुए कहा

मोहन के आग्रह को गिरीश टाल न सका। दुअन्नी ले जेब मे रख ली। और नमस्ते कर दोनो अपने-अपने घर की ओर चल दिये।

: ५ :

स्कूल से गिरीश तथा श्याम के लौटने मे अभी एक घटे का विलम्ब था। शान्ति चिन्तित आँगन मे बैठी घर के गिरे हुए भाग को देख रही थी और सोचती थी—आपत्ति आने पर सबसे पहले अपने ही आदमी साथ छोड देते है ; दूसरो की तो आशा करना ही भूल है। चेतन प्राणियो की बात तो दूर है, अचेतन भी गिरी निगाहो से देख असहयोग करते ह। हाल का बना हुआ मकान अकारण ही ढह गया, शेष भी कुछ दिनो मे अपना रास्ता लेगा। पेट भरनेका कोई साधन नही, फिर मकान कैसे बनेगा ?

लडके स्कूल से लौटते होगे, उन्हे खाने को क्या दूँगी ? सुबह एकही रोटी दोनो खाकर गये है, भूखे होंगे। आते ही खाना माँगेगे। वह रो पडी, "भगवान्, मुझे क्यो जीवित रखे हो ? मेरे लिए कही जगह नही। मेरे साथ इन अबोध बालकों को क्यो कष्ट देते हो ?"

× × ×

मोहन से मिली दुअन्नी के लिए श्याम रो रहा था। रास्ते मे लोट गया, घर नही आ रहा था। दुअन्नी हाथ में लेकर चलना चाहता था। साथ ही गिरीश दुअन्नी को अपने से अलग नही होने देना चाहता था। मित्र से पाई हुई नगण्य वस्तु भी अमूल्य रत्न से बढकर होती है। श्याम की जिद के कारण गिरीश के लिए दुअन्नी अपने पास रखना कठिन हो गया। एक-दो चाटे भी श्याम को मिले पर वह एक न माना। दुअन्नी लेकर ही शान्त हुआ। गिरीश को हार खानी पडी।

श्याम जो अभी तक दुअन्नी के लिए रोता था, पाने पर कुछ खाने के लिए रोने लगा। घर न जाकर उसी जगह खाना चाहता था। सुबह दोनो ने एक ही रोटी मे बाँटकर खाया था, पेट कैसे भरता ? ३ बजे तक सन्तोष किया, यही बहुत था, किन्तु रास्ते में भोजन मिलना असम्भव था। बडी कोशिश से घर चलने के लिए राजी हुआ। अदर न पहुँचा, द्वार पर ही पुन अड गया।

× × ×

चौका बिल्कुल खाली था। उसके सत्कार के लिए घर में एक दाना भी न था। अपने को दो दिन से खाना नही मिला था, इसकी शान्ति को चिंता न थी , किन्तु बच्चों को केवल सुबह पूरा भोजन न मिला था और सायकाल के लिए भी कुछ नही था वह उसके लिए बहुत चिंतित थी। अन्न-विहीन शरीर शिथिल हो गया, था। वह सिर पर हाथ रखे नीचे दृष्टि कर अश्रुबिन्दु से भूमि सिंचन मे तन्मय थी। कोई सहारा नही दिखाई दे रहा था। सहसा गिरीश की आवाज़ आई.......

"माँ श्याम नही आता, "गिरीश ने खीझकर कहा

शान्ति चौंककर उठती हुई बोलना ही चाहती थी कि दौडकर श्याम लिपट गया। पीछे से गिरीश भी जला-भुना आया और बोला :

"माँ, श्याम मुझे बहुत परेशान करता है।"

शान्ति ने श्याम के सिरपर हाथ फेरते हुए कहा,—"न करेगा बेटे ?"

श्याम भूख के कारण ही सारा उपद्रव कर रहा था। गिरीश का बातें उसे अच्छी नही लग रही थी। माँ का अचल खीचते हुए कहा:

"माँ भूख लगी है ?"

शान्ति पहले से ही सोच रही थी—"लडके स्कूल से आते ही खाना माँगेगे, क्या तो दूँगी ?" और वही हुआ भी। श्याम ने रोते हुए पुन कहा

"भूख लगी है।" शान्ति ने उसे हृदय से लगा लिया।

श्याम चुप हो गया। माँ के रोने का कारण न जान सका। यह उसके ज्ञान से बाहर की चीज थी। गिरीश माँ को रोते देखकर बोला

"माँ क्यो रो रही हो ?"

माँ चुप रही।

गिरीश भी रोने लगा—"मा बोलती क्यो नही ?"

आँचल से गिरीश के आँसू पोछते हुए माँ ने कहा—"तुम्हारे बाबूजी की याद आ रही है बेटा" और गिरीश को सीने से लिपटा लिया। श्याम माँ की गोदी मे पुलकित हो पैर हिला रहा था। गिरीश ने माँ के मुख की ओर देखते हुए कहा

"मै तो हूँ न ! क्या करना है ? बताओ माँ !"

शान्ति हाथ फेरने के अतिरिक्त आगे कुछ न कर सकी। वह अपने रोने का सही कारण लडको के समक्ष प्रकट नही करना चाहती थी। एकाएक गिरीश की आवाज आने पर अपने आँसुओ के रोकने का प्रयास किया था, किन्तु नेत्रो की अविरल जलधारा रोकना उसके सामर्थ्य से बाहर हो गई। आँसुओ के रोकने के लिए जीवन-यापन के लिए अनिवार्य वस्तुओ की आवश्यकता होती है, जो शान्ति के लिए सहज सभव न था।

श्याम का ध्यान इन प्रपचो की ओर थोडा भी न गया, वह रोटी खाने के लिए व्याकुल था। माँ को देरी करते देख फिर अपनी आवाज दुहराते हुए रोने का उपक्रम करने लगा —

"माँ भूख लगी है। चलो हूँ...हूँ...हूँ..."

शान्ति कुछ न बोली। पत्थर बनी खडी रही। आँसुओ की झडी लगी थी। गिरीश भी माँ का साथ दे रहा था, वह सोचता था—श्याम खाना माँग रहा है, इसी से माँ रो रही है क्या ? और बोलती भी नही। ठीक से सोच नही पाया। घबडा कर बोला —

"माँ खाना नही बना है ?"

शान्ति चुप रही, गिरीश ने पुन कहा

"खाना नही बना है, तो हम लोग नही खायेंगे। तुम बोलती क्यो नही ?"

शान्ति ने भरे कठ से कहाँ—"हा बेटा, नही बना है।"

थोडी देर गिरीश भी मौन रहा। फिर श्याम से खेलने चलने के लिए कहा। श्याम मे इस समय खेलने का साहस न था, किन्तु नाग खरीदने की उत्सुकता अवश्य थी। वह मा की गोद से उतरने का प्रयत्न करते हुए दुअन्नी वाले हाथ को हिलाने लगा। साथ ही गिरीश ने भी नाग लेने की बात कह दी। श्याम माँ को छोड कर उछलने लगा। नाग लेने की खुशी मे वह सब कुछ भूल गया। दोनो भाई घर से निकल पडे।

थोडी देर शान्ति ने वही खडे रहकर लडको के सन्तोष पर विचार किया, फिर भोजन के लिए सोचने लगी। कोई चीज नजर के सामने ऐसी न थी जिससे सायकाल के भोजन का प्रबन्ध हो सके। पतिदेव की मृत्यु होने के दो वर्ष बाद घर की सपूर्ण जायदाद बिक चुकी थी। कपडे भी पहनने के अलावा और शेष न थे और इनसे कोई काम भी होने वाला न था। बर्तनो मे लोटा, थाली तथा एक पीतल का तसला और वह भी टूटे-फूटे एक कोने मे पडे थे मूल्य में कुछ अधिक के

न थे। अन्दर घर मे चारो ओर देखा पर कोई चीज़ न मिली हताशहो खिन्न चित्त आगन मे आ खडी हुई।

शान्ति सासारिक यातनाएँ खूब भोग चुकी थी। कष्टो को सहते हुए बच्चो का पालन-पोषण कर ससार की यात्रा समाप्त करना चाहती थी। उसके सामने बच्चो का पालन-पोषण करना ही कर्त्तव्य था। किन्तु भगवान् उसे अपने कर्त्तव्य मे सफल होने का कोई सहारा नही दे रहे थे, असफलता दिखाई पड रही थी। कर्त्तव्य-भ्रष्ट होकर शान्ति ससार में नही रहना चाहती थी, वह छुटकारा पाने के लिए उपाय सोचने लगी

इस समय बच्चे नही है, अकेले मे ससार से बिदा होने का बडा सुन्दर समय है। मुझे गगा की गोदी मे प्रवेश कर पति-धाम पहुँचने मे विलम्ब न करना चाहिए। वह निश्चय कर चलने के लिए उद्यत हो गई। फिर रुकी, बच्चो की याद आ रही थी,—आकर मुझे ढूढेगे—न पाने पर दुखी होगे। स्नेह से हृदय पिघल गया। पति-धाम जाने का साहस टूट गया। {माता ससार की सब वस्तुओ का त्याग कर सकती है, किन्तु वात्सल्य का नही} चिंतित खडी रही—गिरीश और श्याम नाग लेकर वापस लौटे। अपने-अपने नाग पुलकित हो माँ को दिखालाने लगे।

दूकान मे गिरीश तथा श्याम दोनो नाग लेने के लिए झगड पडे थे। दूकानदार वयोबृद्ध था, उसके सामने नित्यप्रति लडके गुड्डी लेने आते झगडते और बुड्ढे से ही निर्णय कराकर घर वापस होते थे। उस स्थान मे वृद्ध दूकानदार ही न्यायाधीश का कार्य करता था। गिरीश और श्याम के बीच भी निर्णायक बन आधे-आधे नाग दोनो को बाँट दिये थे। दो छोटे-बड़े हर एक ने पाये थे। बडे ही खुश थे। गिरीश ने नाग पाने पर श्याम से कहा,—"मोहन ने कहा था कि छोटे बड़े आठ नाग मिलेगे और उतने ही मिले भी"

बच्चो के दिखलाने को प्रसन्नता देख शान्ति ने अपने मुख पर भी मुस्कान लाने का प्रयत्न करती हुई, नाग का स्पर्श कर प्रेमीभिसिक्त हो मधुर स्वर से कहा :

"नाग कहाँ से पाये हो ?

गिरीश और श्याम दोनो साथ ही बतलाना चाहते थे। किन्तु श्याम पूर्णरीति से बतलाने मे समर्थ न होते हुए भी बतलाने का उपक्रम करता था। गिरीश ने कहा

"दूकान से खरीदा है।"

"दूकान से खरीदे है ?"

"हाँ !"

"पैसे कहाँ से मिले ?"

"स्कूल मे मेरे एक साथी ने नाग खरीदने के लिए दिये थे।"

"अच्छा ?"

नाग लिए हुए दोनो भाई उछलने लगे। बच्चो को देखने से भूखे होने की कल्पना नही की जा सकती थी। टन-टन पाँच बज गये। शान्ति भोजन का कोई इन्तजाम न कर सकी, और आशा भी न थी। कोई सहारा न देख मकान बेचने का निश्चय किया और सोचा कि इससे दो-एक साल चलेगा, आगे ईश्वर जो करेगा देखा जायगा।

कुछ क्षण के लिए मकान बेचने पर रहने की समस्या सामने आकर खडी हो गई। शहर मे एक दिन के लिए भी कोई रहने का स्थान न देगा कहाँ रहूँगी ? पिता जी के यहाँ भी जाना ठीक चीज नही।......नही ऐसा नही ! सकट पडने पर ही तो माँ-बाप, भाई-बन्धु का सहारा वाँछनीय है। आज ईश्वर ने उन्हे सब कुछ दिया है, किसी चीज की कमी नही है, धन-जन आदि से पूर्ण है। जहाँ सैकडो आदमियो का खर्च चलता है वह हमारा न चलेगा। पिता जी के यहाँ चलना उत्तम होगा......आप ही आप सोचकर—और सब ठीक है, किन्तु भाभियो के ताने तीखे बाण से भी अधिक कष्ट दायक होगे। संसार मे सब

कष्ट सहे जा सकते है, किन्तु ननद-भाभी की फटकार नही सह सकती प्राण छोड सकती है। सोचा अभी दो-एक दिन के लिए जाती हूं। सदा के लिए नही। आधीन रखने पर ईश्वर का भी अनादर हो सकता है। फिर इस समय हमारी दशा ही खराब है। जाना उचित नही। आपत्ति पडने पर मॉ-बाप भी मुख मोड लेते है। उन लोगो ने अपने कर्त्तव्य का पालन कर दिया। पाला-पोषा, बडा किया और कुलीन घर मे ब्याह दिया, जिन्दगी भर का ठेका उन पर नही है। भाग्य के लिए वे बेचारे क्या कर सकते है। मकान बेचना ही निश्चित करके कहा

"गिरीश तुम दोनो भाई खेलना, मैं अभी आती हू।"

"अच्छा, जल्दी आना।" श्याम फिर रोने लगा।

श्याम ने हाथ बढाकर मॉ के साथ चलने के लिए पुकारा "मॉ" ..

शान्ति को श्याम का सकेत समझने मे थोडी भी देर न लगी। उठा लिया, चूमा, हिलाया, झुलाया और गोदी से उतारते हुए कहा।

"गिरीश भैया के साथ खेलना। मै अभी आती हूँ।" और चल पडी।

: ६ :

मुहल्ले मे हजारीमल की बडी दूकान है, साथ ही उसका कारखाना भी। बनारसी सिल्क की सभी चीजे तैयार होती है। दूकान की शाखाएँ कुजगली तथा ठठेरी बाजार मे है। सुबह मे शाम तक व्यापारियो, दलालो तथा ग्राहको का जमघट लगा रहता। सेठ जी स्वय कार-बार देखते थे। बडी उत्तम रीति से काम चलता था।

सेठ जी मकान बनवाने के बडे शौकीन थे, आस-पास के खडहरो को लेकर उन्होने बहुत सुन्दर कोठी बनवाई थी। देखकर लोग अचम्भित हो जाते थे। मुहल्ले की भव्य इमारतें तैयार होने मे सेठ जी की ही सूझ थी। इन्जीनियर भी सेठ जी का सामना करने मे सकोच करता था। भवन-निर्माण-कला का न जाने उन्हे कैसे इतना

अधिक ज्ञान हो गया था। बडी-बडी हवेलियो के बनने में सेठजी से परामर्श चाहा जाता था।

रेशमी वस्तुओ के अलावा सेठ जी ने पसारी की भी दूकान चलाई थी। वह अभी नई थी। सेठ जी पसारी की दूकान में अधिक समय व्यतीत किया करते थे। कोठी के नीचे के भाग मे पसारी की दूकान थी और ऊपर रेशम का कारखाना। मुहल्ले के छोटे-बडे सभी की पहुँच सीधे सेठ जी तक थी। आते-जाते लोग हर-हर महादेव की ध्वनि से गगन-चुम्बी अट्टालिकाओ को गुँजित कर देते थे। सेठजी हुक्का पीते थे, आराम से गद्दी पर बैठे रहते थे, और यही से कार्य-सचालन करते थे।

× × ×

शान्ति सोचती-विचारती सेठ जी की दूकान पर पहुँची। सेठजी गद्दी पर न थे; मुनीम लोग अपना-अपना काम कर रहे थे। इधर-उधर देखा तो कोई दिखलाई न दिया। मुनीम जी से ही पूछा .

"मुनीम जी आज सेठ जी नही आये ?"

चश्मा हटाते हुए मुनीमजी ने कहा, "नही।"

"कहाँ पर मिलेगे ?"

"ऊपर" बडी दूकान मे है। क्यो क्या काम है ? अभी फुरसत मे नहीं है।"

"मेरा सेठ जी से ही काम है।"

"अच्छा पधारिये" व्यग करते हुए हाथ बढाकर कहा, "जरा चेहरे पर सुर्खी है, हम लोगो से बात न करेगी। सेठ जी से ही काम है।" और मुनीम लोग हँस पडे।

शान्ति चुप चाप ऊपर जाने के लिए सीढी चढने लगी। कर्मचारी-गण शान्ति को गौर से देख रहे थे। सेठ जी तीन-चार व्यापारियो से बात चीत कर रहे थे शान्ति द्वार के पास तक गई। किन्तु आदमियो को बैठे देख अन्दर न जा सकी।

सेठ जी ने देखा कि कोई औरत आई है। नौकर को बुलाया, रघू हाजिर हुआ। सेठ जी की आज्ञा से शान्ति को अन्दर ले गया। शान्ति के पहुँचने के पूर्व ही और लोग निकल चुके थे, केवल एक आदमी बैठा था। शान्ति को सेठ जी अच्छी तरह जानते थे, उसके पतिदेव सम्पूर्ण सौदा सेठ जी की ही दूकान से खरीदा करते थे। पहिचानने मे देर न लगी।

"महाराजन ! आज तुमने कैसे कष्ट किया ? पडित जी के पीछे तो दूकान ही छोड़ दी।"

"हाँ, सेठ जी ! बडी मुसीबत मे हूँ।"

"तुमने कभी कहा क्यो नही ?"

"सेठ जी, दरिद्रनारायण आजाते है तो कुछ नही सूझता।"

"ठीक कहती हो—लेकिन आज कैसे आई पहले यह बताओ।"

"मै अपना मकान बेचना चाहती हूँ, इसलिए सेवा मे हाज़िर हुई हूँ।"

"सेठ जी, गभीरता पूर्वक—मकान बेचना चाहती हो ?"

शान्ति मौन रही। सेठ जी मकान बेचने का समाचार जानकर प्रसन्न हो गये। ससार की सम्पूर्ण वस्तुओ मे मकान खरीदने मे जैसा आनद सेठ जी को दूसरी वस्तु मे नही मिलता था। वह मकान को एक सुरक्षित निधि मानते थे। अपने जीवन मे इन्होने किसी का मकान लेने से जवाब नही दिया था। भले ही कम कीमत देने के कारण वह न दे सका हो। लम्बी सास लेते हुए उन्होने कहा

"मकान तो बडा पुराना है, मौके का भी नहीं है। तुम आई हो, और पडित जी का हमसे बहुत बडा सम्बन्ध रहा है इसलिए ले ही लेगे।

"यही आशा लगा कर मै भी आई हूँ।"

"कितने मे बेचोगी ?"

"सेठ जी आपको जो उचित जँचे दे दीजिए, मोल-भाव मै नही" जानती।

"ह...ह ह . ! अपनी चीज की कीमत कौन नही जानता ?"

"मैं कुछ नही जानती ।"

'तो भी कुछ तो कहो"

'मै क्यो कहूँ सेठजी, आप को जो देना हो दे दीजिए ।"

"मेरे काम के योग्य तुम्हारा मकान तभी हो सकता है जब मै चार-पाँच हजार रुपये लगाकर उसे अपने ढग से बनवाऊँगा । अभी तो मेरे लिए खाली ज़मीन ही भर है । इस समय मै पांच सौ रुपये दे सकता हूँ ।

शान्ति चुप रही । वह सोचती—एक हज़ार रुपये से कम न मिलेगे किन्तु सेठ जी की जबान आधे मे ही रुक गई । आशा पर पानी फिर गया । दया-पात्री बनते हुए शान्ति ने फिर कहा

"सेठ जी पाँच सौ रुपये बहुत कम है । जगह काफी हे, एक परिवार का अच्छी तरह गुजारा हो सकता है। मकान बहुत पुराना भी नही हे ।"

"ऐसी बात नही हे महराजिन, नही तो मै और रुपये दे देता । तुम्हारे लिए मोल-भाव की कोई बात नही है । तुम्हारे बगलवाला इतना बडा मकान पारसाल बारह सौ रुपये मे लिया है । तुम्हारा मकान उसका चौथाई भी नही । सिर्फ तुम्हारी वजह से इतना भी कह दिया । दूसरे का होता तो लेता ही नही । पडित जी का हमारा बहुत दिनो तक सम्बन्ध रहा है, इसका तो ख्याल करना ही पडता है ।"

शान्ति सेठजी की व्यापारिक कुशलता पर आश्चर्य कर रही थी और सोचती थी कि यदि महाजनो में इतनी चतुराई न हो तो, काम ठप्प हो जाय । सेठ जी की चतुराईपूर्ण बाते सुनकर कुछ रोष मे आकर बोली

"सेठ जी, आपने बडी दया की । लेकिन इतने रुपये में मुझे नही बेचना है ।" वह चलने को उद्यत हुई ।

सेठ जी क्रुद्ध होकर बोले, "क्या तुमने समझा था कि दो-चार हज़ार रुपये मिलेगे ?"

"नही, किन्तु यह भी नही समझी थी कि मुफ्त मे चला जायगा ।"

"अच्छा, जहाँ अधिक मे बिकता हो वही बेच दो, फिर यहाँ क्या आई हो ?"

'म तो कुछ करूँगी ही—आपको क्या चिन्ता ? सेठ जी आप बेकार ही नाराज हो रहे है।"

"नही, नही, नाराज होने की कोई बात नही। तुम भी अपनी समझ के अनुसार ठीक ही कह रही हो, परन्तु मै भी जहाँ तक उचित समझता हूँ कहे देता हूँ, आगे तुम्हारी जैसी इच्छा। लेकिन हाँ, यदि पाँच सौ मे देना हो तो मुझे ही देना।"

"देखा जायगा।"

शान्ति एक तो यो ही सन्तप्त थी। दूसरे सेठजी से मकान का मूल्य सुनकर उसका सताप और भी अधिक बढ गया। उसे सेठजी के मोल-भाव पर आश्चर्य लग रहा था। उन्हे चाहिए था कि सहानुभूति प्रकट करते हुए उचित मूल्य देते। पर ऐसा न कर बार-बार पडित जी का नाम लेते थे, जिससे वह उन्हे हितैषी मान हजार रुपये की चीज पाँच सौ मे मे ही दे देती। न देने पर क्रोध का कारण बनी, इसका उसे पश्चाताप था।

शान्ति ने कभी कठोर शब्दो का प्रयोग नही किया था। लडको से भी कटु शब्दो का व्यवहार करना अनुचित मानती थी, किन्तु आज सेठ जी से बातचीत करने में कुछ कठोरता आ गई, इसका उसे क्षोभ था। चलते हुई सेठ जी से कहा

"सेठ जी, क्षमा कीजिएगा। मेरा स्वभाव इस समय खराब हो गया है। बडी उलझन मे हूँ।"

सेठ जी हँसकर बोले—"नही, नही, कोई बात नही।"

शान्ति निराश ही घर की ओर चल पडी।

: ७ :

शान्ति का प्रयत्न सफल न हुआ। उसने सोचा था सेठ जी, मकान ले लेगे। अभी सिर्फ पचास ही रुपये लूँगी और धीरे-धीरे आवश्यकता पडने पर लेती जाऊँगी। इन पचास रुपयो से दो महीने का काम चलेगा। आज एक रुपये का आटा लेकर घर लौटूँगी, सुबह से बच्चे

भूखे है, तुरत खाना बनाकर दे दूँगी इन...विचारो को लेकर सेठ जी के घर गई थी; किन्तु निराश लौटी । अब उसके सामने कोई अवलम्ब न था— और कर ही क्या सकती थी ।

शान्ति का शरीर दो दिन भूखा रहने से शिथिल होगया था ही, धीरे-धीरे चल रही थी । दो-तीन मकान पार करने के बाद ठाकुर सग्रामसिह की याद आगई । ठाकुर साहब अच्छे जमीदार थे । उन्हे ससार के किसी सुख की कमी न थी, स्वर्गिक आनन्द से जीवन सफल बना रहे थे । उन्होने भी कई लोगो की जायदाद खरीदी थी । लोग अपनी चीजें अच्छे दामो पर बेच आते थे । सेठ जी की तरह कजूसी से मोल-भाव करना वे पसन्द नही करते थे । गिरवी पर भी रुपया देकर गरीबो का काम चला देते थे। शान्ति ने सोचा—ठाकुर साहब के यहाँ चलकर मकान बेच देना चाहिए, जितना देगे उतना ही ले लूँगी—रुकी और उधर चल पडी ।

शान्ति को अपने जीवन की तरुणाई में भी नगर की सैर करने का शौक न था । वह मुहल्ले के चार-छ लोगो को छोड और किसी को नही जानती थी । ठाकुर साहब की कोठी गोबर्द्धन सराय पर थी, और शान्ति की ननिहाल भी वही थी । शान्ति ठाकुर साहब को अच्छी तरह पहचानती थी । बचपन मे अपनी नानी के साथ एक-दो बार जा भी चुकी थी न ।

ठाकुर साहब प्रतिष्ठित जमीदार थे, और बनारसी सिल्क के व्यापार करने का उन्हे शौक था — कुजगली में बनारसी सिल्क की बडी दूकान थी । दूकान का सारा काम मुनीमो पर ही रहता था । दीवाली, दशहरा पर दूकान की शोभा बढाने आते थे; किन्तु दूकान का कार्य खासा अच्छा चलता था ।

शाति ने ननिहाल मे सुना था कि ठाकुर साहब दूकान पर कभी नही जाते, न जाने कैसे काम चलता है,— मालूम था कि दूकान पर नही रहते, साथ ही दूकान भी नही जानती थी—कोठी की ओर चल पड़ी ।

सन्ध्या हो गयी थी। बनारसी रईसो की बग्गियाँ कतार से आ-जा रही थी। एक-से-एक बढकर अश्वो की जोडी दिखाई दे रही थी। ऐसा ताँता लगा था कि सडक पार करना आसान न था। काशी नगर-भर की सडके अपेक्षाकृत कम चौडी है, खासकर बुलानाला से गोदूलिया तक। शान्ति ठठेरी बाजार से गोविन्दपुरा होकर गोवर्द्धन सराय जाना चाहती थी, किन्तु बग्गी, एक्का, ताँगा, रिक्शा, मोटर तथा जन-समूह से जल्दी पार करना कठिन था। धीरे-धीरे भीड से निकलती हुई रिक्शो, ताँगो से बचकर गोविन्दपुरा की गली में पहुँच गई और तेजी से आगे बढ चली।

गोविन्दपुरा की प्रधान गली पर हिन्दू-वेश्याओ के घर है, ऊपर उनका निवास और नीचे तरह-तरह की दूकाने। सायकाल बत्ती जलने का समय हो रहा था—उस मडली की यह प्रथा थी कि बत्ती जलने के पूर्व अपना शृङ्गार कर वेश्याएँ झरोखो मे बैठ जाती थी। वे ऊपर बैठी हुई देवकन्याओ की तरह ससार की गति देख रही थी।

शान्ति भी यह जानती थी कि यह मुहल्ला वेश्याओ का है, किंतु उसे कोई मार्ग-ज्ञात न था। तबला ठनक रहा था, सारगी बज रही थी तथा नूपुरो की झकार पथिको को आह्वान दे रही थी। आते-जाते लोग रुकते जाते थे। शान्ति अपनी गति से बढती जा रही थी।

वेश्याएँ शान्ति को गौर से देखकर मुहल्ले मे नवीन नर्तकी के आने का सन्देह कर रही थी। उसके रूप, सौन्दर्य एव सुकुमारता से ईर्ष्या कर रही थी। कुछ देर बाद शान्ति ठाकुर साहब की कोठी पर पहुँच गई। सन्तरी पहरा दे रहा था। शान्ति ने पूछा "ठाकुर साहब कहाँ है ?" प्रहरी ने द्वार की ओर इशारा करते हुए कहा "अन्दर ही है। आप जा सकती है।"

ठाकुर साहब नहा-धोकर टहलने जाने की तैयारी में थे, किन्तु बैठक से बाहर न हुए थे ठीक इसी समय शान्ति आ पहुँची। ठाकुर साहब उसे

अच्छी तरह पहचानते थे। बाल-काल से ही शान्ति के सौन्दर्य की प्रशसा सुनकर उत्सुकतापूर्वक देखा करते थे। शान्ति के पतिदेव की मृत्यु के बारे मे भी जानते थे। शान्ति के वैधव्य से बहुत लोग परिचित थे। शान्ति की अवस्था देखकर बहुत सी औरते उसकी अत्यन्त सुन्दरता के प्रति घृणा कर रही थी। इन सब बातो से ठाकुर साहब अच्छी तरह परिचित थे। शान्ति को देखकर आश्चर्य मे पडकर बोले .

"अरे शान्ति ?"

शान्ति ने लज्जा से नत-मस्तक होकर मधुर स्वर से कहा, "जी हाँ।"

उठने का उपक्रम करते हुए ठाकुर साहब ने कहा, 'आज मेरे घर मे चन्द्रोदय ! अहो भाग्य !"

शान्ति चन्द्रोदय शब्द सुनते ही पीली पड गई। उसका हृदय काँपने लगा, कुछ उत्तर न दे सकी। चुपचाप चकित सी मुद्रा मे खडी रही।

ठाकुर सग्रामसिह ने जब शान्ति के सौन्दर्य की प्रशसा सुनकर सर्व-प्रथम उत्सुकतापूर्वक देखा था, तभी वह उसके सौन्दर्य-सागर मे डुबकी लगा कर अपनी वासना पूर्ण करना चाहता थे, किन्तु सामाजिक परवशताओ के कारण सफलता न मिल सकी। साथ ही प्राचीन आर्य-परम्परा के साथ सघर्ष करने का अवसर भी नही मिला था। ठाकुर साहब अनेक कठिनाइयो के कारण अपना उद्देश्य सफल नही बना सके थे, किन्तु विवाह होने के पूर्व तक पूर्ण प्रयत्नशील रहे। विवाह के अनन्तर इस दिशा मे उनका प्रयत्न शिथिल हो गया, किन्तु शान्ति के स्वय उपस्थित होने पर दबी हुई वासना पुन जीवित हो उठी। हृदय मे आशा का सचार हुआ शान्ति के सौन्दर्य का भर-आँखो दर्शन कर कोच की ओर इशारा करते हुए ठाकुर साहब ने कहा, "शान्ति ! तुम पैरो को कष्ट क्यो दे रही हो ?"

नही, मुझे कोई कष्ट नही हो रहा है। आप इसके लिए चिंतित न हों।"

'तुम्हारे लिए मे चिन्ता न करू ? यह कैसे सम्भव हो सकता है ?" शान्ति मुँह सिकोड कर चुप रही। ठाकुर साहब सोच रहे थे — आज ईश्वर ने बडी कृपा की, मनोरथ पूर्ण करने के लिए सुगम साधन सुलभ कर वह उसे किन शब्दो मे धन्यवाद दूँ। वह बडा ही दयालु है। ससार के सभी जीवो की उसे चिन्ता है। वह अपने कर्त्तव्य से एक क्षण भी च्युत नही हो सकता। वह मन-ही-मन शान्ति के आलिंगन की कल्पना कर रहे थे। बैठक मे ही टहलते हुए उन्होंन कहा, क्यो कष्ट कर रही हो ? "शान्ति, बैठ जाओ।"

'कोई कष्ट नही है, ठाकुर साहब !"कहकर वह कोच पर बैठ गई। उसको ठाकुर साहब की प्रत्येक बात अप्रिय लग रही थी, किन्तु सुनने पर लाचार थी। जिस कार्य के लिए गई थी, उसे वह अब तक कुछ भी न कर पाई थी। कटु शब्दो का कालकूट पीने को ही बाध्य हो रही थी। बच्चो के अकेले होने के कारण उसका मन छटपटा रहा था। वह ठाकुर साहब को शीघ्र ही अपनी प्रार्थना सुनाकर प्रस्थान करना चाहती थी।

बोली, "ठाकुर साहब, मेरी एक प्रार्थना सुन लीजिए। मै जल्दी जाना चाहती हूँ।"

"हॉ, हॉ, प्रार्थना नही, आदेश कहो शाति !

"आप जो समझिये।'

"नही, नही, नाराज न हो। कहो क्या कहना है ?"

"आज मेरे बच्चे भूखे है—दिन भर से भूखे है। जो जायदाद थी पडित जी के पीछे इन दो वर्षो मे बिक चुकी है केवल मकान बाकी है उसे आज आपके यहॉ बेचने आई हूँ।" वह करुणा सिक्त होकर चुप हो गई।

"ह .. ह .....ह...कैसी भोली औरत हैं। अप्सरा-जैसी सुन्दरता

पाकर मकान बेचने चली है। हीरे का मूल्य नही जानती। अरे ! तू, चाहती तो बडी-बडी हवेलियाँ बन सकती थीं। वे मकान बिकने की नौबत भी न आती। बच्चे मौज उडाते और तू भी रानी बनी बैठी रहती।"

ठाकुर साहब की बात सुनकर शान्ति का चित्त विह्वल हो उठा। क्या सोचकर आई थी और क्या हो रहा है। हृदय-गति तीव्र हो गई। लम्बी साँस लेती हुई बोली, "ठीक कहते है ठाकुर साहब ! लेकिन जिसके भाग्य मे दु:ख ही लिखा है उसे तो सुख कैसे मिल सकता है ?"

शान्ति के पास आते हुए ठाकुर साहब ने कहा, "शान्ति, अब भी तुम गलत रास्ते पर हो। भाग्य कुछ नही करता। मानव-कर्त्तव्य ही भाग्य है। कर्म के समुदाय को ही भाग्य कहते है। अभी तक तुमने भाग्य के भ्रम-जाल मे पडकर तरह-तरह के कष्टों का अनुभव किया है, किन्तु अब तुम कर्त्तव्य की ओर अग्रसर होकर देखो। सारी रिद्धियाँ-सिद्धियाँ तुम्हारे पैरो की सेवा करेंगी। वह सुख मिलेगा जो देवताओ को भी अप्राप्य है।" हाथ उठाते हुए बोला ये महल, उपवन एव सम्पूर्ण ऐश्वर्य तुम्हारे ही तो है। तुम्हारे लिए मेरे वक्षस्थल मे प्रेम का सिहासन खाली है। मै उसी मे तुम्हारी स्थापना करके पूजा करना चाहता हूँ। क्या मेरी अर्चना स्वीकार न करोगी ? नही, ऐसा नही हो सकता।"

शान्ति हडबड़ाकर कोच से उठती हुई बोली, "सावधान ! ठाकुर साहब, कर्त्तव्य के माने यह नही होते कि मै दुष्कर्म से अपनी उन्नति करूँ। अपने धर्म का पालन कर कठोर कष्ट भोगना ही उत्तम कर्त्तव्य है। राक्षसी कर्म से उन्नति सभव नही। यदि दुष्कर्म से क्षणिक उन्नति हो भी जाती है तो विनाश शीघ्र ही सभव है।" यह कहकर वह कक्ष से बाहर चलने के लिए उद्यत हो गई।

ठाकुर साहब ने सिर हिलाते हुए कहा—"हूं तो मैं दुष्कर्म के लिए कह रहा हूँ। ठहरो, बडी देवी बनी हो, जा कहाँ रही हो ?

छोटे मुंह बडी बात आई है मकान बेचने, दे रही है उपदेश ! न ज ने कितनो को बर्बाद कर चुकी, अब बडी सती बनने आई है।" और हाथ पकडकर भीतर की ओर खींचा।

शान्ति छूटने का प्रयास करती हुई बोली "छोडो—छोडो !" चिल्ला उठी आतुरता से चुम्बन का प्रयास करते हुए ठाकुर ने कहा—"ह ह हः कितने रुपये चाहिएँ ?"

शान्ति अपनी सारी शक्ति लगाकर उस पामर की दृष्टि मे ओझल होना चाहती थी। परन्तु विषयासक्त ठाकुर उसे कब छोडने वाला था। उस समय शान्ति शान्ति का प्रतीक न रहकर एकाएक क्रान्ति-रूप मे परिणत हो झटक कर ठाकुर साहब से अलग हो गई। वह अधर्म के पाश से छूटकर लम्बी साँस लेती और काँपती हुई अलग खडी ठाकुर साहब को फटकार रही थी, "दुष्ट तूने नारी को अबला समझकर उसके रूप, सौन्दर्य एवं कोमलता को इन्द्रियो की वासना की तृप्ति का साधन मात्र समझा है ! किन्तु नारी अबला न रहकर अपने सतीत्व की रक्षा के लिए जौहर का ताण्डव नृत्य दिखलाने के लिए सबला हो जाती है। नारी ही जगज्जननी के रूप मे ससार का सृजन करती है और वही चडी बनकर सहार भी। वासना की मादकता में बेहोश हो अपने आपको मत भूल ! नारी का अपमान ही देश के पतन का कारण बनता है और सम्मान समृद्धि का साधन। कुकर्मी तुझे एक शरणागत नारी पर अत्याचार करने को उद्यत होते शर्म नहीं आई ? नारी के गौरी रूप को चडी बनाना चाहता है ?"

× × ×

ठाकुर क्रोध से काँप रहे थे। शान्ति का क्रोध अभी शान्त न हुआ था। वह आवेश मे कहती ही जा रही थी। प्रभावती अन्दर से बैठक मे स्त्री की आवाज सुनकर दौडती हुई आई और पहुँच कर देखा— ठाकुर साहब अपराधी के रूप मे खडे अपनी गलती स्वीकार करने की मुद्रा मे जल-भुन रहे थे, शान्ति डाट रही थी। यह दृश्य देखकर प्रभावती

घबडाकर अपने पतिदेव की ओर देखती हुई बोली, "यह क्या हो रहा है ?"

ठाकुर साहब चुप रहे। शान्ति आवेश मे थी ही, झट बोली, "अपने ठाकुर साहब से ही पूछो।"

शान्ति की ओर देखकर प्रभावती ने कहा, "मै ठाकुर साहब से ही पूछ रही हूँ। आप क्यो बिगड उठी ?"

"अच्छा, पूछ लो ! मै क्यो बिगड रही हूँ यह भी यही बतायेगे।" यह कहकर वह बाहर चली गयी।

प्रभावती शान्ति से और अधिक बाते न कर सकी।

: ८ :

पुरोहित जी ने अपने जीवन-काल मे केवल दो ही धनी एव प्रतिष्ठित चेले मूडे थे। वह भी अपनी पडिताई से नही, सेवा मे। पुरोहित जी के परिवार का भरण-पोषण इसी पौरोहित्य-वृत्ति से चलता था। खाने-पहनने के लिए किसी प्रकार की कमी न थी। रायसाहब तथा ठाकुर साहब के यहाँ नित्यप्रति सायकाल तक एक बार पहुँचना उन्हे नितान्त आवश्यक था। रायसाहब के यहाँ सुबह ८ बजे तथा ठाकुर साहब के यहाँ सायकाल ७ बजे का समय निश्चित् था। रायसाहब सस्कृत-भाषा का कुछ ज्ञान रखते थे, अत उन्हे साहित्यिक चर्चा मे अति रुचि थी। ठाकुर साहब अँग्रेजी के पूर्ण विद्वान् थे, पर सस्कृत से बिलकुल अनभिज्ञ। पुरोहित जी से पौराणिक गप-बाजी सुनने का शौक रखते थे। कुछ देर मनोरजन हो जाता था। यही पुरोहित जी की जीविका का साधन था।

सायकाल ७ बजने में कुछ ही समय शेष था। पुरोहित जी ठाकुर साहब के दरबार मे जा रहे थे और मार्ग मे सोच रहे थे—ठाकुर साहब की अवस्था चालीस वर्ष से कम न होगी, किन्तु कोई सन्तान नही हुई, इससे बहुत चिंतित रहते है। बहू आये भी दस-बारह वर्ष हो रहे है।

दोनो स्वस्थ भी है, न जाने ईश्वर क्यो विमुख है ? यदि भगवान् एक सन्तान दे-दे तो न जाने कितने कगालो के घर बन जाये । घर-घर खुशियाँ मनाई जाये । आज ठाकुर साहब को क्या कमी है ? बडे-बडे हाकिम दरवाजे पर आकर जी-हुजूरी करते है, अपार धन-राशि मे भवन सुसज्जित है, किन्तु एक सन्तान के बिना सब व्यर्थ है ।

एक बार ठाकुर साहब ने अपनी जन्मपत्री भी दिखलाई थी । सन्तान होने का योग तो अवश्य है । शान्ति कराई जाय तो सफलता अवश्य मिलेगी । मैने बतलाया भी था,—इसे ठाकुर साहब ने स्वीकार किया था और विधान भी पूछा था । मुझे आज चल कर पुत्रेष्ठि-यज्ञ करने लिए विधान बतलाना चाहिए ।

ठाकुर साहब अँग्रेजी पढे होने के कारण अपने भारतीय धार्मिक कृत्यो पर कम आस्था रखते थे, किन्तु उनकी पत्नी उतना ही अधिक । यह भेद होते हुए भी सन्तान के हेतु दोनो के धार्मिक मत एक थे, ऐसा होना स्वाभाविक है । आपत्ति आ जाने पर सडी वस्तु मे भी विश्वास हो जाता है । इतनी बडी जमीदारी, बडी-बडी हवेलियाँ तथा अपार ऐश्वर्य को सुरक्षित रखने के लिए ठाकुर साहब के पीछे कोई न था । अत: पुत्र-प्राप्ति के लिए एक मत होकर सफलता की कामना करना उनके लिए स्वाभाविक था ।

पुरोहित जी के लिए ठाकुर साहब के यहाँ कोई पर्दा न था, वे स्वच्छन्दता से आ-जा सकते थे । भारतीय सभ्यता मे ऋषियो, मुनियो एव पुरोहितो के लिए प्राचीन काल से कोई प्रतिबन्ध नही रहा है । वे अपने सदुपदेश से ज्ञानवर्द्धन कर समाज की उन्नति मे योग देते थे । आज भी यत्र-तत्र इस परम्परा का आशिक पालन हो रहा है । पुरोहित जी अपने को उन्ही महर्षियो की सन्तान मानकर सत्यनिष्ठ होने मे स्वाभिमान समझते थे, और था भी । सात का घटा सन्तरी बजा रहा था—पुरोहित जी कोठी के द्वार पर उपस्थित हो गये । सन्तरी ने झुककर प्रणाम किया और पुरोहित जी ने आशीर्वाद देकर कोठी मे

प्रवेश किया।

हरी-हरी घास उमग से बढ रही थी। प्रत्येक वृक्ष श्रावण की झर-झर वर्षा से धन्य हो रहा था। उसे अब ग्रीष्म की प्रचण्ड लू का लेशमात्र स्मरण न था। समय ने पलटा खाया, झुलसती हुई लतिकाएँ सजल वायु के झोको से आनन्दित हो अपना रूप परिवर्तन करने लगी। पक्षी करुण-क्रन्दन छोड मधुर गीत गा रहे थे। वे अपने-अपने जोडो के साथ सुख से फूले नही समाते थे। बीच-बीच में तरह-तरह के फूल खिले हुए थे। चारो ओर बादल घुमड रहे थे। उपवन की शोभा देखते ही बनती थी।

पुरोहित जी आनन्द से प्रकृति-सौन्दर्य देखते हुए जा रहे थे; और मन मे ठाकुर साहब को नवीन पथ की ओर अग्रसर होने के लिए उपदेश देने की बात सोच रहे थे, साथ ही विधाता से मगल-कामना के लिए हाथ पसार रहे थे।

× × ×

शान्ति अपना मकान बेचने को गई थी, किन्तु वहाँ ऐसा न होकर "आये थे हरि-भजन को ओटन लगे कपास" वाली कहावत चरितार्थ हुई। घर बिकने की जगह सतीत्व बिकने की नौबत आ गई। शान्ति ने कभी स्वप्न मे भी इस परिस्थिति की कल्पना न की थी। सारी सम्पत्ति बिक चुकी थी, केवल धर्म ही शेष था। प्रभावती के अचानक उपस्थित हो जाने से शान्ति को भागने का अवसर मिला। ठाकुर साहब की बैठक से निकलकर वह जल्दी-जल्दी सीढी उतर रही थी। पैर सीधे नही पड रहे थे। क्रोध से शरीर काँप रहा था—उसे सँभालना उसके काबू के बाहर था—परिस्थिति से लाचार यो ही वेग से पैर बढ रहे थे।

उधर पुरोहित जी भी बैठक मे जाने के लिए सीढियो पर चढ रहे थे। शान्ति को यह अनुभव हुआ कि कोई आदमी नीचे से आ रहा है, परन्तु पहचान न पाई। पुरोहित जी की सीढ़ी चढने की गति

धीमी थी। शान्ति को काँपते और उतरते देखकर पुरोहित जी को कुछ आश्चर्य हो रहा था। पुरोहित जी यह शका कर ही रहे थे कि शान्ति दीवार से टकराई और गिरी। गिरते ही कुछ आवाज हुई।

वह टकराकर पुरोहित जी के ऊपर गिरी थी, अत वह अपने को दीवार मे टकराने से न बचा सके। बाये हाथ मे चोट लगी। झिझक कर शान्ति को दीवार के सहारे करते हुए क्रोधित हो दाये हाथ से बॉया कधा मलते हुए बोले, "कौन है दुष्टा ! पशु की तरह सीढी कूदती है। ईश्वर ने बचा लिया नही तो आज अकाल मृत्यु हो गई होती।"

पुरोहित जी अपने कपडे सँभाल कर चलना चाहते थे। पैर उठे और रुक गये। शान्ति को पहचानते हुए सहानुभूति प्रकट कर कहा, "ओह ! शान्ति यह तो हमारे मुहल्ले के पडित सकटमोचन की स्त्री है। यहाँ कैसे आई थी ?" पगडी उतार हवा करते हुए शान्ति को हिलाया-जुलाया, किन्तु वह बेहोश थी, पुरोहित जी को कैसे पहचानती?

कुछ क्षणो के लिए वह ससार की चिताओ से मुक्त थी। उसे अपने बच्चो की भूख प्यास का भी ध्यान न था—

पुरोहित जी कुछ मिन्टो तक हवा करते हुए शान्ति के वहाँ अचानक पहुँचने पर आश्चर्य कर रहे थे, शान्ति कभी किसी के यहाँ मोहल्ले मे भी नही जाती। उसका स्वरूप सब लोग नही पहचानते थे। हाँ, पडित सकटमोचन की प्रसिद्धि के कारण लोग उसे जानते थे। साथ ही उसका सोन्दर्य ही उसकी प्रसिद्धि के लिए पर्याप्त था, किन्तु शान्ति के लिए इसकी कोई उपयोगिता न थी।

जब उसे कुछ होश आया तो उसने करवट ली; आँखें तिलमिलाई, लम्बी श्वास लेकर थोडा सजग हुई और उसने सामने देखा कि अपने मुहल्ले के और पतिदेव के साथी पुरोहित जी उसे हवा करते हुए खडे थे। कुछ शरमाई और बोली, "पुरोहित जी ?" और रो पड़ी।

"नही-नही, शान्ति रोओ मत। नही तो फिर बेहोशी आ जायगी।

अभी ठीक हुई जाती हो।" तेजी से हवा करते हुए पुरोहित जी ने कहा।

शान्ति ने अपने कपडे सँभालने का उपक्रम करते हुए पुरोहितजी की ओर हाथ बढ़ाया। पुरोहित जी ने हवा करना बद कर हाथ पकड कर धीरे से उसे उठाया और-क्रम से अवशेष पाँच सीढियो को पार कराया। शान्ति पूर्णत होश मे आगई थी। पुरोहित जी का सहारा छोडकर रुक-रुक कर चलती हुई आँसुओ को पोछ कर बोली, "पुरोहित जी, आज आपने मेरे प्राण बचा लिए। आप न होते तो मुझे बडी चोट आती और प्राण बचना असभव हो जाता। यहाँ मुझे उठाकर फेकने-वाला भी कोई न था। मेरे कारण आपको भी चोट आई।"

"शान्ति! चिता न करो। जो ईश्वर करता है वही होता है। हो सकता है, तुम्हारी सहायता के लिए ही ईश्वर ने मुझे यहाँ भेजा हो।"

शान्ति के साथ पुरोहित जी कोठी की परिधि के बाहर आकर सडक की पटरी पर चल रहे थे। अब तक शान्ति बिलकुल ठीक हो गई थी। चोट मे पीडा थी, किन्तु लँगडाना बद हो गया था। वह ठाकुर साहब के यहाँ क्यो गई थी, इस भेद को अब तक पुरोहित जी न जान पाये थे। उनका मन इसके लिए अकुला रहा था, किंतु प्रश्न करने मे भी उन्हे सकोच होता था। बहुत देर तक अपने को इसकी जानकारी मे वे अनभिज्ञ न रख सके। शान्ति से ठाकुर साहब के यहाँ आने का कारण पूछ ही बैठे, "शान्ति, आज तुमने ठाकुर साहब के यहाँ आने का कैसे कष्ट किया?"

"पुरोहित जी, आज मैं अपना सब कुछ बेचने आई थी।"

पुरोहित जी न समझ पाये और उन्होने आश्चर्य से फिर पूछा, "क्या बेचने आई थी?"

अपने अचल से आँसू पोछते हुए उसने कहा, "सब कुछ।"

"स्पष्ट कहो—"

शान्ति थोडी देर कुछ न बोल सकी। फिर बोली, "आज सुबह से मेरे बच्चे भूखे हैं, घर मे कोई चीज़ न थी और रुपये-पैसे भी न थे। सारी जायदाद बिक चुकी। ठाकुर साहब के यहाँ मैं अपना मकान बेचने आई थी।"

"मकान बेचने आई थी? अब तक तुमने मुझसे क्यो नही कहा? कुछ तो प्रबन्ध होता ही! इतना कष्ट उठाने की क्या आवश्यकता थी?"

"पुरोहित जी, अभी आपने कहा कि जो भगवान् करते हैं वही होता है तो मैं उनके क्रम को कैसे बिगाड सकती हूँ?"

"खैर, कोई बात नही। अभी इन्तजाम हो जायगा, किन्तु पहले से ही बतलाना चाहिए था। अपने आदमियो से ही तो विपत्ति में मदद ली जाती है। हाँ, मकान लेने के लिए ठाकुर साहब ने फिर क्या कहा?"

शान्ति इस प्रश्न को सुनते ही सन्न हो गई। पुरोहित जी से बाते करते समय उसका मन कुछ क्षण के लिए ठाकुर साहब के दुष्कर्मों की ओर से हट गया था, किन्तु पुरोहित जी के पूछने पर पुन उस घटना का रूप सामने आ गया। उसने करुण स्वर से कहा, "क्या बताऊँ? पुरोहित जी, बताने लायक भी नही है। मैं मकान बेचने गई थी, किन्तु जिन्हे लक्ष्मी का वरदान प्राप्त है, उन्हे मकान की अपेक्षा नारी की इज्जत से खेलना अधिक प्रिय है। ईश्वर ने बडी मदद की कि धर्म बचा।"

इतना सुनते ही पुरोहित जी का क्रोध भभक उठा। वह बोले, "अच्छा, ठाकुर साहब की यहाँ तक हिम्मत? इस नीच को मिट्टी मे न मिला दिया तो ब्राह्मण नही।"

"नही-नही पुरोहित जी, आपको विशेष क्रोधित होने की आवश्यकता नही। वह अपने कर्तव्य का फल स्वयं भुगत लेगा। जो करेगा सो भरेगा। अन्यायी और दुराचारी आप ही-आप नष्ट हो जाते है। उन

लिए प्रयत्न करना व्यर्थ है। आप पडित है, सब कुछ जानते है।"

"ठीक कहती हो शान्ति! लेकिन आततायियो का शीघ्र ही वध कर देना चाहिए। वे जितने दिन इस पृथ्वी मे रहते है उतने ही दिन भार बनकर ससार का अहित करते है। उनका एक क्षण भी जीना महा अनर्थकारी होता है महापुरुषो ने कहा है।"

: ६ :

शान्ति के कठोर उत्तर को सुनकर प्रभावती किसी तथ्य तक न पहुँच पाई थी। अब उसका निराकरण भी होना सभव न था। शान्ति वहाँ से चली गयी। बरामदे से उसको पुरोहित जी के साथ जाते भी उसने देखा। शान्ति पुरोहित जी से कुछ बाते कर रही थी। वह भी स्पष्ट न सुनाई दी। वह एक ही वाक्य सुन पाई—"ईश्वर ने मदद की।"

शान्ति ठाकुर साहब को अपराधी बनाकर डाँट रही थी, प्रभावती ने आकर केवल अतिम शब्द सुना था। क्रोधित होकर शान्ति कह रही थी—"एक अभागी शरणागत नारी पर अत्याचार करने को उद्यत है. शर्म नही आती। नारी के गौरी रूप को चडी बनाना चाहता है?" इसी से प्रभावती ने ठाकुर साहब की शैतानी का अन्दाज लगा लिया था। "ईश्वर ने मदद की" इससे बात और भी स्पष्ट होगई।

ठाकुर साहब प्रभावती के प्रश्न का उत्तर देना उचित न समझकर मौन हो रहे। वह इसी मे अपनी खैर मना रहे थे। उनको यह विश्वास न था कि शान्ति इस रूप मे सामने आयेगी। उन्होने सुना था—रूपवान् स्त्री अपने सौन्दर्य-मद मे मस्त हो अपने रास्ते से भटक जाती है, यही कारण था कि वे पर-पुरुषो की प्ररणा से अपना सतीत्व नहीं बचा पाती। ठाकुर साहब की धारणा थी कि नारी की लज्जा तभी तक सुरक्षित रह सकती है, जब तक उन्हे एकान्त स्थान न मिले।

"घृत कुम्भ समा नारी, तप्तागार सम पुमान्।
तस्माद् घृतच वह्नि च नैकत्र स्थापयेद्बुध।"

किन्तु आज शान्ति इसके विपरीत ही निकली। एकान्त साधन था, सक रूप की भूरि-भूरि प्रशसा की गई थी, और संपूर्ण ऐश्वर्य की अधिकारिणी बनाने का प्रलोभन भी दिया गया था, किन्तु सब तुच्छ। क्या सचमुच शान्ति अपने सतीत्व-रक्षण मे देवी थी ? नही, ऐसा नही हो सकता। वह किसी दूसरे से प्रेम करती होगी। प्रेम-बधन के सामने ससार के सपूर्ण सुख तुच्छ हो जाते हैं। इस युग में सतयुग की स्त्रियाँ कहाँ से आईं ? मेरे सामने से शान्ति चली जाय, मेरे लिए लज्जा की बात है। ठाकुर प्रभावती को बाधक समझ कर उस पर मन-ही-मन क्रोधित हो रहे थे।

प्रभावती के पूछने पर ठाकुर साहब कुछ उत्तर नही दे सके, चिंता की मुद्रा में मौन थे। प्रभावती के होठो में मुस्कराहट थी; किन्तु वाक्यो मे व्यग। वह बोली, "आप बोलते क्यो नही ?"

क्रोध में आकर ठाकुर साहब ने कहा, "हट जाओ, सामने से !"

"अरे ! मुझ पर क्यो बिगड रहे हो ? मैंने कौन-सी गलती की है ?

ठाकुर साहब मौन रहे तो प्रभावती ने पुन. कहा,

"वह औरत क्यो बड़बडा रही थी ?"

"ठाकुर साहब खीझकर बोले, "उसी से पूछो !"

"उससे क्या पूछू ? उसने तो आपसे ही पूछने के लिए कहा है।" वह ठाकुर साहब की ओर बढ़ी।

ठाकुर साहब क्रोध से उतावले थे। शान्ति को छोड अन्य किसी औरत को सामने नहीं देखना चाहते थे। बार-बार उसी की याद हृदय को विदीर्ण किये देती थी। उसके प्राप्त करने की उधेड़ बुन में उनका मन व्याकुल था, फिर प्रभावती के प्रश्नों का समाधान कैसे हो सकता था ? खीझकर ठाकुर साहब ने कहा, "बकवास मत करो, एक बार मैंने कह दिया, सामने से हट जा।"

"अच्छा, तो मैं बकवास कर रही हूँ ? क्या मैं इतनी नासमझ हूँ ? वह बेचारी अबला अपनी विपत्ति को ले लेकर कुछ सहायता माँगने आई

होगी ! यहाँ सहायता पाना तो दूर रहा, अपना धर्म मुश्किल से बचा पाई । इसमे आप मेरे ऊपर क्यो नाराज होते है ? स्वय अपने पर नाराज़ हो । आपने गलत मार्ग कक अनुसरण किया है । अंधेर हो गया। एक विधवा अबला पर इस तरह यत्याचार करने में आपको शर्म नही

ठाकुर साहब खडे होते हुए प्रभावती को डाँटकर बोले चुप रहो बडी बातें बनाती हो ।"

प्रभावती शान्त होने के बदले और भी उत्तेजित होकर कहने लगी "मै चुप क्यो रहूँ ? हिन्दू-समाज में स्त्रियो जैसा असहाय जीवन किसी का नही है । उन्हे बोलने तक का अधिकार नही है, परदे में बद रहती है, जरा सदेह हो जाने पर त्याग दी जाती है, भले ही सदेह निरर्थक हो, इसका कोई ख्याल नही किया जाता । स्त्री-पुरुष दोनो विषय-बासना की तृप्ति की दृष्टि से बराबर है । पुरुषो के लिए बिशाल अधिर और स्त्रियो के लिए कठोर बधन ! कितना अन्याय है ! यदि नारी के लिए कठोर बधन है, तो पुरषो को उससे मुक्त रखना न्याय-सगत नही ।

ठाकुर साहव अभी तक चुपचाप प्रभावती की बाते सुने जा रहे थे । सघर्ष की भावना उनमे तीव्र हो चुकी थी, उन्होंने एक-दो बार प्रभावती को डाँटने का भी प्रयाग किया, किन्तु असफल रहे । अन्य दिनो ठाकुर साहव की कडी भृकुटी देखकर ही प्रभऽवती नत-मस्तक हो जाती थी; परन्तु उस दिन कई बार फटकारने पर भी शान्त न हुई । उसके सामने ठाकुर साहब को साहस न था कि वह अपनी सफ़ाई देकर निर्दोष हो जाते । वह उस समय स्वय अपराधी थे ।

प्रभावती की यह प्रगति देख ठाकुर साहब को बडा क्षोभ हो रहा था । उन्हें यह कभी आशा न थी कि प्रभावती मेरी आज्ञाओ की इस तरह अवहेलना कर झगडने के लिए तैयार हो जायगी और मुझे ही नीचा देखना पडेगा । प्रभावती द्वेष से नही, बल्कि वह समाज की वस्तुस्थिति का विवेचन कर रही थी । उसका उद्देश्य अपने पति को अपमानित करना नहीं था । वह जानती थी कि इसका परिणाम भया-

नक होगा ।

प्रभावती का एक-एक शब्द ठाकुर साहब के लिए नुकीले बाण से भी बढकर कष्टदायक था। उनकी मुख-मुद्रा से हृदय की ग्लानि स्पष्ट दिखाई दे रही थी ।

उनकी लाल-लाल आँखे, लम्बी स्थूल भुजाएँ क्रोध से कॉप रही थी, उन्हे शान्त करने के लिए कोई साधन सुलभ न था। समय काफ़ी बीत चुका था, आठ बजने मे कुछ ही मिनट की देर थी ।

ठाकुर साहब कपडे पहनकर टहलने के लिए जाने को पहले से ही तैयार थे, प्रभावती की बातो से ऊबकर घर से निकल पडे। घड़ी मे टन-टन आठ बजे, प्रभावती चिंतित खडी ठाकुर साहब की गति-विधि देखती रही ।

: १० :

पुरोहित शान्ति की करुण कहनी सुनते हुए बेनियाबाग पार कर सँकरी गलियो मे चल रहे थे और समवेदना प्रकट कर भविष्य के लिए सान्त्वना दे रहे थे। शान्ति मौन, मन-ही-मन अपनी जटिल परिस्थिति पर सोच रही थी—उसे बच्चो के पालन-पोषण का कोई मार्ग दिखाई नही दे रहा था। वह इस शका से भयभीत हो रही थी कि क्या इससे भी अधिक कठिन परिस्थितियो का सामना करना पडेगा ?

पुरोहित जी ने दुखित होकर कहा, "शान्ति, अब तक तुमने इतना कष्ट उठाया, किन्तु मुझसे कभी न कहा। हम और पंडित जी एक साथ पढे-लिखे और खेल-कूदकर बड़े हुए। उन पर सरस्वती देवी की विशेष कृपा थी, वह बहुत बडे विद्वान् हुए। मै साधारण ही रहा। हम दोनो की बडी मित्रता थी, यह तो तुमसे छिपा नही था कि हम दोनो मे कोई अन्तर न था। जमाना बडा टेढा है, इसलिए मैंने आना-जाना जारी नही रखा किन्तु ऐसी परिस्थिति मे क्या मैं तुम्हें कुछ सहयोग न देता ?" पुरोहित जी की आँखो में आँसू छलछला आये ।

शान्ति ने करुण स्वर से कहा, "पुरोहित जी, विधि के विधान को मिटाने की आप और हम किसी में सामर्थ्य नही। उसकी लकीर पर ही एक रक से लेकर महाराजा तक को चलना पडता है। कर्म का फल तो भोगना ही पडेगा।"

"ठीक है! शान्ति लेकिन कर्म का फल भोगन के लिए हाथ-पर-हाथ रखकर बैठे रहना भी तो अच्छा नही। कर्तव्य करने पर असफल होने में भाग्य का दोष लगाया जा सकता है, इसमे पहले नही।"

शान्ति पुरोहित जी की बाते स्वीकार कर मौन रही। पुरोहित जी मन-ही-मन सोच रहे थे कि रायसाहब के यहाँ कई दिन से महाराजिन नही आ रही है। उसके काम छोडने की खबर भी मिल चुकी है। वे दूसरी महाराजिन की तलाश मे है—मुझ से भी कहा था अभी तक कोई नही मिली। शान्ति को रायसाहब के यहाँ काम दिला देना अच्छा होगा। लडको को भी पढने के लिए कुछ सहयोग मिल जाया करेगा। किन्तु सोचा कि इस कार्य को शान्ति-अस्वीकार तो नहीं करेगी? कही बच्चो के भरण-पोषण का प्रश्न है, अवश्य स्वीकार करेगी इसी मे उसका कल्याण है। लम्बी साँस लेते हुए उन्होने शान्ति से कहा "शान्ति, तुम्हारा जीवन इस समय आर्थिक सकट से घिरा हुआ है। तुम कही अच्छे घर मे नौकरी क्यों नही कर लेती? बच्चो का लालन-पालन भी उचित रीति से हो जायगा और तुम्हे दर-दर भटकना भी न पडेगा।"

कृतज्ञता के भार से दबी हुई शान्ति ने कहा, "ठीक कहते हैं, पुरोहितजी! किन्तु मुझ अभागिनी के लिए नौकरी भी कहाँ है?"

शान्ति के इस उत्तर से पुरोहित जी को यह स्पष्ट हो गया कि शान्ति को नौकरी करने मे कोई आपत्ति न होगी। उन्होने कहा

"हमारे मुहल्ले के पास ही ठठेरी बाजार के नुक्कड पर रायसाहब की कोठी है। उनके यहाँ कई दिनों से महाराजिन नही आती है; इस लिए दूसरी महाराजिन की तलाश है। मुझसे भी कई बार ढूढने के

लिए कहा था। अभी चलकर तुम से बातचीत करा देता हूँ। यदि तय हो जाय तो कर लो, अच्छा है। रायसाहब बडे अच्छे आदमी है उनकी सज्जनता से नगर भर के लोग प्रसन्न है। कई पाठशालाएँ खोल रखी है। उनकी धर्मशालाएँ तो हर एक तीर्थस्थान मे बनी हुई है। कई जगह सदावर्त भी खुले है, बडे दानी है, कलियुग के कर्ण माने जाते है।"

शान्ति पुरोहित जी की बाते सुनकर दान-ग्रहण का खडन करना चाहती थी। अवसर न देख उभड न सकी, किन्तु अपने विचारो को पूर्ण रीति से दबा भी नही पाई। साथ ही पुरोहित जी की बातो मे स्वीकृति प्रदान करना भी अपना कर्त्तव्य समझती थी। वह बोली

"पुरोहित जी, रायसाहब सचमुच बडे अच्छे है, किन्तु उनके दान से मेरे जीवन का कोई सम्बन्ध नही। मैं अपने बच्चो का पालन-पोषण दान के धन से नही करना चाहती। भूखो मर जाना अच्छा, किन्तु दान की रोटी खाकर जीवन व्यतीत करना अच्छा नही। म अपने बच्चो को दान की रोटी खिलाकर जन्म भर के लिए निकम्मे नही बनाना चाहती। उन्हे परिश्रम से प्राप्त की हुई रोटी दूँगी, भले ही कई दिनो मे मिले। उनका जीवन मुझे ऐसा ही बनाना है जिससे अपने कर्तव्य मे सफलता प्राप्त कर सके। यही मेरे पतिदेव का आदेश था। इसीसे उन्होंने जीवन-काल मे अध्यापन-वृत्ति छोडकर अन्य किसी वृत्ति को स्वीकार नही किया नही तो आज मेरे सामने इतना बडा अर्थ-सकट न आता। फिर उनकी आज्ञाओ का पालन करना ही मेरा धर्म है।"

"ठीक है, शान्ति! किन्तु जो मैने कहा वह तुमने समझा नही। मेरा मतलब तुम्हे दान लेने के लिए नही था—मै तो उनकी सज्जनता एव धार्मिकता के बारे मे बतला रहा था। फिर भी दान लेना पाप नही है। ब्राह्मण के लिए पढना-पढाना, यज्ञ करना-यज्ञ कराना, दानलेना दान देना, ये षट्कर्म कहे गये है। इन्ही षट्कर्मो के अन्दर दान लेना भी आता है। यदि दान-ग्रहण खराब माना जाता तो इसकी अच्छे कर्मो

मे गिनती न होती। साथ ही बडे-बडे महर्षियो ने, जिनके भृकुटि-विक्षेप से ससार कॉपता था - दान-ग्रहण किया था, अत उसे निकृष्ट बतलाना दुस्साहस होगा।"

पुरोहित जी की बाते सुनकर शान्ति ने कहा, "पुरोहित जी, ससार मे कोई वस्तु खराब नही होती, उसका उपयोग खराब होता है। प्राचीनकाल मे हमारे ऋषि-मुनि दान लेकर तुरन्त दूसरे को दे देते थे। दान से पाई हुई वस्तु से उन्हे रत्ती मोह नही होता था, परन्तु आज एक पैसे की वस्तु पाने पर भी किसी दूसरे को देने की इच्छा नही होती, अपने उदर-पोषण मे ही लगा ली जाती है। ऐसी दशा मे दान-ग्रहण का फल आलस्य एव अकर्मण्यता को छोडकर और क्या हो सकता है ? मै अपने बच्चो को दान-ग्रहण की शिक्षा नही देना चाहती।"

"ठीक है, किन्तु तुम्हारे लिए तो मैने महाराजिन का काम सोचा था. जो परिश्रम का ही है, दान का नही। अपने मुहल्ले की कई ब्राह्मणियो ने ऐसे ही साधनो से अपने बच्चो का पालन-पोषण कर उनके भविष्य को उज्ज्वल बनाया है। भगवान् चाहेगा तो तुम्हें भी बच्चो को शिक्षित बनाने मे सफलता मिलेगी।"

"पुरोहित जी, मै आपके विचारो से सहमत हूँ, लेकिन ··" शान्ति ने मस्तक नीचा कर लिया।

"नही-नही, और कोई बात नही है, वह बडे ही सज्जन है। उनके यहाँ रहने से तुम्हे पता चल जायगा। हाँ, ईमानदारी से काम करना चाहिए।"

"इसके लिए मै आपको क्या विश्वास दिला सकती हूँ···?"

पुरोहित जी ने हँसकर कहा, "नही, तुम पर मुझे पूर्ण विश्वास है। सचाई के साथ काम करने वालो का ईश्वर साथ देता है।"

× × ×

रायसाहब के दरवाजे पर कंगलो की भीड लगी थी। काशी तथा प्रयाग आदि तीर्थस्थानो मे कॅगलो की सख्या अधिक पाई जाती

है। उनका विचित्र ही ढग होता है। कोई भजन कर रहा था, कोई बाजा बजा रहा था और कुछ हल्ला मचाने में ही तल्लीन थे। दो-तीन सिपाही उन्हे शान्त कराने मे लगे थे।

अधिक भीड देखकर शान्ति ने पूछा, "पुरोहित जी, यह भीड क्यो इकट्ठी हो रही है ?"

पुरोहित जी ने हँसकर कहा, "ये सब रायसाहब के यहाँ सदावर्त्त लेने आये हैं। नित्यप्रति सायकाल ७॥ बजे यह भीड इकट्ठी हुआ करती है। सदावर्त्त बँटना आरभ हो गया होगा, इसी से लिए हल्ला मच रहा है।"

शान्ति ने गदगद होकर कहा, "अच्छा, सचमुच रायसाहब दानी है ? इस मँहगाई मे इतने लोगो को रोजाना अन्न-दान देते है, भगवान् ही पूरा करता है।'

"हाँ, शान्ति, मैने तो पहले ही कहा था कि वे कलियुग के दानवीर कर्ण है।"

शान्ति तथा पुरोहित जी बातें करते हुए रायसाहब के दरवाजे पर पहुँचे। सिपाहियो ने पुरोहित जी के चरण छुए। उन्होने आशीर्वाद दिया और शान्ति को द्वार के भीतरी भाग में बैठाकर स्वय रायसाहब की बैठक मे चले गये। वह वही बैठी, दान-वितरण देख रही थी। कोई इधर से लेता, कोई उधर मे। बहुत-से कई बार पा जाते, और कुछ लोग एक बार भी नही। शान्ति मन-ही-मन भगवान् से पूछ रही थी, हे भगवान्! क्या मुझे भी इन्ही छल-छिद्रो से अपना पेट भरना होगा ? इससे तो मृत्यु उत्तम है। क्या इस भार-स्वरूप जीवन से मुक्त करना तुम्हारे हाथ मे नही ? उसका माथा घूम गया, और अपने को सँभालने के लिए उसने दीवार का सहारा लिया।

: ११ :

ठाकुर साहब के चले जाने के बाद प्रभावती बैठक मे ही बैठी उनकी नाराजगी पर सोच रही थी, ससार कितना विचित्र है! स्वय

गलती कर लोग दूसरो पर नाराज होते है, न तो अपनी करनी पर पश्चात्ताप होता है और न वे अपने स्वभाव मे परिवर्तन करने की थी थोडी-भी आवश्यकता समझते है। फिर भी नारियो को सदा पतिदेव के अपराधो का फल भोगना ही पडता है। कितना घोर अन्याय ? नारी-जीवन एक अभिशाप है। परन्तु ! स्वय नारी ही प्रेम से पिघलकर पुरुष मे लीन होना चाहती है, किन्तु पुरुष नारियो के यौवन ढल जाने पर उनको नीरस समझ उपेक्षा कर देता है और पवित्र-प्रेम को केवल वासना-तृप्ति का साधन समझ बैठते है। पुरुष का नारी के साथ इतना घोर अन्याय ! वह उद्विग्न हो कक्ष के बाहर हो जाना चाहती थी—एकाएक ठाकुर साहब कक्ष मे प्रवेश करते हुए दिखाई दिये। प्रभावती कुछ क्षणो तक विचारो मे डूबी हुई खड़ी रही। फिर ठाकुर साहब की बगल मे कोच पर बैठ गई।

ठाकुर साहब बगीचे मे नित्य एक घटा टहला करते थे। साथ ही प्रभावती को भी ठाकुर साहब के साथ टहलने का शौक था। वह नवीन सभ्यता मे पली हुई नारी अपने अधिकारो को समझती थी—पुरुषो के अन्याय करने पर लोहा लेने का साहस रखती थी। उसे सामाजिक रूढ़ियो से घृणा थी, धर्म के नाम पर अकर्मण्यता को नही देखना चाहती थी—वह भारतीय आर्य नर-नारियो के आदर्श मे ही धर्म-परायणता का का मगलमय स्वप्न देखना चाहती थी। प्रभावती यह नही चाहती थी कि नारी कठपुतली बनकर मनसिज के दरबार में वासना के रगमच पर यौवन-मद से नर्त्तन करे। वह चाहती थी—भारतीय नारी अपने पूर्व इतिहास को ध्यान मे रखकर पुरुषो के साथ कधे-से-कधा मिलाकर चले और आनेवाली आपत्तियो मे हर तरह से योग दे। वह महारानी लक्ष्मीबाई को न भूले। नारियो का आदर्शमय जीवन पुरुषो की अपेक्षा अधिक महत्व रखता है। बालको में इन्ही माताओ द्वारा देश-सेवा की भावना जागृत होती है, और वही सन्ताने अपने कर्तव्य-पथ पर आगे बढ़ती हुई देश के स्वाभिमान को सुरक्षित रखती हैं।

ठाकुर साहब प्रभावती की बगल मे कोच पर शान्त बैठे थे और आपबीती पर कुछ सोच रहे थे । अपने जीवन में प्रथम बार ठाकुर साहब को तिरस्कृत होना पडा था । इसका उन्हें बडा क्षोभ था । कार्य ही क्षोभ का था - साथ ही उन्हे मन-ही-मन ग्लानि भी हो रही थी । वह किंकर्त्तव्य विमूढ थे और अपना कल्याणकारी पथ ढूंढना उनकी शक्ति के परे था ।

प्रभावती ठाकुर साहब की चिंताओ को दूरकर उन्हे प्रसन्न करना चाहती थी । उसे अपने पतिदेव को नाराजगी से मना लेने का स्वाभिमान था—आज परीक्षा होनी थी, कुछ अनमनस्क होकर बोली, "आज आपको क्या हो गया है, जो बोलना तक बद कर दिया ?"

ठाकुर साहब ने प्रभावती की ओर कडी निगाहो से देखा और फिर आँखें नीची कर ली । प्रभावती फिर कुछ न बोल पाई । बीच ही मे सुग्गी ने आकर कहा, "दुलहिन, जेवनार बनिगयवहै, थार लगवाई ?'

प्रभावती ने सुग्गी की ओर देखकर कहा—'हॉ थाली लगवाओ ।'

ठाकुर साहब ने प्रभावती की ओर देखते हुए सुग्गी को डाँटकर कहा "नही, मैं नही खाऊँगा ।"

होठो मे क्षणिक मुस्कराहट लाकर प्रभावती ने कहा, "क्यो ? आज गुस्से से पेट भर गया है ?"

"हाँ, गुस्से से ही पेट भर गया ।"

"तब तो बडा अच्छा हे । लोग बेकार ही खाने के लिए परेशान होते है । उन्हे चाहिए कि जब भूख लगे गुस्से हो जाये, सारी झंझट दूर । दुनिया के पचडे में पडकर तरह-तरह के कष्ट सहने की क्या आवश्यकता ! शायद वैज्ञानिको ने इस विषय मे अनुसधान नही किया ।"

ठाकुर साहब गुस्से मे बोल उठे, "अच्छा, तो तुम्ही करके दिखा दो । केवल डी० लिट् होना ही तो बाकी है । एम० ए० प्रथम श्रेणी मे पास किया ही है—डाक्टरेट की कमी क्यो रहे ?"

"यदि आपकी आज्ञा होगी तो क्यो न करूँगी ?"

"तुम्हारे लिए मेरी आज्ञा ? आज की पढी-लिखी स्त्री पति के आदेशो का पालन करेगी तो उसका अपमान न होगा ? फिर वह अपने नारी-अधिकारो को इस युग मे कैसे सुरक्षित रख सकेगी ?"

"मेरी धृष्टता क्षमा कीजिएगा। यह आपका ख्याल गलत है कि पढी-लिखी स्त्री पति के आदेशो की अवहेलना करती है। वह जितना अनुशासन का पालन करती है, शायद उतना अशिक्षित नारी नही कर सकती, किन्तु अन्याय सहने के लिए तैयार न होगी। गलत मार्ग पर चलते देख उचित पथ की ओर इगित करेगी, इसमे अवज्ञा का कोई प्रश्न ही नही है।"

ठाकुर साहब ने खीझकर कहा, "ग्राम-वधुओ का हृदय कितना स्वच्छ एव निर्मल होता है ? वे अपने पति के आदेशो का अक्षरश पालन करती है। उन्हे तरह-तरह के विवादो से परेशान करना नही आता। कॉलेज के वातावरण मे पलकर कपटपूर्ण व्यवहार करना भी नही जानती। उनमे लज्जा, शील तथा मर्यादा का बन्धन रहता है।"

ठाकुर साहब की बाते सुनकर प्रभावती सहम गई। सारा जोश यो ही ठडा पड गया था। वह ठाकुर साहब को अधिक अप्रसन्न समझकर आगे कुछ बोलने का साहस न कर सकी। करीम खाँ ने आकर सलाम किया, और कहा—"हुजूर, मोटर तैयार है।" ड्राइवर को नौ बजे रायसाहब के यहाँ चलने का हुक्म हुआ था। ठाकुर साहब ने अपने कपडे सँभालते हुए कहा, "अच्छा चलता हूँ।" छडी लेकर चलना चाहते थे कि अन्दर से सुग्गी खाना लेकर उपस्थित हो गई ठाकुर साहब बाहर जाने के लिए तैयार थे, मेज पर खाना रखते हुए सुग्गी ने कहा, "सरकार! थार आय गयहवै जेवनार कइ लेई।"

ठाकुर साहब ने सुग्गी की ओर देखते हुए कहा, "थाल आ गया है तो मै क्या करूँ ? पीठ मे बाँध लूँ ?"

सुग्गी डर गई। यह इतनी सुशील नौकरानी थी कि इसके

ऊपर कोई नाराज़ ही नही हो सकता था। ठाकुर साहब के यहाँ १० वर्ष काम करते हो गये, किन्तु अब तक कोई शिकायत नही होने पाई। उस पर कभी डाट नही पडी। ठाकुर साहब का यह हाल देख उसकी समझ मे कुछ न आया।

सुग्गी विन्ध्य-प्रदेश की राजधानी रीवा की रहने वाली थी। रीवा प्रदेश बनने के पूर्व बघेलखड की राजधानी कहलाती थी। यह नगर है नो छोटा, किन्तु समीपस्थ प्राकृतिक सौन्दर्य से अधिक रमणीक मालूम होता है। नौकरानी जाति की नाइन थी। व्यवहार मे इतनी निपुण कि कहने की कोई बात ही नहीं है, क्योकि यह तो उसका स्वाभाविक गुण था। अवस्था ढल चुकी थी, पचास से कम की न होगी। उसने अपने जीवन-काल मे सामाजिक परिस्थितियो का खूब अनुभव किया था। सदा बडो के ही सम्पर्क में रही थी। ठाकुर साहब के स्वभाव को बचपन से जानती थी। ठाकुर साहब प्रायः अपने पिता जी के साथ दशहरा देखने रीवा जाया करते थे, और महीने-दो महीने रह कर वापस आते थे। शायद पुरानी रिश्तेदारी भी थी दशहरा देखने के साथ-साथ अपने इष्ट-मित्रो से मिल आते थे। उन्हे रीवा मे रहना न जाने क्यों अधिक प्रिय था। उन्ही के द्वारा सुग्गी भी काशी आई थी। ठाकुर साहब भी अपने जमाने मे कई बार दशहरा देखने रीवा गये थे। वह उनकी आदतो को अच्छी तरह जानती थी। वे खाने मे कभी नाराज नही होते थे। सारा काम छोडकर भोजन करते थे परन्तु उस दिन की परिस्थिति समझ न पाई। ठाकुर साहब ही नही, ठकुराइन साहिबा भी अप्रसन्न दिखाई दे रही थी। सुग्गी ने प्रभावती से पूछा .

"दुलहिन आजु सरकार नाराज काहे है ? जेउनारउ नही भई, उइसै चले गैन।"

प्रभावती कुछ न बोली—चिंतित, मौन रही। ठाकुर साहब ड्राइवर के साथ मोटर पर बैठकर रायसाहब की ओर चल दिये। घर से मोटर की आवाज़ हुई और दृष्टि से ओझल हो गये।

: १२ :

रायसाहब बैठक में कुछ व्यापारियो के साथ वार्तालाप कर चुके थे। और सभी व्यापारी लोग अपनी बाते समाप्त कर बिदा हो चुके थे। रायसाहब भी विश्वनाथ-दर्शन के लिए जाने वाले थे। सायंकाल प्रतिदिन दर्शन करने का उनका नियम था। वे सब काम छोडकर विश्वनाथ जी के दर्शन करने जाते थे, दिन भर तो व्यापारियो की वजह से फुरसत नही मिलती थी, सायकाल भी भीड लगी रहती थी; लेकिन ८ बजे के बाद व्यापार-सम्बन्धी काम बन्द कर देते थे। घटे-दो-घटे भगवत्-भजन मे ही बिताते थे। बडे भक्त, दयालु तथा साधु-सेवी थे।

× × ×

आठ बजे सायकाल घर से निकलने के पहले गर्मी के दिनो में शर्बत पीते थे, शर्बत की ही प्रतीक्षा थी। एकाएक पुरोहित जी को देखकर बोले, "आइए-आइए, पुरोहित जी! आज आपने इस समय कैसे कष्ट किया?"

"हः... हः...हः... ऐसे ही। मैने सोचा कि चलें रायसाहब के यहाँ कुछ समय बीत जायगा।"

"बडी कृपा की।" आराम कुर्सी की ओर इगित कर उन्होंने कहा, "पधारिए।"

पुरोहित जी कुर्सी पर आराम से बैठ गये। रायसाहब ने नौकर को आवाज़ दी। बद्री नौकर स्वत. शर्बत लेकर आ रहा था, रायसाहब की आवाज सुनकर जल्दी ही बोला, "हाजिर हुआ सरकार।"

बद्री ट्रे में चार गिलास शर्बत लेकर उपस्थित हुआ। रायसाहब ने उठने का उपक्रम करते हुए पुरोहित जी की ओर हाथ बढ़ाकर कहा:

"पडित जी को दो।

पुरोहित जी ने मुँह बनाते हुए कहा, "नहीं-नही, आप लीजिए। मेरी इच्छा नही है।" कहकर दोनो हाथो से सन्तोषमुद्रा प्रकट की।

"शर्बत तो है, क्या हर्ज है 'ब्राह्मणस्य मधुर प्रियः' "मीठी वस्तु

से ब्राह्मणो को कभी अरुचि कर न होनी चाहिए, नही तो इस वाक्य का कोई मूल्य ही न रहेगा।

"किसी शब्द का मूल्य व्यक्ति विशेष के कारण नही घटता-बढता, प्यास नही है, नही तो कोई हर्ज था"—पुरोहित जी ने कहा।

"अरे ! एक गिलास शर्बत के लिए प्यास की क्या आवश्यकता ? गिलास-दो-गिलास तो यो ही पान किया जा सकता है। हमारे पिता जी कभी-कभी सुनाया करते थे कि एक पडित जी सदा मौन भोजन करते थे। जब वे भोजन के लिए मना करना चाहते थे तो हाथ की अँगुलियो को छिटका कर इशारा करते थे। उन्होने बतलाया कि हाथ की अँगुलियो को फैला कर जवाब देने में पडित जी का आशय यह होता था कि एक नही पांच-पाँच। इसी के लिए खाते समय बोलना बद कर रखा था। यदि आपका भी ऐसा ही इशारा हो तो पाँच गिलास मँगवाऊँ।"

दोनो खिलखिला कर हँस पड़े—शर्बत का गिलास खाली करने में तल्लीन बाते करते रहे। बर्फ की शीतलता कुछ क्षण के लिए रसास्वादन में बाधक हो जाती थी; किन्तु वे बाधा से विचलित होने वाले न थे। रायसाहब ने गिलास मेज पर रखते हुए कहा, "पुरोहित जी, आपकी क्या सेवा करूँ ?" पान की तश्तरी आगे बढायी। पान लेते हुए पुरोहित की ने हँसकर कहा, "आपकी कृपा ही सब से बड़ी सेवा है।"

पुरोहित जी की बात खतम नही हो पाई थी कि जल्दी में रायसाहब बोल उठे, "कृपा तो आप लोगो की है, सेवा हम लोगो की।" पुरोहित जी ने गभीर स्वर में कहा, "अन्दर से मुझे एक महाराजिन ढूँढ़ने के लिए आदेश मिला था, उसी के लिए उपस्थित हुआ हूँ।"

"अच्छा, आपको अन्दर का बडा ख्याल रहता है।

पुरोहित जी ने मुस्कराते हुए कहा, "ह, ईश्वर को भी अन्दरके प्रबन्ध के लिए सचेत रहना पडता है, हम लोगो की बात ही क्या है ?" उन्होंने नौकर को आवाज दी, "बद्री ! देखो द्वार पर एक औरत

बैठी होंगी, बुला लाओ।"

पुरोहित जी के आदेशानुसार बद्री शीघ्र ही शान्ति के समीप पहुँच कर बोला, "महाराज जी आपके बुलौ है।"

शान्ति ने आश्चर्यपूर्वक नौकर की ओर देखकर कहा, "हमको ?"

"हाँ, जिनके मथवाँ आप अइली है, उहै बुलावत हउअँइ ?" बद्री ने कहा।

शान्ति बनारसी बोली अच्छी तरह समझ लेती थी; चूँकि यह नगर की भाषा नही थी, किन्तु नौकर अथवा दूधवाले आदि ग्रामीण गाँव की ही भाषा बोला करते थे, इसलिये उसे समझने मे कोई अड़चन नही हुई। पुरोहित जी का बुलावा समझकर धीरे से उठी और बद्री के साथ चल पडी। एक मजिल सीढी चढकर ऊपर पहुँच गई। पुरोहित जी शान्ति की ओर इशारा करके बोले,"रायसाहब, यही औरत है। आप जो कुछ पूछना चाहते हो पूछ ले।"

शान्ति की ओर देखते हुए रायसाहब ने कहा—"अभी तक क्या करती थी ?"

पुरोहित जी ने बतलाया, "अभी तक तो घर में ही रहती थी—अपनी गुजर होते न देख किसी तरह अपने बच्चो के पालन-पोषण के लिए नौकरी करना चाहती है। कार्य मे बडी कुशल है, अच्छे घर की बहू-बेटी है और बड़ी ईमानदार है। यह सब इसका काम बता देगा।"

"ठीक है; लेकिन आपके जान-पहचान की है न ?"

"हाँ-हाँ, हमारे पडोस मे ही मकान है और जो कुछ आप जानना चाहते हो स्वय भी पूछ सकते है।"

भौह सिकोड़ते हुए रायसाहब ने कहा—और मै क्या पूछूँगा, आप पर मुझे विश्वास है। आपने उचित ही समझ कर लाने का कष्ट किया होगा।" शान्ति की ओर देखकर वह बोले, "हाँ, हमारे यहाँ अच्छी तरह ईमानदारी से काम करना होगा। पहले महाराजिन को जो दिया जाता था, वही तुम्हे मिलेगा।"

शान्ति लज्जा से नत-मस्तक हो रायसाहब की बाते सुन रही थी। साथ ही पुरोहित जी के विश्वास दिलाने पर आभार से दबती जा रही थी। वह गम्भीर मुद्रा मे खडी थी। पुरोहित जी ने लम्बी साँस लेकर कहा, "समझ रही हो ! अच्छी तरह से काम करना होगा। भोजन-कपड़े के अलावा दस रुपया महीना मिलेगा। यही पहली महाराजिन को मिलता था।" पुरोहित जी को शान्ति की ईमानदारी पर पैसा भर की अविश्वास नही था, पर सभ्यता के नाते रायसाहब के सामने ईमानदारी से काम करने के लिए पुरोहित जी ने भी सचेत किया।

शान्ति ने काम करना स्वीकार कर लिया। उसे यदि केवल दस रुपये महीने भी मिलते, तो भी नौकरी कर लेती, बच्चो के पालन-पोषण मे कठिनाई हो रही थी, फिर भोजन-वस्त्र के अलावा दस रुपया महीना मिलेगा, यह क्या कम है ?

रायसाहब ने पुरोहित जी से कहा, "ठीक है। कल से काम करने भेजिए। आठ बजे सुबह से ७ बजे सायकाल तक काम रहता है, उसके बाद छुट्टी। महाराजिन तुम समय पर आओ और काम पूरा करके चली जाओ।"

पुरोहित जी ने मन-ही-मन प्रसन्न होते हुए शान्ति से कहा, "अच्छा, अब तुम जाओ। कल से आठ बजे आकर अच्छी तरह काम करना और समय पर चली जाना।"

शान्ति पुरोहित जी की बातें सुनकर जाना चाहती थी, किन्तु बच्चो के खाने की समस्या उसे रोक रही थी। खाली हाथ जाकर बच्चो को खाने के लिए क्या देगी। इसकी उसे विशेष चिता थी। शान्ति ने अपने जीवन मे एक पैसे की कोई वस्तु किसी से नही माँगी थी। यदि वह चाहती तो महीने-दो-महीने उधार मे भी काम चला सकती थी। अपने सिद्धान्त से लाचार होकर घर बेचने चली थी, भगवान् ने मदद की—रोजी की आशा हो गई—पर वह भी दूसरे दिन से। बडी ही विषम परिस्थिति थी। केवल शाम के लिए खाने का प्रबन्ध होना

कठिन था। शान्ति पग दो पग चली और रुक गई—साहस टूट गया। वह रायसाहब से सेर भर आटा कर्ज रूप मे चाहती थी, वह भी केवल महीने भर के लिये—कहने मे सकोच हो रहा था। वह समझती थी कि प्रथम दिन से ही इस तरह का व्यवहार किसी भी व्यक्ति को उपेक्षित बना देता है। कुछ दिन तो शिष्टता एव ईमानदारी से काम करना चाहिए। इन दोनो गुणो की मनुष्य को जीवन मे उन्नति के लिए हमेशा आवश्यकता पडती है। रायसाहब शान्ति को रुकते देख बोले, "पुरोहित जी ! देखिए महाराजिन कुछ कहना चाहती है।"

पुरोहित जी ने तुरत उठकर शान्ति से पूछा, "क्या बात है, कुछ पूछना चाहती हो ?"

शान्ति की आँखो से कुछ जल-कण भूमि पर गिर पडे—अचल से आँखो को पोछते हुए बोली, "कुछ नही, सुबह से मेरे बच्चे भूखे है, अभी उनका पेट भरना बाकी है—आज के लिए एक सेर आटा कर्ज चाहती हूँ किन्तु··· ·· "

पुरोहित जी सोच रहे थे कि नौकरी के सबध मे कुछ बात करेगी, किन्तु ऐसा न होकर दूसरी ही समस्या सामने आई। शान्ति की बात सुनकर पुरोहित जी का हृदय दया से पिघल उठा। वे सोचने लगे कि चलकर मै अपने घर से दो-एक दिन के लिए प्रबन्ध कर दूँ। इसके बाद के लिए तो भगवान् ने कुर ही दिया है। इस बात को रायसाहब से कहना वह उचित नही समझ रहे थे। कोई बडी बात होती तो ठीक भी था, किन्तु सेर-दो सेर आटे के लिए कहना उचित नही। पुरोहित जी ने शान्ति से कहा, "कोई बात नही। अभी चल कर प्रबध कर देता हूँ।"

पुरोहित जी के मुख पर दुःख के चिह्न देखकर रायसाहब को सन्देह हो गया कि यह तो अभी प्रसन्न चित्त थे महाराजिन ने कौन ऐसी बात कही जिससे पुरोहित जी की मुख-मुद्रा बदल गई। पुरोहित जी के बोलने के पहले ही रायसाहब ने प्रश्न किया, "क्या बात है पुरोहित जी ?"

पुरोहित जी ने गभीर होकर उत्तर दिया, "कुछ नही।"

"आखिर कोई बात तो होगी ही, आपको बतलाने मे सकोच क्यो ? महाराजिन रो क्यो रही है ?"

पुरोहित जी थोडा हिचकिचाये, फिर बोले, "कुछ नही, आज दिन भर से इसके बच्चे भूखे है। एक सेर आटा कर्ज रूप म चाहती है। महीना पाने पर दे देगी, किन्तु कहने का साहस नही कर रही थी। और खाली हाथ जाने मे भो असमर्थ थी।"

"अच्छा, तो आपको भी कहने मे सकोच हो गया ! आप तो हमारे यहा के कायदे को जानते है। फिर सदेह करने की क्या जरूरत थी ? अन्दर से दिला दीजिए।" बद्री नौकर को आवाज लगायी, वह दौडकर हाजिर हुआ। रायसाहब बोले, "देखो, इस औरत को सेर-दो सेर आटा दिला दो।"

शान्ति को साथ लेकर बद्री भडार की ओर चल पडा—दो सेर आटा, एक सेर आलू, नमक पाकर मन-ही-मन शान्ति आभार से दबी जा रही थी। अपने अचल मे ही सारी चोजे बॉध कर बैठक से होकर घर जाने के लिए निकली। रायसाहब ने पूछा, "सब मिल गया ?"

शान्ति ने सपूर्ण वस्तुएँ मिल जाने का आशय प्रकट किया। पुरोहित जी ने भी कहा—"हॉ, मिल गया।"

शान्ति अपने घर की ओर चल दी।

: १३ :

शान्ति के चले जाने के बाद भी पुरोहित जी और रायसाहब बैठक में ही बैठे रहे। लम्बी सॉस लेते हुए रायसाहब ने कहा, "पुरोहित जी, संसार की गति बडी विचित्र हे—कोई रो रहा है, कोई गा रहा है, और कोई कुछ कर रहा है। समार का प्रत्येक प्राणी अपने-अपने सुख-दुख में भूले है। एक दूसरे से सहयोग नही करता। बड़ा ही घनिष्ट हुआ तो दो-चार मिनट के लिए सहानुभूति प्रकट कर देने है, फिर ज्यों-का-

त्यो। इसका क्या कारण है ? हम सुख मे दुःख को भूल जाते है। स्वय मै ही लम्बी-लम्बी बाते करता हूँ, आपको घटे-दो घटे वेदान्त के सबध मे परेशान करता हूँ, परन्तु इस विवाद का मुझ पर कोई असर नही पडता। दूसरे के लिए एक क्षण भी कष्ट सहने को तैयार नही हूँ। कभी-कभी ससार की गतिविधि पर मुझे क्षोभ अवश्य होता है, किन्तु मै स्वय क्षोभ उत्पन्न करने वाले कार्य करने से दूर नही हूँ। साथ ही अपने कर्तव्य की ओर भी ध्यान नही देता, सारा ज्ञान इस मायाजाल मे चकरा जाता है।"

पुरोहित जी ने कहा, "अभी आपने केवल नेत्रो से ही जगत-प्रपच के कार्यो का अवलोकन किया है, ससार की गति-विधि देखने के लिए इन चर्म-चक्षुओ से नही, ज्ञान-चक्षुओ से काम लेना पडता हे। यह स्वय भगवत्-कृपा तथा सद्गुरुओ से प्राप्त होते है, जो ससार को अनित्य मान कर आत्मा को ही ब्रह्म मानते है—'सर्व खल्विद ब्रह्म' अर्थात् सम्पूर्ण ससार ही ब्रह्म का स्वरूप है। ससार की माया मे पडकर एक-दूसरे का कोई सहयोग करने के लिए तैयार नही होता। यदि ससार की नश्वरता का सही ज्ञान हो जाय तो सारी कठिनाइयो से मुक्ति मिल सकती है, परन्तु ऐसा होना ही कठिन है।"

'पुरोहित जी, भगवत्-कृपा से ही सब कुछ होता है तो क्या ईश्वर चाहता है कि छोटे-बडे, ऊँच-नीच तथा विद्वान्-मूर्ख आदि विषमताएँ हो ?' रायसाहब ने कहा।

पुरोहित जी ने हँसते हुए कहा, "नही-नही, ईश्वर ऊँच-नीच, छोटा-बडा कुछ नही चाहता। सभी लोग अपने-अपने कर्म के अनुसार फल भोगते है ?"

रायसाहब और पुरोहित जी की बाते इस विषय को छोड कर वेदान्त के सबध मे होने लगी, परन्तु थी केवल कोरी बाते ही-पुरोहित जी प्रतिदिन वेदान्त की ही बातें किया करते है और कथा कहने के समय में वेदान्त को भुलाकर दान-दक्षिणा के महत्त्व को खास तौर से

बतलाते है--शान्ति के दान-विरोध को पुरोहित जी ने भी कुछ अश तक सही मान लिया था। इस पर उन्हे विश्वास हो गया था कि बडे आदमी छोटो को आगे बढने का अवसर नही देते, बल्कि अकर्मण्य बनाने के लिए थोडी-बहुत महायता कर देते है। अभी तक पुरोहित जी के सामने दान देनेवाले सबसे बडे धर्मात्मा तथा परोपकारी थे। अब उतने ही देश के उत्थान मे अवरोधक। उन्होने समाज मे दान-वृत्ति से जीवन व्यतीत करनेवालो की परिस्थितियो का अनुभव तथा मनन किया। अन्तत इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि शान्ति का कहना ठीक था। उन्हे भी अपनी जीवन-वृत्ति पर क्षोभ हो रहा था, पर कर क्या सकते थे ? कोई आधार न था। एक मात्र दान-वृत्ति ही जीवन का सहारा थी।

रायसाहब सोच रहे थे—इस औरत की पुरोहित जी ने बडी प्रशसा की। क्या सचमुच ही यह आत्म-सम्मानवाली मालूम होती है ? वह शान्ति के सम्बन्ध मे पुरोहित जी से कुछ और जानना चाहते थे। अत बोले, "पुरोहित जी, आपने इस महाराजिन के विषय मे जो बातें बतलाईं, उनसे मै सहमत हूँ।"

पुरोहित जी ने गम्भीर स्वर से कहा, "हाँ, रायसाहब मैंने जो कहा है वह सत्य ही है—परिस्थिति नौकरी के लिए बाध्य कर देती है। आज तीन दिन से स्वय भूखी रहकर बच्चो को खिलाया, किन्तु आज दिन भर से बच्चे भी भूखे हैं, वापस आकर उन्हे खाना देने का आश्वासन देकर आई थी—खाली हाथ लौटकर क्या देती ? सारी सम्पत्ति बिक चुकी मकान बेचने के लिए निकली थी, उसमे भी सफलता नही मिली। उसे बाध्य होकर नौकरी के लिए मजबूर होना पडा।"

रायसाहब ने मुस्कराकर कहा, "मकान बेचकर कितने दिन गुजर करती ?"

पुरोहित जी ने कहा, "आप ठीक कहते है, लेकिन जब तक तृण मात्र का सहारा रहता है, तब तक कुछ सन्तोष रहता है—भविष्य भले ही

अन्धकारमय हो । कुछ दिन खाने के लिए मकान के रुपये होते ही, बाद मे भगवान् का भरोसा था।"

'हाँ, बडी कुशल है । उसने भीख नही माँगी है, कर्ज माँगा है और अपनी तनख्वाह् से आटा चुकाने का आश्वासन भी दिया है । एक सेर आटा तो योही सदावर्त्त मे मिल जाता, उसने बेकार ही कर्ज माँगने का कष्ट किया।"

"नही, रायसाहब ! उसने बेकार माँगने का कष्ट नही किया। उसका सिद्धान्त बहुत उत्तम है—एक बार मुफ्त की रोटी खा लेने पर फिर परिश्रम नही किया जाता । ससार मे मनुष्य भोजन मिलने के लिये ही तरह-तरह के कष्ट उठाते है, किन्तु रोटी की चिन्ता दूर हो जाने पर परिश्रम करने के लिए जी नही चाहता । दरवाजे पर ही चलकर देख ले—बुढे' लँगडे तथा गरीब कम ही है, हट्टे-कट्टे जवान काम करने-योग्य व्यक्ति अधिक हैं । ये सुबह से शाम तक आध सेर आटे के लिए बैठे रहते है । यदि काम करते तो स्वय खाते और अपने बाल-बच्चो को भी खिलाते । पर ऐसा न करके बीवी-बच्चे-सहित आनन्द मे गप्प लगाते, गाना गाते, हल्ला मचाते, जो मन-भाता वही करते बैठे रहते है । और सदावर्त्त बटते समय दो-तीन बार मार-झपट कर दूसरो के हिस्से का भी अन्न लेकर उसे बेच कर गाँजे का दम लगाते है । बेचारे गरीब बुड्ढे, अन्धे सदावर्त्त का भी अन्न इन कामचोरों की वजह से नही लेने पाते । यदि इन्हे इस तरह मुफ्त मे खाने का साधन सुलभ न होता तो अपने पेट भरने के लिए कोई-न-कोई जरिया निकालकर काम करते । इसमे देश मे भिखमगो की सख्या कम होती और देश की स्थिति इतनी भयावह न होती । शायद अन्य देशो की अपेक्षा भारत मे भीख माँगनेवाले अधिक है और यही कारण है कि हमारा देश अपने पैरो खडे होने मे असमर्थ है । सभी वस्तुओ के लिए दूसरे देशो की सहायता चाहता रहता है । दूसरी वस्तुओ को तो छोडिए भारत कृषि-प्रधान देश माना जाता है; परन्तु वह अपने खाने के लिए भी अन्न पैदा नही कर

सकता। स्वय पेट भरने के लिए ही दूसरे की सहायता चाहता है। फिर भला कैसे उन्नति हो सकती है ? यह तभी सभव हो सकता है, जब यहाँ के जवानो को भीख मिलना बन्द हो जाय अन्यथा देश का सुधार होना सभव नही।"

रायसाहब पुरोहित जी की बाते सुनते हुए आश्चर्य कर रहे थे। उन्होने शान्ति की बात चलायी थी और यहाँ यह एक दूसरी ही समस्या सामने रख रहे थे। रायसाहब बोले 'पुरोहित जी, आज आपको क्या हो गया है ? प्रतिदिन दान-महिमा के पुल बाँधते थे—भिन्न-भिन्न वस्तुओ के दान मे क्या-क्या पुण्य होता है इसका विस्तृत वर्णन होता था। आज इतना अन्तर ! आकाश-पाताल का भेद ! क्या आपकी दृष्टि मे दान देना पाप है ? यदि बडे लोग दान देकर छोटो को कर्तव्य-हीन बनाते है तो उन्हे न बनना चाहिए। वे दान के लोभ मे पडकर अपने रास्ते से क्यो हटते है ?'

"यह ठीक है, किन्तु क्षणिक सुविधा को देखने से लोगो के विचार मे परिवर्तन हो जाता है। मुफ्त मे मिली हुई वस्तु को छोडकर काम करने के लिए अपनी गर्दन कौन फँसाना चाहेगा ?"

'तो इसके माने यह है कि दान देनेवाले ही पाप करते है ?"

पुरोहित जी ने हँसते हुए कहा, "नही-नही, पाप नही। धनवान् का तो यह कर्त्तव्य ही है कि गरीबो की मदद करे। यदि मुफ्त मे ही दीनो को देते है तो इससे बढकर और क्या हो सकता है ! किन्तु यदि युवक भिखमगो के लिए काम करने का साधन तैयार कर दिया जाय तो मुफ्त दान की अपेक्षा देश के हित के लिए अधिक अच्छा हो। गरीबो सहायता के साथ-साथ राष्ट्र की भी सेवा हो।"

पुरोहित जी चलना चाहते थे। बाते भी करीब-करीब समाप्ति पर ही थी और रायसाहब को भी दर्शन के लिए जाने मे विलम्ब हो रहा था। पुरोहित जी ने कहा, "आपको दर्शन के लिए देर हो रही है। आज्ञा हो तो अब मै चलूँ।"

रायसाहब ने मुस्कराते हुए कहा, "नही, विलम्ब की कोई बात नही है" फिर घडी की ओर देखकर बोले अच्छा, साढे आठ बज गये ! अच्छा तो फिर कल तो दर्शन होगे ही। लेकिन मुझे भी तो चलना है। जरा रुकिए, मैं भी साथ ही चलूँगा।"

पुरोहित जी थोडी देर के लिए ठहर गये और रायसाहब अपनी छडी ले कर तैयार हो गये। दोनो बैठक से निकले ही थे कि ठाकुर सग्रामसिह सामने दिखाई दिये। ठाकुर साहब बोले, "आज पुरोहित जी के साथ कहाँ की तैयारी है ?"

रायसाहब ने कहा, "कही की नही। आइए, विराजिए। आज आपने कई दिनो बाद पधारने का कष्ट किया।"

ठाकुर साहब ने गम्भीर स्वर मे कहा, "हाँ, इस वर्ष विजयदशमी महोत्सव मनाना चाहता हूँ, इसलिए सारा समय उसी के प्रबन्ध मे बीत जाता है। अभी तो दो माह बाकी है, किन्तु तैयारी बहुत करनी पडती है; दिन जाते देर नही लगती। मार्ग मे मुझे सन्देह हो रहा था कि आप दर्शन करके वापस न लौटे होगे, किन्तु आप जल्दी ही वापस आ गये।"

"अभी दर्शन करने गया ही कहा हूँ, पुरोहित जी आ गये, इस कारण जा सका। तैयार ही था। पुरोहित जी ने आज दान व बेकारी के विषय मे बाते छेड दी थी इसी विवाद मे कुछ देर हो गई।"

"रायसाहब, धर्म के ठेकेदारो की बात क्या कहते है ? वे क्षण भर में दुनिया को पलट सकते है, स्वय सृष्टिकर्त्ता भी इन्ही ठेकेदारों के इशारे से अपना विधान बनाता है दूसरो की तो कोई बात ही नही ? आपको विलम्ब हो रहा है, ऐसा न हो कि धर्म के ठेकेदारो से मुक्ति पाकर भी दर्शन करने से वञ्चित रह जायँ और व्यर्थ की बकवास मे समय नष्ट हो।"

ठाकुर साहब को पुरोहित जी से सकोच हो रहा था, क्योकि उन्हे इस बात का पता चल गया था कि शान्ति के साथ किये गये नीचतापूर्ण

विलम्ब हो गया है ।"

ठकुर साहब ने कहा, "रायसाहब, दो दिन का दर्शन क्या एक दिन में नहीं हो सकता ?"

रायसाहब ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "क्यो नहीं, जिस तरह दो दिन का भोजन एक दिन मे किया जा सकता है, वैसे ही दर्शन मे भी हो सकता है ।" उन्होने पान की तश्तरी आगे बढायी ।

पान खाने के बाद ठाकुर साहब को समझ लेना चाहिए था कि अब जल्दी ही चलना चाहिए, किन्तु वह घर से नाराज होकर आए थे । उन्हे जल्दी उठने की कैसे सूझती ? वह दो-तीन घटे का समय काटने के लिए निकले थे । रायसाहब को भी दर्शन के लिए जल्दी थी, इसलिए वे ठाकुर साहब को बिदा करने के प्रयत्न मे थे, कई बार पान की तश्तरी आगे बढा चुके, पर कोई उपाय न चला । पुरोहित जी से न रहा गया । पुन चलने के लिए तैयार हुए । ठाकुर साहब ने देखा कि अब इन लोगो की इच्छा जाने की है । अत वे भी चलने के लिए प्रस्तुत हुए । ठाकुर साहब मोटर में सवार हुए, पुरोहित जी तथा रायसाहब दर्शन के लिए चल दिये ।

: १४ :

शान्ति एक घण्टे मे वापस लौट आने की बात सोचकर गई थी, किन्तु चार घण्टे से अधिक बीत गये । वह छटपटा रही थी । जीविका का प्रश्न था, इसलिए बिना बात तय हुए वह लौट भी नही सकती थी । बच्चो के भविष्य के लिए एक सहारा ढूँढकर उसे लौटना था । बडी आशा लेकर मकान बेचने गई थी, किन्तु भगवान् की महिमा अपार है कि घर बिकने से बच गया और पेट का भी प्रबन्ध हो गया । वह सोच रही थी, पहुँचते ही बच्चो को रोटियाँ बनाकर खिलाऊँगी और भर-पेट भोजन कर उनके मुरझाये हुए चेहरे खिल उठेगे ।

शान्ति रायसाहब की कार्यकुशलता के विषय में सोच रही थी कि अकेले

अपने बुद्धि-बल से सैंकडो आदमियो की रोजी चलाते है । काम करने वालो को तनख्वाह देते है—भिखमगो को अन्नदान देते है—कई मन गल्ला इस अकाल के समय मे भी रोज दिया जाता है । न जाने कहाँ से इतना गल्ला आता है ? रायसाहब के लिए सरकार से छूट होगी, तभी तो कण्ट्रोल के समय मे इतना गल्ला इकट्ठा रखते है, नही तो राशन के गल्ले से एक दिन भी पूरा न पडे, एक मेहमान के लिए भी कण्ट्रोल दफ्तर की शरण लेनी पडती है । बडे-बडे आदमी अन्न के लिए परेशान रहते है । कल पडोस की नाइन बतला रही थी कि एक दिन सेठ किशोरीलाल जी के घर कई मेहमान आगए, सब लोग खाना खाचुके थे, घर मे पर्याप्त गल्ला न था । राशन की दूकान भी बन्द थी, इधर-उधर की दूकानो मे तलाश किया पर कुछ न मिला । कभी-कभी बगल की दूकानो से एक सेर आटा डेढ-दो रुपये सेर के भाव से मिल जाता था, किन्तु उस दिन वह भी न मिला । पडोसियो के यहाँ उधार मिलना तो असभव ही था । अत नाश्ते और दूध से ही काम चलाना पडा । अनाज की इतनी कठिनता होते हुए भी रायसाहब को मुझे आटा दिलाने मे थोडी भी हिचकिचाहट नही हुई ।

× × ×

माँ के चले जाने पर एक घण्टे तक खुशी से गिरीश तथा श्याम खेलते रहे, इसके बाद खेलना बन्द कर दिया, और दौडकर अन्दर गये । उन्हे माँ के बाहर जाने का स्मरण न था । श्याम माँ को पुकारता हुआ रोने लगा । गिरीश ने समझाया, "माँ कह गई है अभी आती हूँ तो आती होगी ।" श्याम थोडी देर चुप रहा, फिर रोने लगा । गिरीश स्वय भी भूखा था—वह श्याम को संभालने मे असमर्थ हो रहा था । श्याम बार-बार बाहर जाने के लिए हठ कर रहा था—आखिर गिरीश श्याम को रोक न सका और स्वत. भी श्याम के साथ बाहर निकल पडा । द्वार पर खडे होकर दोनो भाई माँ की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

समय साढे सात से अधिक हो गया । दोनो भाई दिन भर से

भूखे थे मॉ एक घण्टे के लिए गई थी और अब तक नही लौटी —घबरा रहे थे। एक तो बच्चे, दूसरे भूख मे व्याकुल। एक सयाना आदमी भी भूख से व्याकुल होकर घबडा जाता है, और किसी काम के करने मे उसका जी नही लगता, फिर ये तो बच्चे ही थे। शान्ति अपने जाने का स्थान तो बता नही गई थी। यदि बता भी जाती, तो बच्चो के लिए पाना मुश्किल था। न जाने कहॉ-कहॉ भटकी होगी।

श्याम के ऊधम मचाने पर गिरीश उस ओर चल पडा जिस ओर मॉ को जाते हुए देखा था। पीछे-पीछे नाचता, कूदता और रोता हुआ श्याम भी चल रहा था, कही रुकता, कही बैठता और कही लेट जाता। गिरीश खीझकर कई चाटे भी लगा चुका था, किन्तु इसका उलटा ही प्रभाव पडा, वह और तेजी से रोने लगा। गिरीश दस हाथ आगे था और श्याम पीछे। कोई स्त्री दूर से दिखाई देती तो वे मॉ समझ कर लिपटने के लिए दौड पडते थे। किन्तु समीप पहुँचने पर निराश होना पड़ता। श्याम तो कभी-कभी लिपट जाने से भी न चूकता था। बहुत-सी स्त्रियाँ श्याम को 'झिडककर आगे बढ जाती किन्तु कुछ सहृदता भी दिखलाती थी। गोदी मे उठाकर अचल से मुख पोछ देती और कहती कि तुम घर लौट जाओ मॉ आ रही है।

दोनो भाई सिसक-सिसक कर रो रहे थे। एक चबूतरे की सीडी से सटकर बेहोश-सा गिरीश खडा हो गया और श्याम आगे बढ गया। श्याम को आगे बढते गिरीश ने नही देखा, वह ठीक रास्ते से न जाकर भटक गया।

× × ×

शान्ति अपनी धुन मे तेजी से आगे बढती जा रही थी, उसे जल्दी भोजन बनाकर बच्चो को खिलाना था। अधिक देर लगने पर लडको के रोने की चिन्ता थी। वैसे तो गिरीश अवस्थानुकूल काफी धैर्यवान् था, वह आपत्तियो का मुकाबला करने मे साहस नही छोडता था, पर श्याम की शैतानी से वह भी तग आ जाता था। आये दिन बच्चो का

झगडा होता ही रहता था। शान्ति लाख समझाती, पर एक न मानते। दिन भर मे एक बार झटापटी कर ही बैठते थे—शान्ति को लडको से अलग हुए चार घण्टे से अधिक हो गये थे, न जाने कितनी बार लडे होगे। शान्ति को इसकी विशेष चिन्ता थी कि कही वे लड-झगडकर घर से बाहर न निकल पडे हो।

शान्ति ठठेरी बाजार से अपने मुहल्ले मे पहुँच चुकी थी, मकान थोडी ही दूर था। सेठ की दूकान पर सौदा खरीदनेवालो की भीड लगी थी, सारी गली रुकी थी, एक कोने से निकलकर आगे बढी—सीढी से सटा हुआ गिरीश सिसक रहा था, आँखे बद थी—शान्ति एकाएक रुकी और धारीदार फटी कमीज देख कर बोली

"गिरीश !" वह दौडकर लिपट गया और रोने लगा। शान्ति उसे शान्त करने का प्रयत्न कर रही थी, और उसने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, "गिरीश, रोओ मत। चलो, घर अभी खाना बनाकर दूगी। तुम श्याम को छोड अकेले क्यो चले आए ? मै कह गई थी न कि अभी आती हूँ।"

रोते हुए गिरीश ने कहा, "तुमने तो जल्दी आने को कहा था, पर शाम होने पर भी नही लौटी। श्याम बहुत रोया, बडा उपद्रव किया और घर से चल दिया। मैने कई बार रोका भी पर मुझे मारने को तैयार था मुझे भी डर लगने लगा, तब तुम्हे खोजने के लिए चला" वह इधर-उधर देखने लगा।

आश्चर्यपूर्वक शान्ति ने पूछा, "श्याम भी तुम्हारे साथ आया था ?"

डरा हुआ गिरीश दबी जबान से बोला, "हाँ, वहाँ रोता हुआ पडा था।"

शान्ति ने 'श्याम श्याम' कह कर दो-तीन बार पुकारा, पर श्याम का कही पता न था। श्याम अपनी माँ को ढूढता हुआ भटक रहा था और माँ श्याम के लिए व्याकुल थी। आगे-पीछे की गलियो में कुछ दूर तक शान्ति ने देखा, फिर सोचा शायद घर की ओर लौट गया हो,

गिरीश को साथ लेकर घर को चल पडी। कुछ ही मिनट मे घर पहुँच गई। द्वार पर नाइन को खडी देखकर वह सोच रही थी—श्याम घर मे ही आ गया है, इसीलिए नाइन मेरी प्रतीक्षा मे खडी है। किन्तु वास्तव मे वह श्याम के घर मे होने की वजह से नही, बल्कि शान्ति का घर सुनसान देखकर खडी सोच रही थी कि क्या शान्ति मकान छोड कर कही दूसरी जगह चली गई ? पर मकान छोडने की चर्चा तो उसने कभी नही की। यदि कही जाती तो उसे अवश्य बता जाती। शान्ति इस तरह कही घूमने भी नही जाती थी, फिर बच्चे भी घर मे नही थे। आखिर चली कहाँ गई ?

शान्ति के लिए थोडा बहुत नाईन का ही सहारा था। दिन मे वह चौधरी साहब के यहाँ रहती थी। सन्ध्या समय सात बजे लौट कर आती और घटे-दो घटे अपने सुख-दुख की बाते शान्ति से करके घर चली जाती थी। नाइन अपने परिवार से अलग रहती थी। उसके लडके, पतोहू, नाती आदि सब थे, पर उनसे उसे कोई मतलब न था। कई वर्षों से शान्ति की बगल मे रहती थी। जब-तब आवश्यकता पडने पर शान्ति के बच्चो की देखभाल करती थी। जाते समय शान्ति ने नाइन की तलाश की थी, पर सात बजे के पहले वह घर मे कैसे मिल सकती थी ? फिर चौधरी साहब के यहाँ दो दिन से महमान आये हुए थे, इसलिए आने में और भी देर हो गई। लौटते ही वह शान्ति के घर गई और उसे सुनसान देख चिन्तित खडी थी। इसी बीच शान्ति घर पहुँची। वह श्याम के बारे मे कुछ पूछना ही चाहती थी कि नाइन पूछ बैठी, "श्याम कहाँ है ?"

शान्ति को नाइन से इस तरह के प्रश्न की आशा न थी। वह सोच रही थी—श्याम घर मे अकेला है, इसलिए उसे छोडकर नाइन घर नही गई, मेरे इन्तजार मे खडी है, पर बात ऐसा न थी। नाइन के इस वाक्य को सुनकर शान्ति के होश उड गए—वह मूर्छित होकर गिर पडी, अचल खुल गया—सारा आटा बिखर गया और आलू इधर-उधर लुढक

गये। गिरीश रो रहा ा।

शान्ति की हालत देख नाइन समझ गई कि श्याम अवश्य ही कही भटक गया है। वह झट शान्ति के पास पहुँची, उसे उठाया और झाड-पोछ कर हवा करने लगी। साथ ही वह गिरीश को शान्त करने की कोशिश कर रही थी। शान्ति को दुखित देखकर वह स्वय दुखी थी— रह-रहकर शान्ति व्याकुल हो जाती थी और उसके मुख से श्याम निकल पडता था।

नाइन शान्ति के इस असहनीय दुख को दूर करने मे असमर्थ थी। परन्तु उसकी मदद करने मे वह कोई भी कसर न उठा रखना चाहती थी। शान्ति की मदद श्याम के ढूँढने से ही हो सकती थी, पर नाइन श्याम को कहाँ ढूँढती ? बडी विषम परिस्थिति थी। फिर भी नाइन ने हिम्मत न हारी वह शान्ति की सहायता के लिए चल पडी।

शान्ति की दशा देख वह स्वय पागल-सी हो रही थी।

: १५ :

ठाकुर साहब की मोटर चौक मे पहुँची। बरसात का समय था। बादल चारो ओर से घिर आये थे, टप-टप बूँदे पडने लगी। ठाकुर साहब ने ड्राइवर से पूछा, "टकी मे कितना पैट्रोल होगा ?"

"यही, हुजूर, गैलन-दो गैलन।"

"बस ?"

"हाँ, हुजूर। टकी मे तो पाँच गैलन आता है। अलग से पीपे मे रख लेता हूँ। लेकिन आज कहीं दूर जाना नहीं था, इसलिए नही रखा है।"

"क्यो ? जाना क्यो नही है ? अभी इलाहाबाद चलना है।"

"हुजूर, हमको नही बताया गया था। कोठी पर भी पीपे मे पैट्रोल कम होगा। आज सुबह बहू साहिबा को जगल घुमाने चला गया था उसी में सब खतम हो चुका है। थोडा-सा बचा होगा।"

ठाकुर साहब सुबह घूमने की बात सुनते ही गर्म हो गए और बोले, "बिना हमसे पूछे इस तरह किसी को घुमाने न ले जाया करो। अभी हमे इलाहाबाद जरूरी काम से चलना था,—पैट्रोल ही नही है। मिल भी नही सकता ?"

"शायद मिल जाय। आजकल पैट्रोल—बाबू की तबियत खराब है, इसलिए वह नौ बजे घर चले जाते है। अब तो साढे नौ बजते होगे।"

घडी की ओर देखकर ठाकुरसाहब ने कहा, "नौ बज कर बीस है। सोचते कि न मालूम कब कैसा जरूरी काम आजाय। चार-छ गैलन पैट्रोल पडा रहने दें। जो आया फूँका क्या चिन्ता है ?"

ड्राइवर ठाकुर साहब की बाते सुनता हुआ चुपचाप सोच रहा था, अभी इलाहाबाद जाने की कौन-सी मुसीबत आ पडी। मैने अभी खाना नही खाया और घर मे यह भी नही बतलाया कि मै ठाकुर साहब के यहाँ जा रहा हूँ, लोग इन्तजार मे बैठे होगे।

खाना खाने के लिए छुट्टी माँगने पर शायद और नाराज हो जायँ। इसी चिन्ता मे पडा था, तब तक मोटर मैदागिन चौमुहानी पहुँच कर टकराते-टकराते बची। ठाकुर साहब का दिल धडकने लगा, ड्राइवर काँप रहा था। वह मोटर को एक किनारे रोककर और इजन का आवरण हटाकर देखने लगा।

ठाकुर साहब गुस्से मे आकर बोले—"क्या बात है ? आँख मूँद कर चलाते हो। बे मौत मरे थे।"

इजन को ढँकते हुए ड्राइवर ने कहा, "हुजूर, ब्रेक टूट गया और कुछ नही हुआ।"

आश्चर्य पूर्वक—"ब्रेक टूट गया। भगवान् ने ही बचाया। अब क्या होगा ?"

ड्राइवर ने मोटर पर बैठते हुए कहा, "बिना ब्रेक की गाडी में इलाहाबाद चलना ठीक नही। बनने पर ही चल सकते है। आज तो बन नही सकता कल ही बनेगा।"

घर्र-घर्र दो-तीन आवाजे हुई, और मोटर चलने लगी। थोडी देर मे ठाकुर साहब कवीरचौरा होकर अपनी कोठी पर पहुँच गए और मोटर से उतरकर ड्राइवर से कहा, "कल सबसे पहले ब्रेक बनवा लेना" ड्राइवर सलाम कर अपने घर की ओर चला गया।

× × ×

प्रभावती जयपुर के शाही खानदान की बेटी थी। उसे आधुनिक ढग मे एम० ए० तक की शिक्षा भी मिली थी। सर्व प्रथम हिन्दू-विश्व-विद्यालय में ठाकुर साहब से परिचय हुआ था। वह सोच रही थी कि उस समय की बातो को क्या ये भूल गए होगे? नही, ऐसा नही हो सकता। जिसके लिए सामाजिक नियमो का बधन तोडा गया, जाति-परम्परा को तिलाजलि देकर प्रेम को प्रधानता दी गई, क्या ठाकुर साहब उसका तिरस्कार करने का साहस कर सकेंगे? पिता जी ने राज-घराने मे मेरा विवाह तय किया था, किन्तु मैंने स्वय प्रेम-पाश मे बँधकर समाज की परम्परा का ध्यान न रख, पिता जी के विरुद्ध कदम उठाया था। मेरी वजह से पिता जी को समाज मे अपमानित होना पडा। क्या इस ओर ठाकुर साहब का ध्यान न जायगा? उन्हे भी तरह-तरह की बाधाएँ पहुँचाई गई थी, उनके पिता ने घर से निकालने की धमकी दी थी। एक दिन क्लास मे प्रोफेसर साहब बिहारी के दोहो को पढ़ा रहे थे—काल्पनिक नायक-नायिका के द्वारा अर्थ समझा रहे थे। उस दिन उनके प्रेम की भावना कितनी तीव्र हो उठी थी पाठ समाप्त होने पर ठाकुर साहब ने कहा था, "ससार की सभी वस्तुओ को छोडकर मै केवल तुम्हे चाहता हूँ मेरे जीवन के लिए तुम्ही सर्वस्व हो। क्या वह सब केवल वासना थी?"

पुरुष अपने स्वार्थ में अन्धा होकर नारी की ओर झुकता है, किन्तु नारी उसकी स्वार्थपरता को न समझकर समर्पण कर देती है। ओह! नर-नारी के पवित्र प्रेम मे यह प्रवचना समाज के लिए कितनी अहितकर है! स्वार्थ मे उचित-अनुचित का ज्ञान नष्ट हो जाता है।

इसीलिए स्वार्थपरता मानव-जीवन की उन्नति में बाधक है।

× × ×

सीढी चढते हुए ठाकुर साहब सोच रहे थे, "आज मैंने ही गलती की। नही, गलती नही, ससार मे आने का यही तो सुख है। यदि किसी सुन्दर रमणी का हमने सम्मान किया, तो क्या अपराध! चिन्ता करना व्यर्थ है। लेकिन प्रभावती···

प्रभावती क्या मुझे बुरा समझती है? यदि नही तो पीछे क्यो पडी है? उसकी भी भावनाएँ बदल गई हैं। शान्ति के चले जाने के बाद ज़िद करके बात करने का आखिर क्या मतलब था? बार-बार मना करने पर भी प्रतिवाद करने पर तुली हुई थी। वही प्रभावती जो मेरे कडी निगाह होने पर सकोच से दब जाती थी, सामना करने को तैयार है। कष्टो से घिरा होने पर भी जिससे मिलने मे मुझे शान्ति मिलती थी, उसी के स्मरण से ज्वाला उत्पन्न होती है, शरीर जलने लगता है—इतनी विषमता!

ठाकुर साहब प्रभावती से कही अपनी बातो का स्मरण कर रहे थे—उस सुहावनी रात को चारुचन्द्र खेल रहा था। आकाश मे तारा टिमटिमा रहे थे। उन्ही को साक्ष्य देकर मैंने कहा था—ससार के सम्पूर्ण ऐश्वर्य को छोडकर मै केवल तुम्हे चाहता हूँ। सामाजिक अपमान सहन कर तुम्हारे साथ बन मे भी रहने को तैयार हूँ। उस दिन प्रभावती के सौन्दर्य के समक्ष मेरी दृष्टि मे कोई भी युवती सुन्दरी न थी और वर्ण की कमनीयता मन को मोह रही थी।

मेरे पिता जी ने कालेज मे पढी हुई लडकियो के साथ विवाह करने के लिए मना किया था, किन्तु प्रभावती के सौन्दर्य एव सुशीलता को देखकर उन्हे भी अनुमति देनी पडी। यदि प्रभावती ने नारी-मर्यादा को उल्लघन करके समाज में प्रचलित रूढियो का तिरस्कार न किया होता तो मेरे साथ विवाह होना सम्भव न था। किन्तु प्रभावती का वह देवी स्वरूप बदल कर डाकिनी मे परिवर्तित हो गया है। नारी,

अपने प्रिय के लिए सभी वस्तुओ को त्याग कर देवी बन उसे आनन्दित करती है, किन्तु क्षण भर मे ही डाकिनी रूप धारण कर उसके सारे सुख को नष्ट करने मे भी सफल हो सकती है ? नारी जितनी सुखकर है, उतनी ही दुखद भी।

प्रभावती ने जो कुछ भी त्याग किया है, वह मेरे लिए नही, बल्कि अपने ही स्वार्थ-साधन के लिए। यदि उसका कोई स्वार्थ न होता तो वह एक महाराजा के साथ तय हुई शादी को अस्वीकार कर मुझ साधारण रईस के साथ विवाह करने को तैयार न होती। महारानी बनकर ससार के सम्पूर्ण सुखो के भोगने की इच्छा किसे नही होती ? ससार मे ऐसा कोई पैदा नही हुआ, जो अपनी हानि कर दूसरे का उपकार करे। यदि वस्तुत ऐसा कोई है तो वह ससार के महापुरुषो में में गिना जायगा। किन्तु कहाँ मुडली पहाडी कहाँ सुमेर पर्वत ! इन दोनों की कैसे समता हो सकती है ! एक ओर प्रभावती का स्वार्थमय जीवन, दूसरी ओर परोपकार का सच्चा आदर्श। स्वार्थ के साथ परोपकार का एकत्व सर्वथा असम्भव है।

पति के समक्ष धृष्टता करना ही नारी का सबसे बडा अपराध है। स्त्री के सभी अपराधो को पुरुष क्षमा कर सकता है, किन्तु अवज्ञा को नही। आज प्रभावती ने ठाकुर साहब से निडर होकर बाते की थी। ठाकुर साहब स्वय गलत रास्ते पर थ, इसलिए बात इतनी बढ गयी थी। अन्यथा वह एक शब्द भी इच्छा के विरुद्ध नही बोलती। प्रभावती ठाकुर साहब के चले जाने के बाद ज्यो-की-त्यो खडी रही। ठाकुर साहब के प्रवेश करते समय थोडा सहमी।

ठाकुर साहब ने देखा वह एक घण्टे पहले, रायसाहब के यहाँ जाने के पूर्व जिस रूप में खड़ी थी, अब भी उसी रूप में है। मन ही मन कुढ़ रहे थे—प्रभावती की इस मायावी चाल से क्रोध और भी बढ गया। पर चुपचाप कपडे उतारकर खूँटी पर टाँगे और पखा चलाकर, आराम कुर्सी पर लेट गए।

प्रभावती अपने अपराध के लिए क्षमादान चाहती थी, किन्तु ठाकुर साहब से कहने का साहस न होता था। वह अन्दर गई और थाल लेकर वापस आई। सामने मेज पर रखती हुई बोली, "मै अपनी गलती के लिए क्षमा चाहती हूँ।"

"मुझ से क्षमा! तुम्हारे लिए मृत्यु-दण्ड ही क्षमा है।" ठाकुर साहब ने कहा।

प्रभावती सुनकर सन्न रह गई। उसे यह आशा न थी कि ठाकुर साहब इतने अधिक नाराज हो जायेगे। विनय के साथ बोली, "आपका आदेश मुझे सहर्ष स्वीकार है, किन्तु भोजन करने के लिए अन्तिम प्रार्थना है।"

ठाकुर साहब प्रभावती की प्रार्थना स्वीकार कर भोजन करने लगे।

: १६ :

शान्ति को कुछ देर बाद होश आया—नाइन हवा कर रही थी, गिरीश बगल मे सिसक-सिसक कर रो रहा था। शान्ति बोलना चाहती थी, किन्तु खुश्की आ जाने से न बोल सकी। उठने का उपक्रम करते हुए गिरीश की ओर हाथ बढाकर कहा—"मत रोओ बेटे!" वह नाइन के सहारे उठकर बैठ गई। पर आसू अब भी टपक रहे थे।

शान्ति तीन दिन से बिना अन्न के थी। उसका शरीर कैसे काम कर सकता था! फिर एक बार ठाकुर साहब के यहाँ सीढी से गिर कर बेहोश हो चुकी थी। काफी चोट आई थी। पुरोहित जी ने सहारा दिया नही तो सिर फूट जाता, दूसरी ओर एक बच्चा खो गया—शान्ति को बेहोशी आजाना स्वाभाविक था। शान्ति को सान्त्वना देते हुए नाइन ने कहा :

"घर मे चारो ओर मैने आते ही देख लिया है, यहाँ भी नही है न जाने कहाँ होगा ?"

शान्ति सोच रही थी—कही घर में ही किसी कोने मे सो तो नही रहा है। वह बोली, 'नाइन, एक बार फिर मे देख'लो शायद कही सोता न हो।"

शान्ति की बात नाइन को भी जँची, वह धीरे से उठी और शान्ति के साथ अंदर चल पडी। श्रावरण के बादल घिर आये थे। घनघोर गर्जन से हृदय काँप उठता था। बिजली की कड़क बड़ी ही भयावनी थी। बडी-बडी बूदो का गिरना आरम्भ हो गया था। घर में चारो ओर अधकार छाया था—बिजली की चमक से क्षरण भर के लिए उजाला हो जाता था और फिर वही अधकार। घर मे दीपक जलाना भी शान्ति के लिए असभव था। शायद दीपक तेल से खाली था। फिर बरसात में चचल वायु के झोको से उसका जलना भी कठिन था। नाइन अधकार को दूर करने के लिए अपने घर से लालटेन लाने के लिए गई।

नाइन अवस्था मे पचास से कम की न थी, किन्तु काम मे काफी फुर्तीली थी। जीवन भर उसे टहल ही बजानी पड़ी, यदि एक दिन टहल न बजाये तो खाना न मिले। कुछ ही क्षरणो मे घर जाकर अधेरे में लालटेन ढूढी, जलायी और लेकर वापस आगई।

शान्ति के घर के किवाड सब खुले थे, आँगन मे फूटा लोटा पडा था। चारो ओर बार-बार ढूढने पर भी श्याम न मिला। वह तो गलियों मे भटकता हुआ माँ को ढूढ रहा था। निराश हो शान्ति रो पडी ..।

मुहल्ले के लोग शान्ति की चिल्लाहट और रोना सुन कर अपने-अपने घरो से निकले—रोने का कारण पूछा। बेटा खो जाने का समाचार जानकर थोडी बहुत सहानुभूति प्रकट कर अपने-अपने घर के लिए वापम हो गये। कोई इधर-उधर खोजने, कोई कोतवाली मे इत्तला करने के लिए कह रहा था—शान्ति मे इन तरकीबों से काम करने की शक्ति न थी।

अडोस-पडोस के लोग सोच रहे थे—दस बजे को रात इसका लडका कैसे खो गया ? यह मोने का समय है। क्या सोते ही समय लडके की

खोज की ? इसके पहले चिंता नही थी। चार-पाँच वर्ष के लडके के लिए इतनी देर तक कैसे निश्चिन्त रही ? नाइन के बतलाने पर ज्ञात हुआ कि दिन भर से लडके भूखे थे, उनके लिए खाने का प्रबध करने घर से निकली थी और बच्चो को घर मे ही छोड गई थी। लौटने पर गिरीश बाहर रोता हुआ मिला, और श्याम न जाने कहाँ निकल गया। नन्हा-सा बच्चा जाने कहाँ भटकता होगा ? नाइन की आँखे सजल हो आई ।

कुछ युवतियाँ आपस मे बाते कर रही थी—क्या रात को ही बच्चो के खाने का प्रबध हो सकता था—हाँ, अभी कौन अधिक अवस्था बीत गई है। एक दूसरे की ओर आश्चर्यपूर्वक आखे गडा कर देखा और मुस्कराई - बुड्ढियो के डाटने पर चुप हो गई ।

शान्ति के मकान से सटा हुआ देवीदयाल का मकान था। ये मुहल्ले के सबसे बडे पहलवान थे। वर्तमान समय मे उनसे लडने को कोई तैयार नही था। विशाल-काय, अपार बल ! उनके दल के प्रभाव को कौन नही जानता था। कोई लडने का साहस नही कर सकता था। बुलानाला के पहलवानों की मडली से कुछ तनातनी हो गई थी। लडने के लिए एक नवयुवक पहलवान ने अपना नाम देवीदयाल के पास भेजा था। शहर मे बडी सनसनी थी। सुबह सात बजे टाउन-हाल के मैदान मे कुश्ती होनी निश्चित हुई थी। सरकारी तौर से पुलिस का प्रबध भी दगे के भय मे लोगो को कराना पडा।

देवीदयाल प्रात काल अखाडे मे पहुँच कर विजयी होने की उमंग मे उस समय मालिश करा रहा था। एकाएक दस बजे रात को रोने की आवाज सुनकर पूछा—"कौन रो रहा है ? कुछ देर बाद गुस्से मे घर से बाहर निकलकर सीढी से गरजा :

"ये कौन हल्ला मचा रहा है ?"

सामने खडे हुए लोगो ने कहा, "पडित जी की औरत है। उसका छोटा बेटा गायब हो गया है ? इसीलिए रो रही है।"

"लडका गायब हो गया है ? तो मुहल्लेवालो को निकाल देगी ! जाकर कोतवाली मे इत्तला कर दे । सुबह आप-से-आप मिल जायगा । पंडित जी के मरने के बाद साल भर योही सोना हराम था, इधर दो-तीन माह से कुछ शान्ति मिली तो आज मे फिर शुरू हो गया ।"

देवीदयाल की बाते लोगो को बुरी लग रही थी । यद्यपि कुछ अंश तक बाते सत्य थी, पर बेचारी शान्ति के दु ख मे रोने के लिए रोक उचित न थी । ससार मे गरीबो की दु ख मे और भी दुर्दशा होती है । भर मन रो भी नही सकते, कैसी विधि की विडम्बना है ! देवीदयाल की बाते एक बूढी औरत से न सही गयी तो वह बोल उठी

"कोई मर रहा है, कोई मलहार गाता है। वह बेचारी, लडका गायब हो जाने पर रो रही है, ये उलटे डाटने चले है ।"

गुस्से मे आकर सीढी मे उतरते हुए देवीदयाल ने कहा, "तो इसमे क्या ? लडका गुम गया है तो तलाश करे, रोने से क्या घर आ जायगा ?"

बुड्ढी पुन बोल उठी, "जिसका बच्चा खो जाता है, उसी को मालूम होता है । आपको क्या ?"

झरझर पानी की झडी लग गई । भाग-भाग कर लोग अपने घरो मे छिपने लगे । शान्ति के प्रति लोगो की तरह-तरह की धारणाएँ थी—पडित जी को मरे दो वर्ष से अधिक हो रहा है, न जाने कैसे यह औरत काम चलाती है । पडित जी के समय मे भी खर्च पूरा नही पडता था, अब कैसे चलता है । कोई आमदनी भी सामने नही दिखाई पडती, कही काम करना तो उसके लिए कठिन ही है । दस बजे तक कहाँ रही । कौन जाने । आज लडका खो गया तो लोगो को पता चला, वैसे क्या पता ? ईश्वर जाने जो हो । इसी मे सन्तोष कर अपने-अपने काम मे सब लग कर शान्ति की चिता मे दूर हो गये ।

पानी ऐसा बरस रहा था, जैसे उसे रुकना ही न हो । दो घटे लगातार वर्षा होने मे चारो ओर पानी-ही-पानी भर गया । किसी ओर

निकलने लायक न रहा। गलियों में घुटने से ऊपर पानी भर गया था। किसी की मोरी बद हुई, किसी की छत गिरी, लोग हल्ला कर रहे थे—शान्ति इस घनघोर वर्षा से और भी व्याकुल हो उठी– श्याम की चिता से घर के अदर एक क्षण भी न रुक सकी। गिरीश का नाइन के पास छोड़ श्याम को ढूढने निकल पड़ी।

नाइन पानी बन्द होने के बाद चलने की सोच रही थी, पर शान्ति का धैर्य टूट गया, वह सब भय त्याग आगे बढने को प्रस्तुत होगई। जिस ओर देखती उसी ओर श्याम के मिलने की पूर्ण आशा कर भीगे नयनो से जा रही थी।

शान्ति को अपने यौवन-काल मे भी घूमने का शौक न था, फिर भारतीय परिपाटी से पली हुई नारी आमोद-प्रमोद के लिए इधर-उधर घूमना कैसे पसद कर सकती थी। केवल अपने आवश्यक कार्य के लिए ही घर से बाहर निकलती थी। गगास्नान के लिए दशाश्वमेध, पचगगा तथा मणिकर्णिका घाटो को जानती थी, वह भी जब-तब पर्वो मे ही इन घाटो को देखा था। सदा मणिकर्णिका घाट मे ही स्नान करती और विश्वनाथ का दर्शन कर वापस चली आती। ससार के प्रपच मे कोई मतलब न था। श्याम किस मार्ग मे कहाँ गया होगा इसकी कल्पना तक न थी, वह किस गली मे ढूढे, इसी उलझन मे चकराई हुई थी।

गिरीश जहाँ मिला था वहाँ तक निःसन्देह चली गई, फिर सोचने लगी – पास मे ही जो गली चौक की ओर जाती थी उसी से आगे बढी। चक्कर लगाते हुए कई पुलिस के सिपाही भी मिले, पर श्याम का पता न बता सके। उन सिपाहियो ने कोतवाली में इत्तला करने के लिए सलाह दी। भटकते हुए वह चौक कोतवाली के सामने पहुँची। तीन सिपाही पहरे पर खड़े थे। शान्ति सिपाहियों को देखकर दूर ही से डरती थी, किन्तु परिस्थिति स्वय निर्भीक बनाकर आधी रात चारो ओर घूमने को बाध्य कर रही थी। शान्ति जो

सिपाहियो को देखकर डरती थी, आज सिपाहियो के पास जा-जा कर श्याम को पूछ रही थी। वह सोच रही थी कि जिन बच्चो के लिए मुझे अपमानित होना पडा, वे भी मुझसे अलग होना चाहते है। क्या मुझ अभागिनी का साथ न देगे ? वह फूट-फूट कर रो रही थी। साहस कर कोतवाली को ओर मुडी।

सिपाहियो ने देखा कि रोती हुई औरत आधी रात कोतवाली की ओर आ रही है। कोई कारण विशेष है। तुरन्त एक सिपाही ने आगे बढकर पूछा, "क्या बात है ?"

शान्ति रोती हुई बोली, "मेरा लडका खो गया है।"

"लडका खो गया है ! तुम्हारा घर कहाँ है ?" एक सिपाही ने पूछा।

"यही सिद्धेश्वरी मुहल्ले मे।"

"किस समय खोया है ?"

"छ-सात बजे खोया होगा। अभी पॉच वर्ष का पूरा न हुआ था।"

आश्चर्य प्रकट करते हुए सिपाही ने कहा— हुँ, पॉच वर्ष का लडका छ-सात बजे खो गया और अब तक पता नही कि ठीक छ या सात, कितने बजे खोया है। औरतें बच्चा पैदा करना जानती है और कुछ नही। कोतवाली मे अन्दर जाकर रजिस्टर मे सभी बाते पूछ कर लिख ली। अवस्था, रूप, रग तथा नाम सभी चीजे विवरण पूर्वक लिख दी और रजिस्टर में शान्ति के हस्ताक्षर भी करा लिए।

शान्ति आदेश पाकर पुन चल पडी। तीनो सिपाही आपस में बातें करने लगे—'यार थी तो अच्छी, रात भर रोक लेते, फिर सुबह चली जाती। हम लोग उसके लडके का भी पता लगा देते और वह तैयार भी होजाती।' तीन सिपाहियो मे एक सिपाही सयाना था डाँटकर बोला, "नीच, तुम लोग क्या बाते कर रहे हो ?" दोनो युवक सिपाही बोल उठे, "अच्छा इस ऊँच को देखो" ठहाका मार कर हँस पडे। वृद्ध सिपाही ने पुन कहा, "किसी दुखिया को सताना पाप है।"

युवक सिपाहियो ने कहा—"वाह ! पुण्य-पाप देखना होता तो

पुलिस में नौकरी करते ? घर-द्वार छोड़ मौज उड़ाने के लिए ही तो पुलिस मे नौकरी की है ?"

पीछे से कोतवाल साहब की आवाज आई "हाँ-हाँ, खूब मौज उड़ाओ। बेशर्म, काम करना दूर रहा मौज उड़ाने को आये हो।" वे आँखें घुरेर कर आगे बढ़ गये।

तीनो सिपाही सन्न से रह गये।

: १७ :

रायसाहब के साथ पुरोहित जी भी कुछ दूर तक गये, फिर अपने घर की ओर चले गये। रायसाहब प्रतिदिन एक घटे मे विश्वनाथ-दर्शन करके वापस आ जाते थे, किन्तु उस दिन देरी हो गई थी। विश्वनाथ की आरती के दर्शन मे भक्त का मन-मोहित हो जाना असम्भव न था, फिर आरती होती ही इतने सुन्दर ढग से है कि बीच मे चलने को जी नही चाहता। देवताओं की आरती का बडा महत्त्व है—रात दिन मे कई आरतियाँ होती है—पूजा, भोग तथा शयन आदि के समय।

पतित-पावनी मुक्ति-दायिनी, त्रिलोक-न्यारी भगवान् शकर की क्रीडास्थली काशीपुरी की शोभा अवर्णनीय है। जहा स्वय शंकर भगवान् विश्वनाथ रूप से अपने गणो सहित विराजमान हो उनके सौन्दर्य-वर्णन मे कौन समर्थ हो सकता है ? उनके मन्दिर मे प्रात काल से लेकर अर्द्धरात्रि पर्यन्त दर्शको का जमघट लगा ही रहता है। देशदेशान्तर के यात्री दर्शन कर अपने को धन्य मानते है।

सायकाल नौ बजे से शयन आरती आरम्भ होकर बारह बजे तक समाप्त होती है। उस समय की छटा भारतीय सस्कृति के अतीतकाल के वैभव की प्रतीक है। दर्शको के हृदय मे आनन्द का अपार सागर उमड आता है। आरती आरम्भ होने से पहले ही नर-नारियों की अपार भीड़ स्वर्ण मन्दिर में इकट्ठी हो, भजन करने लगती है। आँगन में तिल भर स्थान रिक्त नहीं रहता। बडे कौतूहल से लोग दर्शन कर आनन्दित होते हैं।

'हर हर महादेव' की ध्वनि से आकाश गुंजित करते हुए, भक्तो को नव-जीवन प्रदान कर, काशिराज के यहाँ, बडे-बडे चादी के घडो मे दुग्ध तथा स्वर्ण-कटोरो मे चदन लिए हुए "वेदपाठी ब्राह्मण पधार कर मन्दिर की शोभा बढा देते है। विशाल-काय, लम्बे-ललाट मे लगी हुई भस्म तथा कठ मे रुद्राक्ष की मालाएँ उन विद्वानो की प्रतिभा प्रसारित करती है। पीताम्बर-पहन रुद्राभि नन्दनकरते हुए, ऐसे ज्ञात होते है मानो स्वय ऋषिगण शिव की अर्चना करने के लिए पधारे हो। मलय-सुवासित शीतल-वायु ससार के सपूर्ण सुखो एव दुखो को भुला देती है। स्वर्ण शय्या सजाकर शिव-पार्वती को स्थापित कर—

"ऊ गगाधर हर शिव जय गिरिजाधीश,
त्वा मा पालय नित्य कृपया जगदीश।
हर हर महादेव॥"

गायन करते हुए आरती करते है। डमरू, नगाडा तथा घटो के नाद से आकाश गूँज उठता है। इस अपार सुख-राशि को समेटने मे कौन भूल कर सकता है। रायसाहब को भी इस भक्ति-लहर मे हिलोरे लेने से देर होजाना स्वाभाविक था।

कमला, रायसाहब की अर्द्धाङ्गिनी अपने शयन-कक्ष में टहलते हुए सोच रही थी—आज रायसाहब अब तक क्यो नही लौटे ? नित्य नौ बजे वापस आ जाते थे, भोजन के लिए विलम्ब हो रहा है। रह-रह कर द्वार तक आकर देख जाती, पर रायसाहब शिव के ध्यान मे तन्मय थे उन्हे उस समय आत्मानन्द के सामने भोजन तथा कमला की प्रतीक्षा की क्या चिन्ता थी!

कमला कभी-कभी रायसाहब के सरल स्वभाव से खीझकर कुछ क्षणो के लिए कुपित हो जाती थी और फिर वही प्रसन्न मुख-मुद्रा। उसने कई बार रायसाहब से कहा भी था—इस ससार मे सरल होना स्वय कष्ट को निमत्रण देना है। छोटे आदमियो के पास भी लोग जाने में डरते है, पर रायसाहब के पास आने मे किसी को थोडी भी हिचकिचाहट

नही होती—घण्टो बैठे रहते है । उन बेचारो का क्या दोष ? रायसाहब स्वयं ऐसे है । बेकार अपना नुकसान कर बडे प्रेम से एक के बाद दूसरे की प्रतीक्षा मे बैठे रहते है । इसके लिए कोई क्या कर सकता है ?

सब अपने-अपने फायदे के लिए ही आते है, पर उन्हें क्या दे जाते है। दस बज गये, अब तक लौटने का समय नही हुआ। जिसे अपने भोजन, शयन का ख्याल नही, वह और काम कैसे कर सकता है।

कोठरी से निकल कर वह कई बार गली की ओर देख चुकी थी। उदास हो दीवाल से टिककर सुसज्जित शय्या के कोने मे बैठ गई। नीद से आँखे अलसा रही थी, कुछ आहट मिली—सामने देखा। रायसाहब सिल्की चादर ओढे, सुगधित पुष्प की माला पहने आ रहे है तुरन्त उठी। तब तक रायसाहब भी कोठरी के अदर आ चुके थे। कमला ने सिर उठाकर रायसाहब की ओर देखा—आँखे घुमाकर अन्दर चली गई और खाना लेकर वापस आई।

रायसाहब ने कुर्सी पर बैठते हुए कहा, "अब तो साढे दस हो रहा है, काफी देरी हो गई—मै भोजन नही करूँगा।"

कुछ क्षण के लिए आँखें चार हुईं—कमला मुस्करा कर बोली—"इसमे मेरा क्या दोष ?"

रायसाहब ने हँसते हुए कहा, "तुम्हारा कोइ दोष नही है । और तुम्हे दोषी साबित ही कौन कर रहा है। नारी सदेह की मूर्ति है।"

कमला जल्दी ही बोल उठी, "हाँ, हाँ, नारी सदेह की मूर्ति है और पुरुष !" आगे मुस्कराकर लज्जित होगई।

रायसाहब ने थालपोश हटाया और दो पराठे खाकर उठ गये। दूध पीते हुए बोले, "आज ज्यों ही तैयार हो दर्शन के लिए जाना चाहता था, कि पुरोहित जी एक महाराजिन को साथ लेकर आ गये; उनसे फुरसत मिली तब तक ठाकुर सग्रामसिंह आ टपके। बातें होते देर हो गई।

नौ बजे के बाद दर्शन करने जा सका।"

कमला ने कहा, "कौन सी गम्भीर परिस्थिति मे विचार हो रहा था जो इतनी देर लगी ?" मुख पर कुछ रुष्टता का भाव था।

रायसाहब ने गम्भीरता से कहा, "कोई गम्भीर परिस्थिति नही थी। बाते तो पहले ही खत्म हो चुकी थी। ठाकुर सग्रामसिह अडे बैठे थे, न जाने क्यो आज उठने का नाम नही लेते थे ? दूसरे किसी दिन दस मिनट भी बैठना उनके लिए कठिन था, पर आज पुरोहित जी के कई बार तैयार होने पर भी अनिच्छा से ही उठे।

कमला ने सोचकर कहा, "आपको क्या पता ? ठाकुर साहब बडे घुटे हुए आदमी है, किसी काम से ही आये होगे। मौका न देखकर चुप रहे। हमने तो यहाँ तक सुना है कि आज कल जो इधर डकैतियाँ हो रही है, उनमे इनका भी हाथ है। अभी हाल मे जो मोगलसराय से लाखो रुपये का माल गायब हुआ था उसमे ठाकुर साहब भी बुलाये गये थे।"

कमला की बाते सुनते ही रायसाहब के कान खडे हो गये। उन्होने सोचा था, ठाकुर साहब बडे शरीफ है, रईस होने के साथ ही गरीबो के मददगार है। आश्चर्य पूर्वक कहा, "तुम से यह कौन कहता था ?"

"मुझ से ? आज सुबह बद्री ने कहा था, और इसकी चारो ओर खबर है। शहर का बच्चा-बच्चा जानता है।"

'नही, तुमने गलत सुना है। सुनी हुई बातो पर विश्वास करना मूर्खता है। अब किसी से इस तरह मत कहना। आज ठाकुर साहब को किस वस्तु की कमी है ? वे ताल्लुकेदार है, नगर मे कई हवेलियाँ है, और सेवा करने के लिए नौकर-चाकर है। साथ ही उनके बाप की कमाई हुई संपत्ति ही दो पुश्त छानने-फूँकने के लिए कम नही है। उन्हे क्या गरज, जो पैशाचिक कर्म करने के लिए तैयार होगे ?"

कमला ने कहा, "पानी मे खडे बगले भक्त की बातो मे आकर मछलियो ने यह कब समझा था कि वह अपने स्वार्थ-साधन मे ही तन्मय है ? किसी के हृदय की बात कोई कैसे जान सकता है ?"

"इससे क्या ? जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा।"

"लेकिन, कभी-कभी बुरे के साथ अच्छे भी पिस जाते।"

सशंकित हो रायसाहब ने कहा, "आखिर ठाकुर साहब को यहाँ आने से रोकना भी तो अनुचित है।"

कमला मुस्कराकर रायसाहब के समीप बैठती हुई बोली, "मैं रोकने के लिए कब कहती हूँ ? जो सुना था वही बतला दिया है।"

रायसाहब ठाकुरसाहब के अधिक देर बैठने के रहस्य को स्वत समझ गये। पहले भी सोच रहे थे कि "ठाकुर साहब बेकार घूमने वाले नही है ! जहाँ कही भी जाते है, अपने काम से। किन्तु कमला जो घरो मे रहती है, उसे इन सब बातो का पता है ! मेरे पास हजारो व्यापारी आते है, फिर भी मैं न जान सका ! वह आश्चर्य कर रहे थे।

रायसाहब के पास जो आता वह अपने स्वार्थ की ही बात करता। उसे दुनिया की बाते बतलाने से क्या लाभ ? और रायसाहब भी अपने काम से मतलब रखते थे, अत उनके पास तक ये सारी बाते न पहुँच पाती थी।

पुरोहित जी महाराजिन को साथ लेकर आये थे इस बात को कमला पहले जानना चाहती थी, किन्तु ठाकुर संग्रामसिंह-सम्बधी बाते अधिक कुतूहलपूर्ण थी। महाराजिन से कमला के जीवन का भी सबध था। विशेष उत्कठा से बोली, "हाँ, पुरोहित जी महाराजिन को लेकर आये थे, उनसे क्या बातें हुई ?"

"बातें तो बहुत हुई, लेकिन जिस महाराजिन को साथ लाये थे, उसे कल से आने के लिए कह दिया है। तनख्वाह वही रहेगी जो पहली महाराजिन को दी जाती थी। सुबह आठ बजे आयेगी और सायकाल सात बजे चली जायगी।"

कमला खिलखिला कर हँस पडी और बोली "पुरोहित जी से यही बातें हुई ?"

नही-नही और भी बहुत-सी बाते होती रही। आज पुरोहित जी ने कहा कि "धनवान गरीबो को दान देकर उनकी भलाई नही करते, बल्कि उन्हे आलसी बना देते है, जिससे वे जीवन भर भीख माँगने के अलावा और किसी कार्य मे सफल न हो सकें। देश का सब से बडा अपकार काम करने योग्य व्यक्तियो को दान देकर कामचोर बना देने मे ही है।"

आवेश मे आकर कमला ने कहा, "यह आप क्या कह रहे है ? धनवान दान देकर देश का अपकार करते है ? नही, पुरोहित जी के मुख से ऐसी बाते कभी नही निकल सकती ! फिर भी जो आदमी सैंकडों का दान प्रतिदिन लेता है, और उसी से अपने परिवार का भरण-पोषण करता है, वही दान को खराब बतलाकर अपने पैरो आप कुल्हाडी मारने को तैयार हो सकता है ? कभी नही !"

"वे प्राय कथाओ मे तरह-तरह के दानो की महिमा बतलाया करते है। अभी कल मैं 'दशाश्वमेध' पर कथा सुनने गई थी। पुरोहित जी सुना रहे थे—'जो व्यक्ति गर्मी के दिनो में जल-दान कर प्यासी आत्माओ को तृप्त करता है वह ससार के सपूर्ण सुखों को भोग कर हजार वर्ष तक स्वर्गलोक मे वास करता है और अवधि समाप्त होने पर पुन इस मृत्युलोक मे मनुष्य-योनि मे जन्म पाकर भविष्य के लिए अपनी गति सुधारने मे सफल होता है।

"मोहन की बारहवी वर्ष गाँठ आषाढ पूर्णिमा को थी उस समय भी पुरोहित जी कह रहे थे—"इस बारहवी वर्ष गांठ के उपलक्ष में दस विद्यार्थियो की छात्र-वृत्ति बढवा दीजिए। छात्रो की सहायता करने से बडा पुण्य होता हे। शास्त्रो मे कहा है "

"कुक्षी तिष्ठति यस्यान्न विद्याभ्यासेन जीयति
गोत्राणि तारयेत्तस्य दशपूर्वान्दशापरान् ॥"

"विद्यार्थी-गण जिसके अन्न को खाकर विद्याध्ययन द्वारा पचाते है, उसके पुण्य से दस पीढ़ी पीछे की दस भविष्य की और एक स्वयं इस

तरह इक्कीस पीढियाँ पापमुक्त होकर परमपद प्राप्त करती है। साथ ही स्वर्ग मे वास करती है, इत्यादि, उपदेश दिया था। केवल मैं ही नही, और भी बहुत सी महिलाएँ थी। घण्टो प्रवचन होता रहा। क्या धर्म-वक्ता पुरोहित जी शास्त्र के वचनो के विरुद्ध दान की निन्दा करने का दुस्साहस कर सकते है ?"

रायसाहब कमला की व्याख्यानबाजी पर हस-पडे। आज तो तुम स्वय 'पडित जी' बन गई हो। पुरोहित जी से तुम्हारा भाषण क्या कम है ? यह कहते हुए आलिगन किया। कमला आनद की लहरो मे डूब गई। नारी के सामने पति-सुख से बढ कर ससार मे और कोई सुख नही। वह प्रेम-विभोर हो स्वय अपने को भूल जाती है।

: १८ :

प्रभावती ठाकुर साहब के भोजन करते समय मन-ही-मन सोच रही थी—आज मैंने ही उद्दण्डता की, यदि उस औरत के चले जाने पर मै मौन रह जाती, तो बाते यहाँ तक न पहुँचती। पर अब क्या करूँ ? क्या सचमुच पतिदेव प्राण-दण्ड देकर ही शान्त होंगे। नही, मेरी धृष्ठता पर यो ही कह दिया है। पुरुष अपनी जीवन-सगिनी के साथ इतना कठोर व्यवहार कर इस ससार से सदा के लिए विदा करने का साहस नही कर सकता। प्रथम-मिलन में ठाकुरसाहब ने कहा था। "ससार की सपूर्ण वस्तुओ का त्याग करके तुम्हारे साथ बन में रहने को तैयार हूँ।" गुस्से मे आकर बक जाना स्वाभाविक है। खाली गिलास मे पानी उड़ेलते हुए कहा

"और क्या लाऊँ ?"

ठाकुरसाहब की चढी भौहे क्षण मात्र के लिए प्रभावती की ओर झुकी। फिर गिलास उठाया, पानी पिया और हाथ धोकर तौलिए से पोछते हुए आराम-कुर्सी पर लेट गये।

ठाकुरसाहब की मनोव्यथा में प्रभावती ठिठकी खडी कुछ सोच रही

थी। वातावरण बिल्कुल शान्त था। द्वार के समीप घोर वर्षा के झोंको से प्रभावती भीगती हुई स्वामी की प्रसन्नता के लिए अपनी 'कर्मसाधना' में तन्मय आँसू बहा रही थी। जिसके आत्मानन्द के लिए लोक-लज्जा त्याग कर अपने आपको समर्पण किया था, उसे दुखी देखना वह अपराध समझती थी।

ठाकुरसाहब आरामकुर्सी पर लेटे सोच रहे थे—ओह, नारी-जीवन कितना पतित होता है। वह जिसे प्रेम-दान करती है, उसी से घृणा। सहसा वर्तमान सुप्रसिद्ध कवि श्री विन्ध्येश जी की 'नारी-रूप' कविता का स्मरण हो आया—

है उत्थान-पतन का कारण,
नारी का सुन्दर-तम यौवन।
प्रतिक्षण ही जो रूप बदलता,
विष-मधु जिसमे प्रतिक्षण ढलता।
और पिला कर किंचित मधु जो,
ताडित करती बहु नर को।

किन्तु,

नारी है उन्नति की श्रेणी,
विश्व क्षितिज मे कृषा-सी।
बरसाती है मधु नव-अमृत,
प्रेमासक्त मिलिन्द-वृन्द नर।
जिससे रहते है शुभ रक्षित,
विश्व-जननि, लय कारिणि।
पालनि त्रिविध स्वरूप,
जगत में नारी रूप त्रिवेणी।

यह कविता स्थानीय कवि-सम्मेलन मे गगा-दशहरा के अवसर पर "सकटमोचन" मे सुनाई गई थी। ठाकुरसाहब ने बडे चाव से सुना था और कवि महोदय को पुरस्कृत भी किया था। ठाकुर-

साहब रईस होने के साथ ही कवि-सम्मेलनो मे सम्मिलित होने के बड़े शौकीन थे। अपने पद का ख्याल न कर कविता सुनने के लिए साधारण जगह भी पहुँच जाते थे। कोरे श्रोता ही न थे, बल्कि कुशल कलाकारो का सम्मान भी करना जानते थे। बड़े-बडे साहित्यिक उनकी उदार प्रकृति से परिचित थे। दूर-दूर से कवि-सम्मेलनो के लिए निमन्त्रण भी आते थे। देवी सरस्वती के भक्तो को प्रोत्साहन देने मे सदा आगे रहते थे। इस समय बार-बार नारी के वीभत्स रूप को देख रहे थे। उन्हें नारी का मोहनी रूप भूल गया था।

प्रभावती तश्तरी मे पान लेकर सामने उपस्थित हुई, किन्तु कुछ बोल न सकी। ठाकुर साहब ने पुनः कडी निगाहो से देखा। वह रुकी, शरीर काबू से बाहर हो गया और तश्तरी हाथ से छूटकर भूमि पर जा गिरी।

ठाकुरसाहब का शरीर क्रोध से काँप उठा। गरज कर बोले "हट जा सामने से।"

प्रभावती एक क्षण में फिर साहस कर बोली, "आज्ञा मानने के लिए मै तैयार हूँ, किन्तु अपना अपराध जानना चाहती हूँ।"

ठाकुरसाहब ने सिर से पैर तक देखा और सिर हिलाते हुए कहा, "हूँ, तो तुम अपराध जानना चाहती हो, अभी यह भी मुझे बताना पडेगा?"

अवश्य, मेरी धृष्टता क्षमा कीजिएगा। अपराधी को अपराध बताने पर ही दण्ड मिलता है। "बिना अपराध बताए दण्ड देना भी एक अपराध है।"

"मै समझता हूँ हिन्दू कोडबिल के समर्थको में सर्वप्रथम तुम्ही हो। किन्तु जब तक मेरे अधिकारो मे तुम..."

"सब कह डालिए। हृदय में विकार क्यों रह जाए। पर मै अपना अपराध तभी मानूंगी जब आप उसका निर्देश करेगे।"

"टाँय-टाँय मत करो। एक बार मैने कह दिया, पति-अवज्ञा हो नारी

का सब से बडा अपराध है।"

प्रभावती कुछ क्षण मौन रही, फिर बोली। "लेकिन मैंने कौनसी अवज्ञा की ? उस ब्राह्मणी के सम्बध में जो बातें हुई उनमें भी मैंने प्रार्थना ही की थी। अनुचित पथ से उचित की ओर ले जाना भी तो अर्द्धांगिनी का कर्त्तव्य होता है। फिर भी मेरे मुख से जो अनुचित शब्द निकल गये हो उनके लिए पहिले ही क्षमा प्रार्थना कर चुकी हूँ और अब भी निवेदन करती हूँ। किंतु दूसरो के अपराध का दण्ड भोगने के लिए मै तैयार नही हूँ। फिर इसमें मेरा क्या अपराध ?"

ठाकुर साहब ने कहा—"अपराध का ज्ञान-दण्ड भोगने पर ही होता है। यदि दण्ड मिलने के पहले अपराध का ज्ञान हो जाय तो संसार निरपराधी हो सकता है।"

प्रथम बार की क्षमा-याचना मे प्रभावती सोच रही थी—अपने पतिदेव से बिना अपराध भी क्षमा माँग लेना कोई अनुचित नहीं है। उनकी प्रसन्नता के लिए मैंने स्वय अपराधिनी बन क्षमा-याचना भी की थी, किंतु परिणाम उलटा ही निकला। सम्भवत यदि मैं क्षमा-याचना न करती तो यह दशा न होती। वस्तुत मानव कर्तव्य-च्युत होने पर विवेकहीन हो जाता है। उसे कोई कार्य अच्छा नही दिखाई देता। चारों ओर द्वेष का साम्राज्य छा जाता है।

मानव-जीवन कितना स्वार्थी है ? अपने स्वार्थ के सामने माता-पिता, भाई, बहन, स्त्री, पुरुष तथा इष्ट-मित्र सभी भूल जाते है, और यहाँ तक कि अपना कर्तव्य-पथ छोडकर स्वय पतित हो जाता है। मैं ही निरपराध दण्ड भोगने के लिए क्यो तैयार होऊँ ? एक शिक्षित महिला का यह कर्तव्य नही है। मेरा धर्म उनकी चरण-सेवा ही है।

पर ठाकुरसाहब मेरी सेवा कही अस्वीकार न कर दें। मैंने उन्हें अपने जीवन मे इतना अधिक नाराज कभी नही देखा था। सदा प्रसन्न-चित्त रहते थे। दुश्चरित्रता का रत्ती मात्र किसी को सदेह नही होता था, किंतु एक अनाथ विधवा ब्राह्मणी पर अन्याय करने को तुले—घोर

पाप। ससार मे इस पाप से मुक्त होने के लिए कोई तीर्थ नही है। इस पाप-भार को सहन करने का साहस किसी पुण्य स्थान को नही है। भगवान्! इसके अभियोग मे मेरा यह अपमान! महान अन्याय। पति कितना ही अप्रसन्न क्यो न हो, पत्नी के पत्नीत्व को अस्वीकार नही कर सकता।

प्रभावती आगे बढी, आराम कुर्सी के बगल मे बैठकर पैर दबाना चाहती थी, किंतु ठाकुरसाहब ने डाँटकर कहा, "मुझे छूना मत, मैं तुम्हे एक क्षण भी नही देखना चाहता। इस पर भी प्रभावती को पूर्ण विश्वास न हो सका। आखिर चरण-स्पर्श कर ही दिया। ठाकुर साहब प्रभावती की इस धृष्ठता को बरदाश्त न कर सके। उन्होने पैरो से ठोकर मारकर उसे अलग कर दिया। प्रभावती लडखडा कर भूमि पर आ गिरी।

प्रभावती को अपने जीवन में प्रथम आघात पहुँचा। पिता जी के यहाँ उसने राजसी जीवन व्यतीत किया था। विधाता के घर से सुख साम्राज्य लेकर आई थी, पति के घर मे भी किसी वस्तु की कमी न थी। आनन्द से जीवन बीत रहा था, किन्तु होनी होकर रही।

ठाकुर साहब ने आवेश मे आकर प्रभावती को ठुकराने मे थोडा भी सकोच नही किया, पर अब पश्चाताप कर रहे थे। प्रभावती की सहनशीलता पर ही मुग्ध होकर प्रेम-सबध स्थापित किया था और उसी को लेकर आज यह भीषण काण्ड। लोग जानने पर क्या कहेगे! दाँतों तले अँगुली दबा कर सोच रहे थे।

प्रभावती बहुत देर तक स्तब्ध रही। ठाकुरसाहब ने सोचा—उठा कर बैठालूं, पर जिसे महज छूने की वजह से ठुकरा दिया, फिर उसीका स्वयं स्पर्श कर अपनी भूल स्वीकार करूँ। आगे न बढ सके, बल्कि कक्ष से बाहर होने के लिए आदेश दिया।

प्रभावती थोडी हिली और उसने लम्बी साँसे लेते हुए आँखें खोली। रोते हुए उठने का प्रयत्न कर सफल हुई। ठाकुरसाहब से कुछ कहना चाहती थी—शायद, "अब प्रायश्चित् पूरा हो गया" किन्तु ठाकुरसाहब

प्रभावती की बेहोशी मे चिन्तित हो गये ।

लेकिन प्रभावती को इस ससार का दु ख सहने के लिए अभी जीना था । कुर्सी पकडकर धीरे से उठ खडी हुई और भीगे नयनो से आँचल का कोना गीला कर अदर चली गई। अपने दालान मे टहलते ठाकुरसाहब को देखा । मन ही मन कहा, "अब मै अन्तिम बार चरण की सेवा कर अपने आदेश पालन के लिए प्रस्तुत हो रही हूँ, आशा है आदेश-पालन में आपको प्रसन्नता होगी ।"

ठाकुरसाहब ने भी प्रभावती को अन्दर जाते देखा था, उसके लिए एक शब्द कहना भी अनुचित समझा । प्रभावती कक्ष से निकलकर आँखो के ओझल होगई और ठाकुर साहब लम्बे कोच पर शयन करने के लिए बैठक मे चले गये ।

: १६ :

कमला ने हँसकर कहा, "मैने आपसे पुरोहित जी की बातें पूछी, और स्वय नेता बनकर भाषण देने लगी ।"

रायसाहब ने कहा, "क्या हर्ज है ? आज-कल औरतो के भाषण का अधिक प्रभाव पडता है । प्रचार-कार्य के लिए चुनाव के समय तुम्हे काफी रुपये मिल सकते है । किसी स्थान से तुम भी खडी हो जाना । यदि विजय होगई तो फिर क्या कहना ? "हजारो आदमी हाथ जोडे खडे रहेगे ।

कमला बनती हुई बोली चलिए, यह सब मुझे नही चाहिए । मै घर मे ही रह कर आपकी सेवा करना चाहती हूँ ।

कुछ देर पहले ही रायसाहब सो जाना चाहते थे, पर बेहद गर्मी के कारण नीद नही आ रही थी । तेजी से पखा चल रहा था फिर भी देह पसीने से तर थी । चारो ओर से घिरकर बादल वर्षा करने को तुले। क्षण में ही पानी-पानी हो गया । प्रचड वायु के प्रकोप से झरोखो द्वारा कक्ष के अदर पानी आने लगा । कमला उठकर खिडकियो को

बद कर शय्या पर बैठती हुई बोली :

"महाराजिन के सबध मे पुरोहित जी क्या बतला रहे थे ? उनकी जान पहचान की है ?"

माथा सिकोड कर रायसाहब ने कहा, "हाँ, जान पहचान की ही होगी, तभी तो साथ लेकर आये थे । उन्होंने उसकी बडी प्रशसा की । कार्य-कुशलता, ईमानदारी तथा पाक-शास्त्र की निपुणता आदि सभी गुण बतलाये । 'हाँ, चलते समय एक सेर आटा माँगा, वह भी कर्ज । बडी चालक मालूम होती है ।'

"चालाक क्या ? बडी धृष्ट । बडे आदमियो से छोटी वस्तु माँगना कम अशिष्टता है ? क्या अडोस-पडोस मे एक सेर आटे का उसपर एतबार नही था, जो नगर के सुप्रसिद्ध सम्मानित रायसाहब से माँगने का साहस किया । साथ ही इतनी सहायता तो दो एक दिन पुरोहित जी भी कर सकते थे । आज ही नौकरी करने की बाते तय हुई, और माँगना शुरू कर दिया । यह नही सोचा कि इसका क्या असर होगा । इस तरह की औरत से काम पूरा न पडेगा । पेट भरने का और कोई साधन नही था तो सदावर्त ले लेती ।"

"नही-नही, वह सदावर्त्त नही ले सकती थी । इसीलिए कर्ज माँगा है । पुरोहित जी ने कहा था, "सुबह से बच्चे भूखे है, इसलिए आटा माँगने के लिए बाध्य हुई । दान की रोटी से अपने बच्चो का पालन-पोषण वह महान् अनुचित समझती है ।"

"अच्छा, जब अभी लाले पडे है तो कर्ज कैसे पटायेगी ?"

राय साहब ने कहा—"यहाँ से जो तनख्वाह पायेगी उसी से पटा देगी ।"

"लेकिन और भी तो लिया होगा । यदि सम्पूर्ण तनख्वाह कर्ज पटाने मे ही लगा देगी, यो अपने बच्चो को क्या खिलायेगी ? जरा आपने अन्दर भेज दिया होता तो मै एक-एक कर सब बाते पूछ लेती । स्त्री की अच्छाई-बुराई को पुरुष नही पहचान सकते । वह उसके

सौन्दर्य के मूल्याकन मे अन्य निर्णय करना भूल जाते है ।"

हँसते हुए रायसाहब ने कहा, "ऐसी बात तो नही है, पुरुष स्त्री को अच्छी तरह पहचानता है ।"

कमला खिलखिला कर हँस पडी, "हॉ-हॉ, पुरुष, स्त्री को अच्छी तरह पहचानता है, लेकिन उसकी अच्छाई-बुराई को नही ।" रायसाहब और कमला दोनो हँस पडे । कमला ने आगे कहा, "आपको किसी औरत को नौकर रखने का क्या अधिकार ? कुछ कामो के लिए मै भी तो अधिकारणी हूं ।"

रायसाहब मुस्करा कर बोले अवश्य ! नारी के अधिकारो मे पुरुष को दखल देने का कोई अधिकार नही है इसे मै मानता हूँ, किन्तु पुरोहित जी से बाते होने मे अन्दर भेजने का ध्यान न रहा, और कोई बात न थी ।"

"मै अच्छी तरह समझती हूं, महाराजिन जरा ढग की रही होगी, फिर " मुस्करा कर मौन होगई कमला ।

भौंह चढाते हुए रायसाहब ने कहा, "स्त्रियो मे यही बातें तो खराब होती है, तुरन्त सदेह करने लगती है । वे पुरुष पर इतना कडा प्रतिबन्ध चाहती है कि वह दूसरी स्त्री से बात तक न करे, जो अस्वाभाविक है । बेचारी ब्राह्मणी अपने बाल-बच्चो के पालन-पोषण के लिए जीविका ढूंढने आई और देवी जी उसे अप्सरा समझ कर उस पर सदेह कर रही है ।"

कमला आवेश मे आकर बोली, "पुरुष तो इससे भी बढ़कर है । यदि नारी पुरुष को दूसरी स्त्री से बातचीत करने में प्रतिबन्ध चाहती है, तो पुरुष, स्त्री के आँगन से बाहर होने मे भी बाधक है । वह क्या कम है ?"

रायसाहब गुस्से मे होकर बोले, "हॉ-हॉ, कोई कसर न रहे । आजकल नारी-समाज मे पुरुषो से विवाद करने की शिष्टता चल पडी है । इससे तुम्ही वंचित क्यों रहो ?"

झुझलाकर कमला ने कहा, "आखिर मैंने कहा ही क्या है ?"

"अब और क्या कहना चाहती हो? किसी को चरित्रहीन बताना क्या कम है? इतना अधिक नैतिक पतन हो जाने से ससार अशान्ति का केन्द्र बन जायगा, सामाजिक नियमो की हत्या तो होगी ही। ससार का कोई प्राणी जब तक अपने को पहचानता है, गलत रास्ते पर चलने का साहस नही कर सकता, किन्तु भूल जाने पर उसे कोई शक्ति पथ-विचलित होने से रोक भी नही सकती। मै इतना पतित नही हूँ, अपने को पहचानता हूँ और अपना कर्तव्य भी समझता हूँ।"

कमला बोली, "आप बेकार ही नाराज होकर राई का पर्वत बना रहे है। मैने आपके लिए नही कहा था, बल्कि समाज की वर्तमान परिस्थितियो की ओर इगित किया था। आप स्वय सोचे, इस युग मे आदर्श जीवन केवल पुस्तको के पन्ने रगने के लिए ही रह गया है, व्यक्ति के व्यवहार मे नही। दिनोदिन समाज की दशा बिगडती जा रही है कोई भी प्राणी नियम-बद्ध नही होना चाहता, सभी स्वच्छन्द हो अपना अव्यवस्थित जीवन व्यतीत करना अधिक उपयोगी समझते है। आज समाज का कितना पतन है, सभवत. कभी न रहा होगा। स्त्री-पुरुष अपनी श्रृङ्खलाओ को तोड, घोर पाप करने में थोडा भी सकोच नही करते। क्या इसे आप कम नैतिक पतन समझते है? मै तो समझती हूँ कि यह नैतिक पतन की चरमावस्था है। विचार करने पर आप भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचेगे।"

रायसाहब कमला की बाते सुनते हुए सोच रहे थे, आज कमला को क्या हो गया है? कोई नशा तो नही खाया। इस तरह की बाते तो पहले कभी नही की। भाषण देने पर उतारू है। पहले पुरोहित जी के सम्बन्ध से दान-महिमा पर बोल रही थी; अब सामाजिक परिस्थिति पर, किस धुन मे पागल होगई है। मुझे दो-चार खरी-खोटी बातें भी सुनाई। यह दुस्साहस कैसे बढा? नारी जब विद्रोह करने के लिए तैयार हो जाती है तो किन्ही सामाजिक नियमो एवं पति के आदेशो की परवाह नही करती। राक्षसी-वृत्ति अपनाकर अनर्थ करने में सफल होती है।

नारियो के प्रति गोस्वामी तुसलीदास के बचन नही भुलाये जा सकते ।
"नारि स्वभाव सत्य कवि कहही । अवगुन आठ सदा उन रहही । ..
साहस, अनृत, चपलता, माया । भय, अविवेक, अशौच, अदाया ।।
अत नारी की स्वतन्त्रता समाज के लिए अभिशाप है, "जिमि स्वतन्त्र होई विगरहि नारी जो स्त्री पति के सरक्षण मे रहकर गृह-लक्ष्मी बनती है, वही स्वतत्र होने पर समाज के पतन का कारण बनती हे। घर बसाना और बिगाडना दोनो ही उनके बाये हाथ के खेल है, लेकिन, पुरुषो का भी तो कुछ कर्तव्य होता है। डॉट कर बोले :

"क्या घटे भर से बकवास कर रही हो ?"

कमला थोडा सहमकर बोली, "बकवास तो नही कर रही हूँ। अभी आपही ने कहा था—'जिस सम्बन्ध मे बाते शुरू हो उनका पूर्ण परिचय दिये बिना समझने में असुविधा होती है। आज्ञा का पालन कर रही हूँ ।"

क्रोध मे आकर रायसाहब ने कहा, "चली बडी आज्ञा पालन करने वाली। एक बज रहा है, सोना हराम कर दिया ।"

स्त्रियाँ भी कोप करने मे कब पीछे रह सकती है ? उन्हे बदलते देरी नही लगती। बोली, "हॉ, अब तो आपको देरी हो रही है। दस बजे तक व्यापारियो को बैठाये गप्प मारते है, तब देरी नही होती, एक घटा यहाँ बातें करना कठिन हो जाता है। मुझे आये पन्द्रह वर्ष हो गये—एक दिन भी सीधे बात न की होगी । न जाने और स्त्री-पुरुष कैसे होते है, जीवन आनन्द से बिता लेते है, मनमुटाव तक नही होता ..."और कमला की ऑखे सजल हो आई ।

शय्या से उठकर रायसाहब कक्ष मे टहलते हुए सोच रहे थे, "वस्तुत आज इसका दिमाग खराब हो गया है। बार-बार मना करने पर भी वही उद्दंडता। दिन भर तरह-तरह के व्यापारियो से माथापच्ची करते थक जाता हूँ, और यहाँ भी वही बकवास। एक ओर श्रीमती जी बिगड खडी होती है, दूसरी ओर दूकान का काम हो जाता है—किसी मे गुजर नही।

इस दुनिया के छोटे-बडे सभी दु ख के ही पजे मे फँस कर कर्मभोग से छुटकारा नही पाते। यदि जीवन मे किंचित सुख हुआ भी तो उसका दूना दु.ख, लेकिन सुख-दु ख क्या एक दूसरे मे भिन्न है ? नही, भ्रम है। दोनो एक ही शक्ति के अग है । जिसने सुख को बनाया है, उसी ने दु ख को भी। जो सुख भोगता है, वही दु ख। भोगने के लिए अलग-अलग प्राणियो का सृजन नही होता, दोनो के एक ही ग्राहक है। इनके बँटवारे मे स्वय विधाता भी सफल न हो सके—'अपने कर्तव्य के अनुसार लोग खरीदते है। हमी स्वय सुख-दु ख के निर्माता है, केवल कल्पना से ही सुख-दु ख का अनुभव करते है, वस्तुत आज तक किसी ने सुख-दु ख के स्वरूप को नही देखा—फिर इनके लिए क्या चिंताएँ ?'

वेदान्त इन्ही अधकारो को दूर करने के लिए ज्ञान-ज्योति दिखाकर निमत्रण दे रहा है, पर माया-प्रपच से कोई प्रवेश करने का साहस ही नही कर सकता। पुरोहित जी से प्रतिदिन एक घटा विवाद होता है, किन्तु कोई लाभ नही।

यकायक रायसाहब की दृष्टि कमला पर पडी, वह रो रही थी। रायसाहब ने चौककर कहा, "अरे! यह क्या ? अभी नेता बन कर भाषण दे रही थी और अब........."

कमला ने अचल के एक कोने से आँखो को पोछकर भिगो लिया और चुप बैठी रही। रायसाहब ने सोचा, 'आखिर यह रोई क्यो ? मैंने तो कुछ कहा नहीं, बल्कि उलटे इसीने डाटा था। बकवास बद करने के लिए कहने पर रो देगी, कौन जाने ? नारियो की माया बडी विचित्र होती है। पास खडे होते हुए बोले, "क्यो रो रही हो ?" कमला पत्थर की मूर्ति सी मौन थी। क्रोध मे आकर, रायसाहब बोले "आखिर कुछ बताओगी भी ?"

कमला खडी हुई कुछ कहना चाहती थी, पर कठ रुँध गया। उसे मौन रह जाना पडा। रायसाहब ने कहा, "मैं खुशी मन से पूछ रहा हूँ, साफ-साफ बता दो।"

कमला का धैर्य बँधा। वह बोली, "मैं अपनी धृष्टता के लिए क्षमा चाहती हूँ।" वह चरणो पर गिरना चाहती थी। रायसाहब ने कमला की बाहुओं को पकडकर हृदय से लगा लिया और कहा—"मैं नाराज होकर बाहर तो जा नही रहा था, इतना क्यो घबरागई ?" आँखे चार हुईं और प्रेम-रस पान के लिए अधीर होठ फडक उठे।

: २० :

शान्ति जिस समय बुलानाला पर पहुँची, सडक पर सन्नाटा छाया हुआ था। रिक्शा, ताँगो पर आने-जानेवालो के अलावा कोई नही मिलता था। कही-कही गश्ती सिपाही मिलते थे, पर बच्चे का पता पूछने पर अनसुनी कर देते थे। कोई बहुत ही सज्जन हुआ तो कोतवाली मे इत्तला करने की सलाह प्रदान दे बढ जाता था। घण्टो परेशानी उठाने पर भी आशा नही दिखाई दे रही थी, फिर भी वह अपने कर्तव्य-पथ की ओर साहसपूर्वक बढती जा रही थी।

सिपाहियो के प्रति सोच रही थी—यह कैसे निर्दयी होते है। जरा भी तरस नही आता। रक्षक के स्थान मे होने के कारण दुखियो को इनसे मिलना पड़ता है, किन्तु इनका कर्तव्य, रक्षक के नाम पर पूर्ण भक्षक का होता है। पुलिस का नाम सुनते ही प्रत्येक प्राणी का हृदय काँप उठता है।

बिरला-घटाघर से चार बार टन-टन की आवाज़ हुई, शान्ति का ध्यान समय की ओर गया। उसने सोचा—ओह ! चार बज गये और अभी तक कुछ ही मुहल्ले मे घूम पाई। निराशा मे पैर आगे नही बढते थे, पर अपनी कर्मशीलता के बल पर वह चल रही थी।

मार्ग में गगा-स्नान करने वाले भक्तगण मिलने लगे। 'हर-हर महादेव' की ध्वनि से वे अपने आने का सकेत कर रहे थे। कोई 'राधेश्याम' कहता कोई 'सीताराम' कहता, आपस मे आमोद-प्रमोद के लिए "कृष्ण को 'माखन चोर' राम को 'जूठन खानेवाला' कह कर एक दूसरे को

चिढाने का प्रयत्न कर रहे थे। यहाँ तक कि छोटे बच्चों को मारने के लिए दौड पडते थे। "भाग ही तो गए, नही माखन चोर को मजा चखाता।" सुनने वाले ठठाकर हँसते और आनन्दित होते थे। किन्तु शान्ति अपने श्याम की तलाश मे सब भूली हुई थी।

गिरीश और श्याम के स्कूल से लौटने का दृश्य सामने था। भूख से श्याम के रोने पर गिरीश ने कहा था, अभी चलो, हम लोग नाग ले आवें और खेले, शाम को खाना खायेगे।" किन्तु शाम को मुझे लौटने भी न दिया। इसके पहले ही छोडकर श्याम चल दिया। हाय लाल, तू भी मुझ अभागिनी से अलग हो गया! मैं कहाँ जाऊँ? क्या करूँ? रोती गिरती, पडती वह आगे बढ रही थी। जिस किसी से पूछती, वह सहानुभूति प्रकट कर मौन रह जाता। शान्ति ग्लानि के भार से दबती जा रही थी—उबरना उसकी शक्ति के परे था।

भक्त-गणो के आनन्द में शान्ति का करुण-क्रन्दन बाधक हो जाता था। इस सुनहली ऊषा मे अमगल-शब्द कैसे? अचंभित हो लोग शान्ति के समीप पहुच जाते और बच्चा खोया जान कर स्वय को भी उस अमगलमयी भावना से न बचा पाते। इस ससार में आकर जिसने वात्सल्य-रस का रसास्वादन किया है, वही इसका अनुभव कर सकता है। एक मिट्टी के पुतले के खो जाने पर महान् दुःख होता है, जो केवल मनोरजन के लिए बनाया जाता है, तो मास-पिण्ड से बना हुआ, जिसकी असह्य कष्ट सहकर सेवा की है, ऐसे जीव-धारी के प्रति दुःखी होना जीव के लिए स्वाभाविक ही है।

इस ससार की यातनाएँ भोगने के बाद ही सुख, दुःख, ऊँच-नीच एवं भले-बुरे का ज्ञान होता है। अन्यथा स्वार्थमय जीवन अपने सुख के लिए दॉव-पेच मे भूला, फूला नही समाता। उसके सामने ससार के सारे कष्ट नगण्य है, किन्तु शान्ति के समक्ष ये सारी बाते नही हैं। उसने यातनाएँ भोगने के पहले ही ससारी कष्टो का अनुमान लगा लिया था। पडित जी ने उसे उपदेश देकर ससारी माया से परिचित करा दिया था।

पर उनके पीछे सारा ज्ञान न जाने कहाँ खो गया और वह अपने को भी न सँभाल सकी।

अब पाँच बजने मे कुछ ही क्षण शेष थे। गोपाल-मन्दिर की पूजा-आरती आरम्भ हो गई थी। छोटे बच्चे जाकर अपनी मा को पुकारते सुनाई पडते थे। शान्ति का हृदय जल उठता था, उसे भी श्याम कही माँ, कहकर पुकारता होगा। शान्ति ने सोचा—सवेरा हो गया है, शायद मेरा श्याम घर पहुँच गया हो, किंचित् पुलकित हो घर की ओर लौट पडी।

× × ×

श्याम सायकाल से माँ को खोजने के लिए भटक रहा था। इतनी घनघोर वर्षा हुई, सब उसके ऊपर ही। अपनी माँ को ढूँढने के लिए भक्त प्रह्लाद के समान सम्पूर्ण भय त्याग कर लग गया। वह रात्रि के अन्धकार में किसी तरह भटकता हुआ ठाकुर साहब के उपवन में जा पहुँचा और भूखा-प्यासा एक पेड के नीचे पत्थर पर सो गया।

× × ×

शान्ति घर की ओर जाते हुए सोच रही थी—यदि श्याम घर में आ गया होगा, तो नाइन उसका सत्कार करने में न चूकी होगी। कुछ खाने का भी प्रबन्ध कर दिया होगा, एक वही मेरे लिए सहारा है। और मुहल्ले के लोग मुझसे यो ही चिढते है। एक दिन कहा भी था—बेटी, चिन्ता न करो सब ईश्वर गुजर करता है। पन्द्रह रुपये महीने हमको मिलते है, इसी में तुम भी कुछ ले लिया करो, दिन काटना है। भगवान् बच्चो को आनन्दित रखेगा, एक दिन ये स्वय दूसरो की मदद करेगे। बडी ही भली है, एक तो इस मँहगी में पाती ही बहुत कम है, फिर भी सहायता करने के लिए रहती तैयार है।

सचमुच नाइन बड़ी उदार थी। धनवान होने पर तो सभी उदार हो सकते हैं, किन्तु गरीबी मे कोई नही। गरीबी में भी जो उदारता का परिचय देता है। वही वस्तुत बड़ा है।

शान्ति के जाने के बाद गिरीश को भूखा जानकर नाइन ने खाना खिलाया। गिरीश बहुत रात तक माँ के लौटने की राह देखता रहा, फिर यकायक सो गया और पाँच बजे जागा। जागते ही माँ को पूछकर रोने लगा। नाइन ने दौडकर गले लगा लिया।

शान्ति ने नाइन को द्वार पर खडी देख कर सोचा—श्याम अवश्य आ गया है, इसीलिए जल्दी बतलाने की उत्सुकता मे द्वार पर खडी है।"

शान्ति के बोलने से पहले ही नाइन श्याम को साथ में न देखकर बोली "कुछ पता नही चला।" शान्ति की आशाओ मे पानी फिर गया, कलेजे मे पुन शूल की पीडा होने लगी। रो-रो कर माथा पीटने लगी। नाइन हाथ पकडकर समझाने लगी।

माँ को इस हालत में देखकर गिरीश बहुत घबराया हुआ था, श्याम को लाने मे असमर्थ था। पर उसे विश्वास था कि श्याम अवश्य मिलेगा और वह दोनो एक साथ खेल-कूदकर आनन्द करेंगे, मा देखकर प्रसन्न होगी। वह बोला, "माँ घबराओ मत, श्याम का मैं पता लगाऊँगा, वह अवश्य खुश होगा।" शान्ति ने गिरीश को हृदय से लगा लिया और बोली, "बेटे तू ·· ···।"

: २१ :

प्रभावती शयन-कक्ष मे पहुँचकर सोच रही थी—मुझे पतिदेव के आदेश का पालन कर इस ससार के बन्धनो से मुक्त हो उन्हे प्रसन्न कर देना चाहिए। मैंने सब तरह से कहा; पर उन्होने एक न सुनी और अन्तिम क्षण भी कठोरता का ही परिचय दिया। अब मै किस मुँह से सामने जा सकती हूँ।

जीवन खोकर पति के आदेश का पालन करने में ही मेरा हित है, क्योकि पति-प्रेम के बिना स्त्री-जीवन निरर्थक है। ऐसे जीने से क्या लाभ ? सस र मे अपकीर्ति ही होगी। जब मैंने अपना प्रेम-सबंध स्थापित करने के लिए सामाजिक क्रान्ति कर नवीन-पथ का अनुसरण

बैठे ! नही, ऐसा नही। मै प्रार्थना करती हूँ कि तुम साहस मत छोड़ो, मेरा सब काम बिगड जायगा।"

प्रभावती को ऐसा ज्ञात होता था जैसे नेत्र समझा रहे हो—अब तुम अवज्ञा के अपराध मे मृत्यु-दण्ड भोगने क्यो जा रही हो। ठाकुर साहब ने तुम्हे दण्ड देकर अपराध मे मुक्त कर दिया है। यह भूल कर रही हो।

नेत्र स्तब्ध हो, अपनी जलधारा रोककर शात हो गये और अपने सहयोग का पूर्ण विश्वास दिलाकर आगे बढने का सकेत किया।

प्रभावती का ध्यान चाकू पर से नही हटा था, वह उसकी कालिमा पर सोच रही थी। यदि बीच मे अपने स्वरूप का परिचय दिया तो मै कही की भी न रहूँगी। बडी बदनामी होगी, अपने पतिदेव को सुखी भी न बना सकूगी।

चाकू को समझा रही थी—बडे-से-बडे कार्य अपने सहवर्गियो की सहायता से सफल बनाए जा सकते है। इस लोक की बात तो छोडिए साक्षात् ईश्वर को भी जन-शक्ति के द्वारा अपनी नीति बदलनी पडती है, किंतु चाकू के सहयोग से सफल होने में बाधा देख उसे वही रख दिया और वह भगवान् का स्मरण करने लगी .

भगवान् ! आपने दुर्योधन की सभा में द्रौपदी की जाती हुई लज्जा को चीर बढाकर बचाया था। क्या मेरी कर्तव्य-पालन मे सहायता न करोगे ? वह तो दयालु है उनके लिए यह कठोरता सोचना नादानी है। उनसे छोटा बडा जो कोई सहायता चाहता है वह सभी को देते है।"

बगीचे के एकात कुएँ का ध्यान आया, लेकिन बागवान तो उठ गया होगा ? चार बज चुके है, सहसा स्मरण आया—कल अपने घर गया था अभी दो दिन नही आयेगा। वही विश्राम मिलेगा।

घर में सभी सो रहे थे। सन्नाटा छाया था, पक्षियो का कलरव सुनाई पडता था। प्रभावती ने सोचा—सुबह सुनते ही ठाकुर साहब अपनी

आज्ञा के पालन पर खुश हो उठगे। वह बगीचे की ओर चल पडी। अन्तिम बार पति-दर्शन के लिए बैठक मे धीरे से गई, ठाकुर साहब लबे कोच पर पडे थे। दूर ही से प्रणाम कर सीढी से नीचे उतरने लगी।

× × × ×

ठाकुर साहब की भी गहरी निद्रा भग हो चुकी थी। प्रभावती के जाने की कुछ आहट उन्हे भी मालूम हुई, पर ध्यान न गया। आँखे खुलते ही किवाड खुले दिखाई दिए। वह उठकर बैठ गए।

रात्रि मे बहुत देर तक अपने कठोर व्यवहार पर-खेद कर रहे थे, पर बीती हुई बातो के लिए क्या कर सकते थे ? वे सोचते थे—प्रात काल होते ही मै अपने इस कटु व्यवहार के लिए प्रभावती से माफी माँगूगा। यह मेरी ज्यादती थी। मैने ही अपराध किया और उलटे दण्ड भी मैंने ही दिया। बार-बार मेरे डाटने-फटकारने पर भी प्रभावती मेरी प्रसन्नता के लिए ही कार्य करती रही। अन्तिम क्षण मे भी सेवा करने के लिए ही प्रस्तुत हुई, किंतु मझे उस समय भी दया न आई ? एक साधारण गॉव का आदमी भी इस तरह नारी की ताडना करने के लिए तैयार नही हो सकता, फिर एक पढे-लिखे आदमी का शिक्षित नारी के प्रति यह व्यवहार बहुत ही अनुचित था। मैंने बहुत बडा अपराध किया।

बिना सोचे-विचारे आवेश मे आकर कार्य करने का यही फल होता है। धैर्य से कार्य करने वाला व्यक्ति कभी धोखा नही खाता, सदा उन्नति-शिखर पर चढता है। प्रभावती ने क्या यही सोच कर मेरे यहाँ आने का प्रयत्न किया था ? मुझ जैसा धृष्ठ शायद ही कोई पुरुष हो, जो अपनी विदूषी पत्नी का इस तरह अपमान करे। जिस तरह हो सकेगा मै उसे प्रसन्न करने का पूर्ण प्रयत्न करूँगा।

ठाकुर साहब को किवाड खुले होने पर प्रभावती के बाहर निकलने का सन्देह हो गया। अदर प्रवेश कर शयन-गृह देखा, सूना था। सामने खुला चाकू पडा था—सन्न रह गए। यह क्या ? ससार त्याग

कर प्रभावती मुझे कलंकित करना चाहती है। पर गई कहां ?

ठाकुर साहब प्रभावती को प्रभा के नाम से सम्बोधित करते थे, सामने न देख आवाज लगाई—प्रभा ! प्रभा ! किन्तु प्रभा यदि वहां हो तो बोले।

× × × ×

वह घर से निकल कर कूप पर पहुँची। नीरव वातावरण में अपने को विशाल कूप में प्रविष्ट कर ससार से मुक्ति चाहती थी, लेकिन कूप में रहने वाले जीव-जन्तु उसे अपनाने में लाचारी प्रकट कर रहे थे। पति से तिरस्कृत नारी का मृत्यु भी अनादर नही करती। विधि के विधान को मिटाने की उसमे सामर्थ्य नही। इसलिए पाप-कर्म की ओर प्रवृत्त होती है और अपना कल्मष धोने के लिए नारियो के सौभाग्य का हरण करती है। ओह ! पुरुष से अपमानित स्त्री ससार का सब से बडा अनिष्ट करती है।

जल-मध्य रहने वाले जीव-जन्तुओ की इस विचार-धारा से प्रभावती दबी जा रही थी। चारो ओर से उसे" "की ही ध्वनि गुंजित मालूम होती थी। प्रभावती बडी ही उधेडबुन मे थी। वह सोच रही थी—जल-थल मे रहने वाला प्रत्येक जीव उससे घृणा कर रहा है, और पति ने तिरस्कृत ही कर दिया है, अब मैं कहां जाऊँ ? वापस लौटने पर पुन: उन्हे कष्ट होगा, अब मैं न जाऊँगी। तुम्हे शरण देनी ही होगी। ठाकुर साहब का चित्र सामने आया तो तुरन्त जलराशि मे प्रवेश कर प्राण देना चाहती थी।

दोनो भुजाएं ऊपर उठी, कमर पीछे हो गई और सिर आगे की ओर तन गया। जल को स्पर्श कर शब्द करना अवशेष था। ज्यो ही पूर्ण करना चाहती थी, कि पीछे से दौड कर श्याम ने साडी पकड कर खीचते हुए कहा, 'मां।' प्रभावती चौक कर खडी हो गई। बांहे नीचे को झुक गई। बालक की ओर देखते हुए उसने कहा, "मेरे पवित्र कार्य

में बाधा पहुँचाने के लिए कौन आ गया।" प्रभावती की चढी भौंहे देख श्याम भयभीत हो गया।

प्रभावती का विवाह हुए कई वर्ष बीत चुके थे, किन्तु वह 'माँ' कहलाने की अधिकारिणी नही हुई थी। 'माँ' शब्द सुनते ही वहचौंक पडी और अपनी साडी छुडाते हुए दूर करने का प्रयत्न करना चाहती थी, कि नारी—हृदय वात्सल्य छल-छला आया वह पति को प्रसन्न करने के बजाय पुत्र को प्रसन्न करने की चेष्टा मे लग गई।

श्याम को देखकर प्रभावती ने अनुमान लगाया,—इतना छोटा बच्चा यहाँ कैसे आया ? इसकी माँ यहाँ आई है क्या ? जो उसकी लापरवाही से यह यहाँ भटक आया। इधर-उधर देखा तो कोई दिखाई दिया। रोते हुए बालक को उठाकर गोद मे ले लिया और गालो पर थपथपी लगाते हुए कहने लगी, "मत रोओ बेटे !" और हिलाडुला कर हँसाने की कोशिश करने लगी।

श्याम बार-बार प्रभावती के मुख की ओर देखकर सोच रहा था. 'मेरी माँ तो ऐसी नहीं थी, पर बोलती माँ की ही तरह है।' प्रभावती ने सोचा—'मुझे अपरिचित जानकर बार-बार मेरे मुख की ओर देख रहा है' उसे देखकर वह अपनी सारी चिन्ताएँ भूल गई।

श्याम गोरा, छोटा, किन्तु मोटा तथा देखने मे सुन्दर, चौखाने की जाँघिया व कमीज पहने बहुत अच्छा लग रहा था। वह बार-बार चुम्बन कर आनन्दित हो रही थी। प्रभावती ऐसे खिला रही थी मानो उसी का बच्चा हो। श्याम सुबह से भूखा था। सध्या को ही खाने के लिए उपद्रव मचाया था, किन्तु शान्ति भोजन का प्रबन्ध कर लौटी नही और श्याम घर छोड कर निकल पडा। माँ पा जाने पर कैसे सतोष कर सकता था। खाने के लिए कहना ही चाहता था कि प्रभावती ने ही पूछा, "खाना खाओगे"। खाना शब्द के सुनते ही श्याम व्याकुल हो गया और उसके मुख पर बेचैनी की रेखा दौड गई।

प्रभावती को बच्चे की मुख-मुद्रा देखकर समझने मे देर न लगी।

श्याम को गोदमे लिए घर की ओर चल पडी। गई थी इस ससार की यात्रा समाप्त कर पतिदेव को सुख देने पर सब कुछ भूल कर बालक लेकर उसे जल्दी खाना देने की चिन्ता मे घर लौटी। अपने कमरे में पहुँचकर कुर्सी पर श्याम को बैठा दिया और आलमारी खोल कर मिठाई निकाली। फिर एक तश्तरी मे रख कर उसे खिलाने लगी।

श्याम बहुत भूखा था। दोनो हाथ से खाने का प्रयत्न कर रहा था। रह-रह कर खाँसी आ जाती। प्रभावती ने कहा, "बेटे! धीरे-धीरे खाओ।" उठ कर गिलास मे पानी दिया। इतना छोटा बच्चा डेढ गिलास पानी पी गया। प्रभावती को आश्चर्य हुआ—'ओह! कितना प्यासा था?' पूछा, "और खाओगे ?" श्याम ने सिर हिलाकर मना किया। उसे फिर गोदमे लेकर प्रभावती कोठरी मे टहलने लगी। घडी मे टन-टन पाँच बजे।

: २२ :

शान्ति आपबीती सारी घटना नाइन मे बतला रही थी,—कल शाम बच्चो के खाने के लिए घर मे कुछ न था। मै तो कई दिन से उपवास कर ही रही थी, लेकिन बच्चो के लिए किसी-न-किसी प्रकार मैं इन्तजाम कर ही लेती थी। कल सायकाल किसी तरह प्रबन्ध न कर सकी। घर मे कोई जायदाद भी नही थी, और बिना जायदाद के मुझे कौन रुपया दे सकता था ? बच्चो का तरसना न देखा गया—उन्हे अकेले घर मे छोड मुहल्ले के सेठ के यहाँ मकान बेचने चली पहुँचगई।

सेठ जी ने मेरे मकान के कुल पाँच सौ रुपये देने को कहा। मैने कुछ और बढाने के लिए कहा, पर सेठ जी ने अनसुनी कर दी। उस समय मेरे सामने कोई उपाय न रह गया। घर के लिए वापस लौट पडी। फिर सहसा याद आया—ठाकुर संग्रामसिह जी भी गरीबो की कुछ मदद कर देते है। वहाँ से गोबर्धनसराय पहुँची।

शान्ति की बात समाप्त न हो पाई थी कि नाइन कहने लगी, "हाँ, ठाकुर साहब बडे परोपकारी है, गरीबो की सहायता कर देते हैं। महाजनो

जैसा गिच-पिच नही करते । साथ ही जितने का माल होता है, उतने रुपये देने मे कजूसी नही करते । इसके अलावा गिरबी पर भी रुपया देकर गरीबो का काम चला देते है । बडे भले आदमी है ।"

शान्ति नीच प्रकृति के आदमी की बडाई सुनते हुए सोच रही थी—ससार मे जिस मनुष्य का सम्मान होता है वह भी अपने पथ को भूल कर पतित हो जाता है । नैतिक बन्ध के लिए छोटे-बडे का कोई प्रश्न नहीं है । नाइन की बात खतम होने पर बोली

"लेकिन, मेरे साथ तो उन्होने भले आदमी का काम नही किया । दूसरो के लिए होगे ।"

"क्या कोई बात हो गई है ?"

शान्ति बतलाने मे कुछ सहमी, फिर बोली, "सहायता करना तो दूर रहा, मेरा धर्म बिगाडने पर ही तुले थे । ईश्वर ने मदद की, धर्म बच गया, यही सबसे बडी सहायता हुई ।"

नाइन शान्ति की बात सुनते ही सन्न हो गई । स्वाँस खीचती हुई बोली—मै तो समझती थी, बडा आदमी है, सच्चरित्र होगा, किन्तु पाप करने मे ही बडा है । ऐसे नीच के यहाँ तुम क्यो गई थी । भगवान् ने जन्म दिया है, तो किसी तरह गुजर होता ही है ।

"यदि मै न जाती तो कर्म-भोग कैसे पूरा होता ? अच्छे-बुरे की पहचान तो सम्बन्ध स्थापित करने से ही होती है ।"

नाइन चुप होगई । आगे बोलने के लिए उनके पास कोई शब्द न था । मन मे सोच रही थी—पाप करने मे लोगो को थोडा भी भय नही लगता । मनमानी करने को तैयार हो जाते है । बेचारी शान्ति अपना दुःख लेकर गई थी, धर्म जाने की नौबत आगई । यदि धर्म ही बेचना चाहती तो क्या वे ही भर पुरुष थे, फिर इतना कष्ट भोगकर इस परिस्थिति को ही क्यो पहुँचती ? ससार से धर्म उठ गया । वैसे ही अग्रेजी पढ-लिख कर लोग धर्म को कुछ नही मानते । बहू-बेटियों की इज्जत तो साग-

भाजी होगई । जिसकी जब इच्छा हो मोल-भाव करके ले ले। भगवान् जाने क्या होने वाला है ?"

शान्ति ने नाइन से कहा, "चुप क्यों हो गई ? इस संसार में भले-बुरे के पहचान् के लिए बडे कटु अनुभव की आवश्यकता है। किसी के वेष-भूषा मात्र से चरित्र के सम्बन्ध मे निर्णय नही किया जा सकता। अभी तुमने ठाकुर साहब के लिए शिष्ट शब्दो का प्रयोग किया; किन्तु मेरे साथ उनके व्यवहारो को जानने पर अशिष्ट शब्दों का प्रयोग करने मे भी सकोच नही किया। अपना कृत्य ही भला-बुरा बना देता है। उसके लिए हम तुम या कोई क्या कर सकता है ?"

नाइन ने कहा, "ठीक कहती हो, बेटी ! एक ही आदमी किसी के लिए अच्छा और किसी के लिए बुरा भी है। अपने व्यवहारो से तरह-तरह की उपाधियो से विभूषित होता है। बुरे कामों से उसकी भी आत्मा दुःखी होती होगी; किन्तु स्वार्थ उसे अधा बना देता हे।"

शान्ति 'श्याम की याद कर रोने लगी। नाइन ने कहा "रोती ही न रहो, कुछ धैर्य रखो। भगवान् चाहेगा तो 'श्याम' अवश्य मिलेगा। परसाल हरिद्वार मे सेठ मुरारीलाल का पॉच-छ: वर्ष का लडका खो गया था, साल भर बाद अभी पिछले महीने मिला है। घबराने की कोई बात नही। गिरीश भूखा है, देखती नही। सवेरा हो गया चलो नहा लो। मैं सब इन्तजाम किये देती हूँ, चार रोटी सेक लो, चार दिन से तुम ने भी नही खाया। बिना खाये जी न चलेगा। और रह भी नही सकती। फिर एक बच्चे के लिए इतनी दुःखी हो रही हो, और दूसरे के लिए जो भूखा-प्यासा सामने खडा है, उसकी कोई चिन्ता नही है।"

"रात मे तुम्हारे चले जाने के बाद सोते हुए खाने के लिए रो पडा था। मेरे पूछने पर बतलाया—'मेरा माथा दर्द कर रहा है।' मैंने रात में ही चूल्हा जलाया, रोटी बनाई और इसे खिलाई। खाई तो दो ही रोटी, बल्कि दो-तीन रोटियाँ अब भी पडी है। गिन कर पाँच

रोटियाँ बनायी थी ।"

शान्ति नाइन की बाते सुनती हुई सोच रही थी—किन्तु, अधीर हृदय श्याम को पाने के लिए विह्वल हो उठता था। नाइन उठी और शान्ति की बाँह पकड कर बोली

"बेटी, चलो नहा लो, देरी मत करो । आठ बज गये है।"

कुछ आश्चर्यपूर्वक शान्ति ने कहा, "आठ बज गये है ! मुझे आठ बजे से रायसाहब के यहाँ काम करने जाना था।"

नाइन ने कहा, "कोई बात नही है। कभी आध घंटे मे सब तैयार हुआ जाता है। नौ बजे तक पहुँच जाओगी।"

लेकिन, पहले ही दिन से इस तरह का व्यवहार अपने व्यक्तित्व के लिए हानिकारक होता है। एक तो कल बातचीत तय होते ही कर्ज मे एक सेर आटा माँगा। उन्होने सोचा होगा—बडी धृष्ट औरत है, पर क्या करती और समय से पहुँची नही, दु:ख की बात है।"

"यह ठीक है बेटी, लेकिन दु:ख की बात न होती तो देरी ही क्यो होती। आपत्ति का पहाड टूट पडा है, क्या रायसाहब इस दुनिया से अलग है ? सही बात बतला देना, कुछ न कहेगे। मुसीबत मे कठोर आत्मा भी पिघल जाती है। फिर रायसाहब जैसे दयालु कभी नाराज नही हो सकते।"

शान्ति उठी और नाइन के साथ नहाने चली गई। रोज गंगा-स्नान करने जाती थी, पर उस दिन समय न था। अन्दर-कुएँ ही पर गई। नाइन ने पानी निकाल कर दिया, शान्ति नहा-धोकर निवृत्त हो गई। नाइन ने ही बाहर से सब मदद कर दी। शान्ति ने तुरंत खाना बनाया, गिरीश को खिलाया और दो रोटी स्वयं खाकर रायसाहब के यहाँ जाने को तैयार होगई।

गिरीश को नाइन के पास समझा-बुझा कर छोड दिया और चल ...नौ से अधिक हो रहे थे । शान्ति के बच्चे नाइन से खूब हिले थे अतः उनके साथ रहने मे गिरीश थोडा भी नही हिचकिचाया।

गिरीश सुबह से ही लडको के साथ नाग बेचने की सोच रहा था। एक दिन पहले से ही मोहन के दिये हुए पैसा से नाग खरीद लाया था, पर वे थे सब श्याम के पास। श्याम ने नाग को अपने हाथ से अलग नही छोडा। चुपचाप घर मे चारो ओर देखकर हताश हो गया। नाग तो श्याम के साथ घर से बाहर निकल कर पानी मे समाप्त हो गये होगे। कागज के नाग कब तक सुरक्षित रह सकते थे, फिर श्याम हाथ से।

बालको का झुंड एक स्वर से, "छोटे गुरू का बडे गुरू का नाग लो" गाते हुए चतुर व्यापारियो की भाँति मुहल्ले मे चक्कर लगा रहे थे। गिरीश अकेला होने के कारण दुखी घर मे पडा था और अपने भाई से मिलने के लिए उत्सुक था, पर परिस्थितियो से बँधा था।

मौहन गिरीश की ओर से कई बार निकला पर गिरीश दिखाई न दिया। वह सोच रहा था—क्या बात हुई, कही गिरीश की माँ ने पैसा लेने के लिए डाँटा तो नही ? आदि तरह-तरह की कल्पनाएँ करता हुआ उदास अपने साथियो के साथ घूम-घूमकर नाग बेच रहा था। गिरीश भी मोहन के साथ नाग बेचने के लिए उत्सुक था, किन्तु श्याम के खो-जाने के कारण मनोरथ पूर्ण करने मे असमर्थ था।

× × × ×

मुहल्ले के सुप्रसिद्ध पहलवान श्री देवीदयाल अपने दल-बल के साथ टाउनहाल के मैदान मे सात बजने के पूर्व पहुँच चुके थे। दर्शको की अपार भीड से मैदान ठसाठस भरा था। पुलिस के सिपाही सभी को ढग से बैठाने मे लगे थे। किसी ओर से भीड आगे बढते देख, कोतवाल साहब सिपाहियो को डॉटने लगते थे। दर्शको की भीड बराबर बढती जा रही थी; किन्तु पुलिस के सिपाहियो ने पहले से ही उसे अपने काबू मे कर रखा था।

देवीदयाल का जोडीदार पहलवान सुखराम भी अपने दलबल के साथ

समय पर पहुँच चुका था। सात बजने वाले थे, दोनो पहलवान कपडे उतार कर अखाडे मे कूद पडे। उत्सुकता से लोग देख रहे थे। कुछ मिनटो मे निर्णय हो जाना था। बूढे, बच्चे, कुछ लोग बैठने से न देख पाते तो खडे होकर देखने का प्रयास करने लगते थे, पर सिपाहियो द्वारा एक क्षण भी खडे न रहने पाते—अपने स्थान मे ही दबकर बैठ जाना पडता। दोनो पहलवानो मे सुखराम शरीर से ड्योढा था और अवस्था मे देवीदयाल। सुखराम नवयुवक होने के साथ ही बडे शरीर वाला था, अत लोग देवीदयाल के हार जाने का अन्दाज लगा रहे थे, और सोचते थे कि देवीदयाल बेकार ही विजय पाने के लिए तैयार हुआ। कही ऐसा न हो जाय कि विजय पाने के बजाय प्राण ही गवाँ बैठे। लेकिन जो देवीदयाल को जानते थे उन्हे ऐसा भ्रम न था। वे सोचते थे—कद से कुछ नही होता, इतने बडे हाथी को सिह एक छोटा सा जानवर दबा लेता है। देखे कौन विजयी होता है।

बीच मैदान मे करीब पन्द्रह हाथ लम्बा-चौडा, ऊंचा अखाडा तयार किया गया था। उसी पर घूमते हुए दोनो पहलवान दिखाई दे रहे थे। कोतवाल साहब, दो सम्मानित नागरिको को साथ लेकर चबूतरे पर उपस्थित हुए और दोनो योद्धाओ की तलाशियां ली। इसके बाद ठीक सात बजने पर मल्ह युद्ध के लिए आदेश दिया।

दोनो पहलवानो ने अपने-अपने हाथ आगे बढाये और सलामी कर अपने-अपने दाव-पेच से एक-दूसरे को परास्त करने के लिए प्रयत्न कर रहे थे। विजयी पहलवान को एक हजार का पुरस्कार भी मिलना था। केवल पाँच मिनट में भाग्य तथा बल का निपटारा होना था। इससे अधिक समय पर हारने-जीतने वाले को कोई पुरस्कार न दिया जायगा। यह पहले से ही दोनो पहलवालों को मालूम था। लडते-लडते ऐसा मालूम होने लगता कि एक नीचे गया, किन्तु फिर बराबर। चार मिनट समाप्त हो चुके, अब वे पुरस्कार पाने के अधिकारी नही मालूम पडते थे। सुखराम के शरीर से देवीदयाल दब जाता था। अधिक लोगो

का ख्याल सुखराम के जीतने का था। दाव पलटा और क्षण मे ही सुखराम भूमि पर चित होगया। अपार करतल-ध्वनि मे आकाशगूंज उठा। देवीदयाल सिंह की तरह गरदन ऊँची किए विजयोल्लास में मस्त खड़ा था। चारो ओर से जयनाद होने लगा।

कोतवाल साहब ने भीड को शान्त कर विजयी पहलवान को पुरस्कृत करने के लिए 'माइक्रोफौन से' दो तीन बार आवाज़ दी। आवाज़ आने से लोग चुप हो बात सुनने के लिए उत्सुक हो चबूतरे की ओर देखने लगे।

नगर के सम्मानित तथा काशी म्युनिसिपल बोर्ड के चेयरमेन श्रीकुंजबिहारी एडवोकेट लाउडस्पीकर के सामने खडे होकर बोले उपस्थित सज्जनो,

आज नागपचमी के उपलक्ष मे इस मल्ह युद्ध का आयोजन किया गया था। इस पुनीत पर्व से आप सभी महानुभाव परिचित है, मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नही। आज के दिन भारत का प्रत्येक बच्चा अखाडे मे उतरकर युद्ध करने के लिए उत्साहित होता है। काशी नगरी की विशेषताओ की देवताओ ने भी भूरि-भूरि प्रशसा की है। वस्तुत इस नगरी के कार्य ही इतने पुनीत है कि सभी को प्रशसा करनी पडती है। नागपञ्चमी का त्योहार जितने सुन्दर ढग से काशी में मनाया जाता है शायद ही दूसरी जगहो मे मनाया जाता हो।

आज के मल्ह-युद्ध में विजयी होने के उपलक्ष मे नगर के सुप्रसिद्ध पहलवान श्री देवीदयाल जी को काशी म्युनिसिपल बोर्ड की ओर से एक हज़ार रुपये पुरस्कार मे दिये जाते है। भावी युवको से आशा है, वे भी वीर बन इस तरह के पुरस्कार पाने के अधिकारी होगे।

चेयरमैन साहब ने थैली उठाकर देवीदयाल के हाथो मे रख दी। पुरस्कार स्वीकार कर देवीदयाल फूले न समाते थे। चेयरमैन साहब की उदारता से मुग्ध हो धन्यवाद देकर देवीदयाल एक ओर बैठ गये।

चेयरमैन साहब ने आगंतुको को धन्यवाद देकर मल्ह युद्ध का कार्य-क्रम सामाप्त होने की सूचना दे दी। रेकार्ड बजने लगे। अपने को भूल मत जाना, दुनिया है ... ... सब अपने घरो की ओर चल पड़े।

देवीदयाल के पीछे हजारो की तादाद मे भीड आगे बढ रही थी। उसके मुहल्ले मे चारो ओर क्षण में खुशी फैल गई।

× × × ×

नाइन ने गिरीश से कहा, "बेटे, चलो देखे बगल वाले देवीदयाल आज दगल से जीत कर आये है, बाजे बज रहे है। गिरीश उठा और नाइन के साथ चल दिया। घर से बाहर होने के पूर्व ही एक टोकरी मे मिठाई लिए हुए दो युवक सामने आये और एक दोना मिठाई देते हुए कहा, "आज देवीदयाल दगल में जीत कर आये है, खुशी में मिठाई बँटवा रहे हैं। नाइन ने दोना लेते हुए कहा, "बडी खुशी की बात है। युग-युग जिये।" दोनो युवक आगे बढे। नाइन ने दोना गिरीश के हाथ मे दिया। गिरीश ने कहा

"मुझ से न खाई जायगी। श्याम के लिए रख दो।"

गिरीश के भोले उत्तर को सुनकर नाइन की आत्मा पिघल गई। दोने मे से दो बरफी निकालकर गिरीश के हाथ में रख दी। वह इमरती भी रखना चाहती थी, किन्तु गिरीश ने लेने से इकार कर दिया।

गिरीश मिठाई खाने लगा और कुछ देर तक नाइन भी खडी चहल-पहल देखती रही। फिर गिरीश को साथ लिये स्वय नहाने-खाने चली गई। दिन भर गाने-बजाने से मुहल्ले मे काफी चहल-पहल रही।

: २३ :

रायसाहब हमेशा छ वजे के पहले उठकर टहलने निकल जाते थे। एक घटे बाद लौट कर स्नान, पूजा-पाठ से निवृत्त हो आठ बजे पुरोहित जी से बाते करने के लिए तैयार हो जाते थे, लेकिन रात

अधिक देर तक जगने के कारण आज सात बजे तक सोकर न उठ सके।

रायसाहब के सुबह उठने के कई कारण थे। काशी में ही नही, सपूर्ण तीर्थस्थानो मे ही प्रात काल गगा-स्नान करने वाले धार्मिक-बन्धु भजन करने चल देते है। काशी की गलियो मे चार बजे से ही 'हर हर महादेव' की ध्वनि गूँज उठती है और अलसाये हुए व्यक्तियो को नवचेतना दे जाती है। चारो ओर शिव-मदिरो के घटा-नाद से आकाश गूँज उठता है।

रायसाहब अपनी कोठी मे ईशान कोण के दो मजिले कोठे पर शयन करते थे। पूर्व-उत्तर दोनो ओर से लम्बी गलियाँ निकली थी। आदमियो के आने-जाने की आहट एव भजनानदियो के कोलाहल से आँखे खुल जाती थी, किन्तु उस दिन उनकी नीद मे कोई बाधा पहुँचाने मे समर्थ न हो सका।

कमला की नीद छ बजे के पहले ही खुल गई। वह रायसाहब के अधिक देर सोने में विघ्न डालना चाहती थी, क्योंकि रायसाहब का आदेश भी था कि वह यदि किसी कारण से अधिक देर तक सोते रहें तो छ बजे बाद जगा दिया जाय। कभी-कभी इस आदेश का पालन कमला ने किया भी था, किन्तु उस दिन वह सोच रही थी—कही नाराज न हो जायँ। इसलिए जगाने का साहस न कर सकी; क्योकि रात वह कुछ नाराज हो चुके थे।

सात से अधिक हो जाने पर रायसाहब की नीद न खुली। साढे सात बजने ही वाले थे। कमला ने देखा—अभी गहरी नीद मे ही मस्त है। पास जाकर वापस लौट आई। जगा न सकी। खट-खुट कुछ आवाज भी की। लेकिन रायसाहब की नीद न टूटी।

पुरोहित जी प्रतिदिन आठ बजे के करीब आते थे, लेकिन उस दिन जल्दी मे साढे सात बजे ही आगये। बैठक सुन-सान थी। बगल की कोठरी, जिस मे रायसाहब पूजा करने बैठा करते थे, वह भी बन्द थी।

पुरोहित जी ने सोचा—आज रायसाहब सुबह ही कहीं चले गये हैं क्या ? बिल्कुल सुनसान दिखाई पडता है। बद्री नौकर के लिए दो तीन आवाजें लगायी।

पुरोहित जी की आवाज पहचानकर बद्री तुरत हाजिर हुआ। पैर छूकर प्रणाम किया और बैठने के लिए प्रार्थना की।

पुरोहित जी बैठते हुए बोले, "क्या कर रहे थे ?"

बद्री ने हाथ जोडकर कहा, "किछु नाही महराज, पानी भरत रहली।"

"अच्छा, रायसाहब नही है ?"

"नाही, हउँअँइ"

'क्या कर रहे है ?"

"आजु अभेन तनिक सोयल हउँअँइ।'

"क्या बात है, तबियत तो खराब नही है ?"

"सँझया मजे मे रहल हँ, फिन नाही जानित का भवा, बहू जी बहुत बेर में उठने हउँअँइ। किछु कहली नाही।"

"अच्छा, देखो पता लगाओ, क्या बात है ? अब तक सोये है ? वैसे तो सदा छ बजे उठ जाते थे।"

पुरोहित जी के आदेश का पालन करने के लिए बद्री अन्दर गया और बहू जी से पुरोहित जी के आने का समाचार बतलाया। कमला ने कहा, "जरा देखो, रायसाहब अभी सोये ही है ?" बद्री ने देखा, रायसाहब सिल्की चादर से मुख ढँके खर्राटा मार रहे हैं। आकर बताया—"अभेन नाही जगले।"

कमला जरा भौंह सिकोडकर बोली—जरा किवाड खट-खुट कर दे, जग जायँगे।"

भयभीत हो बद्री ने कहा, "नाही, बहू जी हमा ना भेजी।"

"डरता क्यो है, साढे सात से ऊपर हो रहे है, अब भी न उठेंगे।"

"बहू जी, हम नौकर ठहरली, हमें मालिक बरे डरइन चाहे।"

चिढ कर डाटते हुए कमला ने कहा "अच्छा मारी बैंरिस्टरी यही समाप्त कर लेना, जाता नही। जाओ, पुरोहित जी का बतला दो कि बहू जी जगाने गई है, अभी आते है।"

बद्री बहू का आदेश पाकर पुरोहित जी के सामने उपस्थित हो, बोला, "बहू जी जगावइ करे जयल हउँअँइ।"

पुरोहित जी लम्बी श्वाँस लेते हुए बोले, "अच्छा।"

बद्री अपना काम करने चला गया, पुरोहित जी रायसाहब की प्रतीक्षा करते रहे। मन-ही-मन सायकाल के विवाद पर सोच रहे थे—कही आज भी रायसाहब दान के सम्बन्ध मे विवाद न करे, क्योकि उन्ही के दान के द्वारा पुरोहित जी के परिवार का पालन-पोषण होता था। अत उसे नीच बतलाना जरा अशोभनीय था। इस पर वाद-विवाद करना पुरोहित जी उचित नही समझते थे।

× × ×

कक्ष मे पहुँचकर कमला ने कहा, "अभी खर्राटा ही चल रहा है।" जगाने के लिए कहने लगी, "पुरोहित जी बहुत देर से बैठे है, नहाने को भी देरी हो रही है।" किवाड की खुट-खुट आवाज से नीद टूट गई। चादर उठाई तो सामने कमला को खडा देखा। उठकर बोले, "क्या समय है ?"

कमला ने मुस्करा कर कहा, "अभी देरी नही हुई, आठ तो बजे ही है।"

आश्चर्य से रायसाहब ने कहा, "आठ बज रहे है ! अब तक जगा क्यो नही दिया ?"

कमला ने कहा, "मैने सोचा कही अपराधिनी न बना ली जाऊँ।"

"अच्छा, और सब कामो के लिए नही सोचती हो, जगाने के लिए सोच बैठी। कमला मौन रही।" रायसाहब कपड़ा सँभाल कर पलँग से अलग हुए। हाथ-मुँह धोकर हाथ पोछ रहे थे, तब तक कमला ने बताया—पुरोहित जी बहुत देर से आये है रायसाहब। पुरोहित जी को

आया जानकर बाहर निकले। बैठक मे कुछ विचार करते हुए पुरोहित बैठे थे। रायसाहब ने प्रणाम करके कहा—"बैठिए, पुरोहित जी, आज मै अभी तक सोता ही रहा, अभी उठ रहा हूँ। विलम्ब के लिए क्षमा कीजिएगा। आज्ञा हो तो दस मिनट मे नहा धो कर हाजिर होऊँ।"

× × ×

पाँच-छ दिन पहले एक ब्राह्मणी कमला से काम करने की बात कर गई थी, फिर न लौटी। उस दिन वह काम करने के लिए तैयार होकर आई थी। कमला नहा-धो चौके मे जाना ही चाहती थी कि तब तक उस ब्राह्मणी ने पहुँचकर नमस्ते की। कमला ने भी नमस्ते की और बोली—"कहो महाराजिन, कैसे चली गई। उस दिन से तो तुम्हारा पता ही न चला।"

"हाँ, बहू जी! कुछ झझटो मे पड गई थी। इसलिए आज तक सेवा में हाजिर न हो सकी।"

"तुम्हे कही काम मिल गया ?"

"नही बहू जी, उस दिन आपने काम करने के लिए कहा था इसलिए आज से काम करने के लिए सोच कर आई हूँ।"

लेकिन कई दिनो मे तुम्हारा पता न चला। हमने सोचा—शायद न आओ। रायसाहब ने स्वय कल शाम को आज आठ बजे से एक महाराजिन के लिए कह दिया है। बिना उसके जवाब दिए तुम्हे कैसे रख सकती हूँ ? फिर उस दिन तुमने कुछ कहा भी नहीं था। यदि तुमने यह कह दिया होता कि चार-पाच दिन बाद से काम करोगी, तो तुम्हारा इन्तजाम कर लेती।

"हाँ, बहू जी! मैंने तो कुछ नही कहा, लेकिन अब तो आठ से ऊपर हो रहा है।"

"हाँ, आठ से ऊपर हो रहा है। पर घटे-आध घटे की कोई बात नही। यदि आज न आई, तो कल से तुम्हे रख लेंगे।"

कमला चौके में प्रवेश कर आग सुलगाने लगी। महाराजिन ने

कहा, "दीजिए मै आग सुलगा दूँ" पखी लेकर आग जला दी और पूछा, "क्या चढ़ाना है ?' कमला ने एक पतीली में चाय के लिए पानी रख दिया।"

रायसाहब चाय पीने के आदी नही थे, किन्तु कमला एक दिन भी बिना चाय के नही रह सकती थी। उसे खाना न मिले, पर चाय जरूर मिले। आलमारी खोलकर तश्तरियो मे मिठाइयाँ रख, तथा चाय, चीनी, दूध सब चीजें ट्रे में रख कर बद्री को बुलाकर कमला ने कहा, "चाय बैठक मे पहुँचा दो, और देखकर आना कौन-कौन है।"

बद्री ने बेठक मे चाय रख दी और वापस आकर बोला, "महराज बैठल हउँअहु, औ मालिक नहाय बरे गयल हउँअँड।"

रायसाहब ने आवाज दी, "बद्री मेरा कुरता लाना" कुरता लेकर बद्री हाजिर हुआ। कमला भी बैठक मे पहुँचगई। पुरोहित जी से प्रणाम करती हुई बोली .

"पुरोहित जी, कल आप दान देनेवालो को पापी बतला रहे थे। जब आप ही लोग शास्त्र के वचनो को न मानेंगे तो और कौन मानेगा ?"

पुरोहित जी ने हसते हुए कहा, "नही-नही, दान देने वालो को हमन पापी नही बताया, बल्कि काम करने योग्य आदमियो को दान देकर उन्हे काम चोर बनानेवालो को बताया है। गरीबो तथा अपगो को भीख देना बुरा नही बताया है।"

"कमला ने कहा, लेकिन, जो आदमी अपने बाहुबल से खाने के लिए कमा सकता है, वह भीख माँगने के लिए कही तैयार ही नही हो सकता। जिसे कोई साधन नही मिलता, वही दान लेकर अपना पेट पालता है।"

"नही, बहू जी ! ऐसी बात नही है। भीख माँगना भी एक व्यवसाय हो गया है। दिन भर काम करते हैं, सुबह शाम कुछ देर माँग लेते है। खाने के लिए मिल जाता है। और काम में पाये हुए पैसे से गहने

बनवा लेते है, नशे का काम चलाते है। मै तो प्रतिदिन देखता हूँ, सैकडो ऐसे भीख मांगने वाले मिलते हैं कि जो महीने-दो महीने खाने भर के लिए जेवर पहने रहते है और भीख मांगने में संकोच नही करते। ऐसे आदमियो को दान देना पाप है।"

कमला ने कहा, ठीक है, "पुरोहित जी! इस बात से मै भी सहमत हूँ।" उसने चाय बनाकर पुरोहित जी की ओर प्याला बढाया।

पुरोहित जी ने कहा, "मै तो चाय नही पीता। रायसाहब को दीजिए।"

"उन्हे दूंगी ही, पहले आप तो लीजिए।"

पुरोहित जी ने मुँह बनाते हुए कहा—"मै कभी चाय नही पीता। मुझे नुकसान करती है।"

कमला हँसने लगी—'कही चाय भी नुकसान करती है! चाय मे तो सब मे बडा यही गुण है कि किसी को नुकसान नही करती। जहाँ तक होता है फायदा ही करती है।"

रायसाहब ने कहा "ठीक है जो चीज नुकसान करती है, क्यो देती हो? पुरोहित जी अग्रेजी जैसा-प्याले मे चाय पीना बुरा समझते है। फिर मिठाइया भी तो लाई हो। मुझे आशा है पुरोहित जी को यह नुकसानप्रद न होगी।"

कमला ने मद मुस्कान मे रायसाहब की ओर देखा और मिठाई की तश्तरी पुरोहित जी की ओर बढादी। मिठाई स्वीकार कर पुरोहित जी खाने लगे और रायसाहब भी चाय फूक मार-मार कर पी रहे थे। बीच-बीच मे मिठाइया एव नमकीनो का भी स्वाद लेते जाते थे। आनन्द की बाते हो रही थी। मिठाई समाप्त कर पुरोहित जी ने गिलास उठा कर पानी पिया। रायसाहब ने कहा

"पुरोहित जी, मुझे भी चाय से नफरत है लेकिन घर मे बनती है, पी लेता हूँ। पीने मे यदि थोडी भी असावधानी हो जाय, अथवा बडा घूट हो जाय तो जीभ जल जाती है। ऐसे स्वाद से क्या लाभ ?"

कमला ने कहा– "जिसके स्वाद को जो नही जानता वह उसके गुण को कैसे बता सकता है ?"

"हाँ-हाँ, घुमा फिराकर क्या कहती हो ? साफ शब्दो मे कहो— 'बदर क्या जाने अदरक का स्वाद।'" सब खिलखिला कर हस पडे।

रायसाहब ने पुरोहित जी से पूछा 'महाराजिन आ गई ?"

"मुझे नही मालूम।"

कमला ने कहा, "अब तक तो नही आई है।"

रायसाहब ने कहा, "क्या बात है ? पुरोहित जी, अब तो नौ बज गये है। आठ बजे से आने को कहा गया था। कल आपने ही कहा था कि जो एक बार मांगकर खाना सीख जाता है, वह फिर काम करना नही चाहता। लेकिन आपने बताया था कि महाराजिन दान से एक दिन भी अपना पेट नही भरना चाहती। इसलिए एक सेर आटा कर्जरूप में चाहती है। किन्तु पहले ही दिन अब तक नही आई क्या जाने शायद न आना चाहती हो। यहाँ तो सैकडो आदमी रोज आते-जाते है और वायदा करके जाते है। फिर नही लौटते।"

पुरोहित जी मन ही मन लज्जित थे पर शान्ति की स्थिति अज्ञात थी। बोले, "नही, ऐसी बात तो नही थी वह बात की पक्की औरत है। काम करने में कभी लापरवाही नही करती, किन्तु अब तक क्यो नही आई, मै नही बता सकता हूँ।"

कमला ने कहा, पाँच छ दिन पहले एक महाराजिन आई थी और आज भी आई है। चाय उसी ने बनाई है। अच्छा हो कि अब उसी को रख लें।"

पुरोहित जी ने कहा— "अब तो आपने रख ही लिया।"

रायसाहब ने जल्दी मे कहा—"नही, पुरोहित जी, आज तक प्रतीक्षा रहेगी। आप पता लगाइए, क्यो नही आई ?"

कमला ने कहा—"अब नही आयेगी। आना होता तो नौ बजे तक आ गई होती।"

पुरोहित जी, रायसाहब और कमला के विचार के भेद से बड़े धर्म-संकट में थे और सोच रहे थे—स्त्रियाँ ऐसे कामों मे अधिक तेज होती है। शान्ति को जगह न मिल पायेगी। इसके अलावा शान्ति की गरीबी तथा रायसाहब के सामने झूठे होने का प्रश्न बड़ा ही बेढंगा था। संकोच से दबे जा रहे थे।

कमला उठी अदर जाकर उसने आई हुई महाराजिन को काम करने केलिए कह दिया। वह प्रसन्न हो गई। यही आशा कर वह आई भी थी। मन ही-मन धन्यवाद देने लगी।

बैठक मे व्यापारियो का ताँता लग गया। पुरोहित जी अपने घर के लिए चल दिये। रायसाहब ने कहा, "पुरोहित जी, जरा महाराजिन का पता लगाइएगा, क्यो नही आई ?"

पुरोहित जी शान्ति का पता लगाना स्वीकार कर चल दिये। अपने घर न जाकर शान्ति के ही घर पहले पहुँचे। किवाड बन्द थे आवाज लगाई, किवाड खोलकर नाइन निकली, सामने पुरोहित जी को देख कर चरण छूकर प्रणाम किया। आशीर्वाद देकर पुरोहित जी ने शान्ति को पूछ। नाइन ने सारा हाल बताने के बाद बतलाया कि "शायद आप कल रायसाहब के यहाँ काम लगवा दिए है, वही गई है।" कल रायसाहब के यहाँ से लौटने ही आफत मे पड़ गई—आज नौ बजे तक जा पाई।"

"बच्चा कितना बड़ा था ?" पुरोहित जी ने कहा।

नाइन ने कहा—"अभी चार-पाँच साल का हो रहा था।" पुरोहित जी की आँखे सजल हो गई।

"राम-राम भगवान सब तरह से दुःख देता है। घबराओ मत, मिल जायगा, मैं भी पता लगाऊँगा। आज अभी हम रायसाहब के यहाँ गये थे, किन्तु शान्ति अभी वहाँ नही पहुँची। इसलिए पता लगाने आये" था। अब पहुँच गई होगी! शान्ति से कह देना, बच्चा मिल जायगा।

नाइन पुरोहित की बातें स्वीकार कर गभीर मुद्रा मे खडी कह

सोच रही थी। पुरोहित जी अपने घर की ओर चल पडे। नाइन पुन प्रणाम कर घर के भीतर चल गई।

: २४ :

ठाकुर साहब प्रभावती को खोजने के लिए कोठी से निकल पडे। बगीचे मे इधर-उधर देख रहे थे। फाटक में सतरी खडा था, बढकर पूछा, "प्रभा इधर तो नही आई ?"

"नही सरकार !" सतरी ने निवेदन किया।

सतरी के बताने पर ठाकुर साहब को विश्वास हो गया कि प्रभा कोठी के बाहर नही निकली। लौटकर बागवान की ओर बढे, किन्तु उसकी कोठरी बद थी। सब्जी पर काम करनेवाला दूसरा बागवान पानी की मशीन चला रहा था। कुएँ के समीप पहुँचकर ठाकुर साहब ने स्वय देखा। फिर बागवान से पूछा, किन्तु उसका भी उत्तर निराशा-जनक ही मिला।

ठाकुर साहब के अश्रु-जल देखकर बागवान को किचित सदेह हो गया था, लेकिन ठाकुर साहब के प्रश्न से वह सदेह न रहा। वह सोच रहा था, मालूम होता है ठाकुर और ठकुराइन मे झगडा हो गया है और वे कही छिप गई है। ठाकुर साहब खोजने मे परेशान है। क्या बडे आदमियो मे भी इस तरह का झगडा होता है ? हम छोटो के यहाँ तो खाने-पहनने का झगड़ा होता है, पर बडो के यहाँ किसलिए होता होगा ?

ठाकुर साहब और चिंतित हो उठे। अभी तक उन्होने सोचा था—बगीचे मे टहलने गई होगी। किन्तु बगीचा भी 'प्रभा'-विहीन था। घर में भी नही, बगीचे मे भी नही, आखिर कहाँ गई ? घबराये हुए बगीचे मे कई चक्कर लगाये, पर 'प्रभा' का पता न चला।

प्रतिदिन वह प्रभावती के साथ आनंद की बाते करते सुबह वह बगीचे में टहलते थे और तरह-तरह की गभीर परिस्थितियो पर विचार-विनिमय

करते थे। प्रभावती तेज दिमाग की थी, क्षण भर में कठिन-से-कठिन परिस्थितियों को सुलझा देती थी। उसकी प्रखर बुद्धि पर ठाकुर साहब आश्चर्य-चकित होजाते थे। कभी-कभी ठाकुर साहब व्यंग में उससे सरस्वती की मूर्ति कहा करते थे। वस्तुतः यह व्यंग किसी अंश तक सार्थक भी था।

ठाकुर साहब बार-बार प्रभावती की अच्छाइयों पर ध्यान देकर दुखी हो रहे थे। एक-एक क्षण उनके लिए कठिन होरहा था। अपने किए हुए प्रमाद पर पश्चात्ताप कर रहे थे। सहसा पुनः शयनगृह की ओर ध्यान गया। शायद मैं ही न देख पाया लौट पड़े हूँ, सीढ़ी पर चढ़ रहे थे, तो ऊपर से सुग्गी उतरते हुए दिखाई दी। ठाकुर साहब ने पूछा :

"प्रभा" ऊपर है ?

'हाँ सरकार! कोठरी म लरिका खेलावत बैठि हमा।"

ठाकुर साहब सुनते ही प्रसन्न हो गये, किन्तु लड़का खिलाने की बात खटकी, क्योंकि प्रभावती की गोद खाली थी। आश्चर्य से पूछा, "लड़का खिला रही है ?"

"हाँ सरकार छोहलग एक छोटक लरिका लिहे बैठि हमा। हम पुछवउ नही भयेन अवर ओउ कुछु नही कहिनि।"

सुग्गी की बाते सुनकर उत्सुकतापूर्वक ठाकुर साहब आगे बढ़े और सुग्गी अपने काम के लिए बाहर चली गई।

प्रभावती श्याम का परिचय जानना चाहती थी। फुसलाकर नाम, जाति, पिता का नाम तथा मुहल्ले का नाम आदि एकएक करके पूछ रही थी। श्याम ने अपना नाम तुरन्त बतला दिया। मनुष्य को अपना नाम प्रिय होता है। श्याम उसे कैसे भूल सकता था। जाति बतलाने में हिचकिचाया। वह भी प्रश्न न समझने के कारण, फिर अपने को पंडित बतला दिया। पिता का नाम वह नही जानता था, नही बता सका। अपने रहने के सम्बन्ध में बताया कि 'हम काशी में रहते है।' श्याम के इस भोले उत्तर से प्रभावती हँस पड़ी और बोली:

"बेटे, यह भी काशी है।"

श्याम ने कहा, "नही, यह काशी नही है। यहाँ गगा जी नही है, घटा नही बजता और भगवान् की आरती नही होती।" इसके आगे हँसी के मारे प्रभावती न सुन सकी, लोट-पोट होगई।

ठाकुरसाहब यह दृश्य देखकर सोच रहे थे—गगा जी नही है, घटा नही बजता, भगवान् की आरती नही होती, यह क्या है ? प्रभा को प्रसन्न देख ठाकुरसाहब को विश्वास हो गया—मेरी अशिष्टता को भुला दिया है, भुलाये क्यो न ! शिक्षिता नारी, पति के किए गए अपराध को भूलकर सुखद मार्ग का निर्देश करती है, और अमृत-वर्षा कर जीवन को नव-जागरण देती है। साहस कर बोले

"मै अपनी प्रभा को पाने के लिए कब से उदास हो रहा था, घर में ढूंढा, उपवन मे ढूंढा, पर कही पर भी न पाया तुझको। जल, थल, नभ सब में ढुढा। किन्तु न जाने तुम कहाँ छिप गई थी।" मस्कराते हुए ठाकुरसाहब ने कहा।

प्रभावती ने चौककर पीछे देखा। उदास ठाकुरसाहब अभियुक्त के रूप मे खडे थे। सहम कर मुख नीचे कर लिया। ठाकुरसाहब ने कहा :

"प्रभा, तुम्हारे प्रेम का अधिकारी आज अपने अपराधों के लिए क्षमा चाहता हे। मनुष्य जब आप-वृत्ति की ओर अग्रसर हो जाता है, तो उसका सारा ज्ञान कुण्ठित हो जाता है और वह कर्तव्य से शून्य होकर अनर्थ कर बैठता है। मैने कल घोर अपराध किया है। आँखें खुलने पर सब मालूम हुआ, किन्तु धनुष से निकला हुआ, बाण वापस नहीं लौटता। उसके लिए क्षमा-दान ही पाप-मुक्ति की गगा है। आशा है, क्षमा-दान कर इस पापी को पवित्र कर एक बार पुन प्रेम का अधिकारी बनाओगी।"

प्रभावती ने कहा, "किन्तु यदि पति के अपराधो को स्वयं नारी स्वीकार कर अपराधिनी के रूप से पति से क्षमा-दान चाहती है और

वह देने में मजबूर होता है, तो नारी पति के अपराधों को क्षमा-दान कर उसे पाप-मुक्त कैसे कर सकती है ?"

प्रभावती की बाते सुनकर वह सन्न रह गये, उन्हे यह आशा न थी। वह यह सोच रहे थे—कल प्रभा भी ऐसी ही आशाएँ लेकर गई होगी, किन्तु मैंने एक न मानी। मै अपने प्रमाद में ही डूबा रहा, लेकिन प्रभा तो प्रखरबुद्धि है, मुझ जैसी गलती वह कभी नही कर सकती। ठाकुर साहब ने पुन कहा

"अपराध होने पर ही तो क्षमा-दान होता है। वैसे किसी के सामने झुकने की क्या आवश्यकता। क्या मैं प्रेम का अधिकारी फिर नही बन सकता ?

प्रभावती बोली, "पति स्वय सोच सकता है निरपराधिनी नारी अपने पति के सुख के लिए पति का अपराध स्वय स्वीकार कर क्षमा-दान के बदले मृत्यु-दण्ड पाती है। तो फिर अपराधी पति को प्रेम-दान कैसे दे सकती है ?"

ठाकुर साहब के पास कोई उत्तर न था। कुछ क्षण मौन रहे, फिर लम्बी साँस लेते हुए बोले, "अच्छा, अपराधी पति " आगे कुछ कह न सके। चलने के लिए उद्यत हो गए।

प्रभावती पति का अलग होना बरदाश्त न कर सकी। वह बोली, "अपनी कर्म-साधना मे सफल नारी के आदेशो के बिना पति को उसकी दृष्टि से ओझल होने का कोई अधिकार नहीं। दौड़कर सामने खडी हो दोनो हाथो से मार्ग रोकती हुई बोली, "नारी के कोमल हृदय को कुचल कर किस पाषाण से टकराने का पतिदेव साहस कर रहे है।" आँखे मिली, हृदय एक हुआ, आलिगन कर वे दोनो पुलकित हो उठे।

: २५ :

शान्ति नौ बजे के बाद रायसाहब के यहाँ पहुँची। बैठक में व्यापारियों का जमघट था। वह अन्दर जाने मे सकोच कर रही थी।

बद्री को देखकर बोली, "रायसाहब से बतला दो कि पुरोहित जी के साथ जो औरत आई थी, वह आपसे मिलना चाहती है।" बद्री ने बैठक में जाकर रायसाहब से बतलाया। रायसाहब ने कहा, "अंदर बहू जी के पास लिवा ले जाओ।" बद्री वापस शान्ति के पास आकर बोला, "बहू जी के पास जाइ बरे कहिन।"

शान्ति बद्री के साथ चल पड़ी। कमला चौके में बैठी भोजन बनवा रही थी। सब बन चुका था, कुछ ही बाकी था। महराजिन कह रही थी, "देखिए बहू जी, अब तक वह औरत नहीं आई, उसके भरोसे आप मुझे भी जवाब दे रही थीं। जब तक काम में न लग जाय, किसी का विश्वास करने लायक नहीं है। उस दिन मैंने इसीलिए वचन नहीं दिया था कि शायद न आ सकूँ, कोई दूसरा काम करने लगूँ, पर जिस दिन से निश्चित् कर लिया, काम भी करने आगई।

किसी को विश्वास देकर काम न करना बुरा होता है। यदि हाँ कहकर जाती तो आपभी सोचती कि कैसी औरत थी, जो कह कर गई और आई नही। इसी तरह की बातों से दुनिया मे दिनो-दिन विश्वास घटता जा रहा है। करता है एक, किन्तु बदनाम सभी होते हैं। मैं तो सोचती हूँ, स्वयं दुःख भोग ले, किन्तु समार को बदनाम न करे।

बहू जी वह आयेगी नही, आना होता तो अब तक आगई होती। आज जगह की कमी नही है, जहाँ देखिए वही महराजिन की जरूरत है। पढ़ी-लिखी औरतें भोजन बनाना पसन्द नही करती। पर अच्छी जगहो में काम कम मिलता है।

कमला ने कहा, "शाम को रायसाहब ने बतलाया तब तुम्हारी भी कोई आशा न थी। मैंने सोचा, काम करने आ जाय, तब निश्चित मानूँ। तुम ठीक कहती हो, यदि उसे आना होता तो समय पर आगई होती। मैंने पुरोहित जी से ढूंढने के लिए कहा था। वे स्वयं ढूँढ कर लाये और बातें भी की। रायसाहब से उन्ही के बीच सब तय हुआ। यदि न रखते तो पुरोहित जी भी बेजा मानते; पर अब तो

वह आई ही नही, इसलिए मैं भी दोष से बरी हूँ। उसके लिए घण्टे-आध घटे इन्तजार करने को रायसाहब ने पुरोहित जी के सामने ही कहा था, इसमें उन्हे भी सात्वना मिली होगी। मैंने तो उसकी सूरत भी नही देखी।"

महराजिन ने कहा, "अच्छा, आपके बिना ही रख ली गई।"

कमला ने कहा – हाँ, बैठक में पुरोहित जी के सामने रायसाहब से बातें हुई और वह वही से वापस चली गई। उस महराजिन को मैं देखना चाहती थी। आगे कमला कुछ न बोलने पाई कि बद्री ने आकर कहा

"बहू जी, मालिक आपके पास इन्हे भेजन्ने हउअइ।"

रूखे स्वर से कमला ने कहा—"तो मैं क्या करू'।" शान्ति की ओर देखकर—"कल शाम को पुरोहित जी के साथ तुम्ही आई थी ?"

शान्ति ने कहा, "जी हाँ, आज आठ बजे से आने के लिए कहा था, लेकिन कुछ देरी होगई।

"तो पूरी देरी करनी चाहिए थी।"

"पूरी देरी करनी होती तो आपके यहाँ आती ही क्यो ?"

"तुम्हे आठ बजे के लिए कहा था। नौ बजे तक इन्तजार किया; फिर दूसरी महराजिन आगई, इसलिए उसी को रख लिया। उस समय पुरोहित जी भी बैठे थे, बल्कि रायसाहब ने पुरोहित जी से पूछा भी था। उन्होने कहा, "मुझसे आपके सामने ही बाते हुई थी, न आने का कारण ज्ञात नही है। ब दर्जा लाचारी इसी महराजिन को रख लिया। न रखते तो यह भी दूसरी जगह जा रही थी।"

"आपने रख लिया तो अच्छा किया। मेरे लिए भी भगवान् कुछ प्रबन्ध करेंगे ही।"

कमला बोली, "अच्छा हो या बुरा, पर जो होना था, हो गया। अब मैं क्या कर सकती हूँ। रख कर बिना कारण जवाब देना भी तो बुरा है।"

"हाँ,-हाँ, मै यह नही चाहती कि मेरे कारण किसी की लगी रोटी छुडाई जाय। मै तो अपना कर्म-भोग कर रही हूँ, दूसरों को क्यो कष्ट हो।"

शान्ति ने सोचा, ईश्वर जिससे अप्रसन्न हो जाता है, उसे हर तरह से दुखी बनाता है। कल शाम को मेरे सामने जीविका का प्रश्न हल हो चुका था। यदि समय से पहुँची होती तो उससे वचित न की जाती, किन्तु ऐसा हो क्यो ? मेरी भाग्य-रेखा का भोग कौन भोगेगा ? यदि मेरी जीविका चलती होती तो क्या तरुणाई मे ही पतिदेव छोडकर स्वर्गवासी होते ? फिर बच्चा खो जाता ? रायसाहब का इसमे क्या दोष ? नेत्र सजल हो गए—कमला शान्ति को रोते हुए देखकर बोली

"यह क्या कर रही हो ? आज के युग मे नौकरी की कमी नही है। यह महाराजिन अभी बतला रही थी, कि पढी-लिखी साधारण घर की भी औरते स्वय खाना नही बनाना चाहती—घर-घर महाराजिन की जरूरत है। फिर पुरोहित जी के बहुत से लोग परिचित हैं। कही-न-कही प्रबन्ध कराही देगे। कही न होगा तो मेरी महाराजिन करा देगी। नौकरी के लिए रोना मूर्खता है।"

"बहू जी ! इतना मै समझती हूँ। मै नौकरी के लिए नही रो रही हूँ। मै अपनी भाग्य की बिडम्बना पर रो रही हूँ। मेरे साथ मेरे कष्टो की भी दुर्दशा होती है। तरुणाई मे ही पति खो बैठी। दो बच्चे पालन-पोषण के लिए मिले थे, पर कल यहाँ से मेरे लौटने के पूर्व ही छोटा बच्चा मुझे छोडकर घर से बाहर खो गया। रात भर गलियो मे भटकी, बच्चे को ढूँढ़ती रही। इसी कारण आपके यहाँ आने मे देर भी हुई।"

कमला तथा नवागत महाराजिन शान्ति की करुण गाथा सुनकर सन्न हो गई।

कमला ने कहा, "कितना बडा बच्चा था ?"

"अभी पाँच का पूरा नही था।"

"बड़े दुःख की बात है। हमे यदि ऐसा ज्ञात हो गया होता तो दो-चार दिन और तुम्हारा इन्तजार कर लेती। एक महीने से जैसे काम होता था, चार-छ दिन और हो जाता।

शान्ति ने साँस खीचते हुए कहा, "आपका आटा दस-पाँच दिन मे पहुँचा दूँगी।"

"नही, नही, सेर-दो-सेर आटे की कोई बात नही, यदि जरूरत हो तो और ले लो।" कमला ने कहा।

"बहू जी! मै इतना ही दे दूँ, यह बहुत है और लेकर कैसे दूँगी?"

"देने की बात नही है। जहाँ गरीबो की सहायता मे मनो गल्ला बँटता है, वहाँ सेर-दो सेर आटा वापस करने की कोई जरूरत नही है। तुम नि.सकोच ले लो। बद्री, देखो महाराजिन को सेर-दो सेर आटा और दे दो।"

"बहू जी कृपा कीजिए। आपने जितनी मेरी सहायता की है, उसी के लिए जन्म भर आभारी रहूँगी और अधिक आवश्यकता नही। हाँ, आटा पहुँचाने के लिए दस-पाँच दिन की अवधि अवश्य चाहती हूँ। अब मुझे आज्ञा हो, मै चलूँ?' शान्ति ने विनीत भाव मे कहा।

कमला आगे कुछ न बोल सकी। उसने शन्ति को चलने के लिए स्वीकृति प्रदान कर दी। नमस्ते कर शान्ति अपने अधकार-पथ की ओर चल पडी। शान्ति सोच रही थी—अपने साथ पुरोहित जी को भी कष्ट दिया। यहाँ, काम न हुआ जानकर रायसाहब के ऊपर तो नाराज ही होगे साथ ही और किसी दूसरे स्थान के लिए प्रयत्न करने का कष्ट करेंगे। 'अपने भाग्य के दोष से उन्हे कष्ट देना उचित नही है।

× × ×

खाना तैयार हो गया, रायसाहब भोजन करने के लिए एक मित्र-सहित पधारे। महाराजिन थाल लेकर सामने आई। रायसाहब ने कहा, 'यही पुरोहित जी के साथ कल शाम को आई थी।"

कमला ने कहा, "नही, यह पाच दिन पहले आई थी, किन्तु काम करने आज से आई है। नौ बजे तक उमका इन्तजार किया। आपके सामने पुरोहित जी ने भी कोई स्पष्ट उत्तर नही दिया था और यह भी जाने लगी तो काम करने के लिए कह दिया।

"लेकिन, वह भी तो आई थी।" रायसाहब ने कहा।

"हाँ, आई तो थी। पर साढे नौ बजे के बाद आई। तब तक आधा खाना बन चुका था और उससे काम भी न होता। लापरवाह सी मालूम होती थी, फिर उसका चेहरा-मोहरा भी तो रानियो जैसा था।

तुम्हे चेहरे-मोहरे से क्या मतलब ? खाना बना कर देती ही, तुमने उससे कहा क्या ?"

कमला ने उत्तर दिया, "कहा क्या, जो सही बात थी बतला दी। नौ बजे तक इन्तजार किया। उसके बाद दूसरी महाराजिन रख ली। अब उसे कैसे जवाब दूँ ?"

"लेकिन पुरोहित जी क्या सोचेगे ? इसका तुमने ख्याल नही किया। उसे गये कितनी देरी होगई ?"'

"अभी आपके आने से पाँच मिनट पहले गई होगी।"

"बद्री, देखो, उस महाराजिन को बुला लाओ। हजारो काम होते है, एक अनाथ की रोटी न चलेगी ? पुरोहित जी सोचेंगे कि इन्होंने कह कर धोखा दिया। ब्राह्मण को अप्रसन्न करना ठीक नही।"

मित्रसहित रायसाहब ने भोजन करना आरम्भ कर दिया। उठने के पूर्व शान्ति को साथ लेकर बद्री उपस्थित हुआ। रायसाहब ने कहा, "मुझ से बिना पूछे क्यो जा रही थी ? मुझ पर पुरोहित जी को नाराज कराने के लिए ?" बहू जी की ओर देखकर बोले, "देखो इससे भी काम लेना। दोनो महाराजिन काम करेंगी। कमला ऊपर से स्वीकृति प्रदान कर भीतर-ही-भीतर कुपित हो रही थी। शान्ति के सामने से काले बादलों ने हटकर आकाश स्वच्छ कर दिया। जीवन-निर्वाह की आशा पुनः जाग उठी।

: २६ :

"प्रभा ! तू मुझ पर रूठ गई थी । मैं अपने को भूल गया था। तुम्हारे साथ मेरा बर्ताव बडा कठोर हुआ। जब इस बात को मैं स्वय मानने के लिए तैयार हूँ तब तुमने क्यो न माना होगा। उन सबको भूल जाओ और पुनः प्रेम-राज्य की स्थापना करो।"

प्रभावती ने कहा "मै सदा आदेशो का पालन करती रही हू और अब भी तैयार हूँ। मृत्यु-दण्ड की घोषणा सुनने के पूर्व भी आदेशो की पूर्ति करने के लिए प्रार्थनाएँ की थी, किन्तु अनसुनी हो गई।"

"प्रभा, बीती बात की याद मत दिलाओ।"

"अच्छा, लीजिए, भूली जाती हूँ।" प्रभावती का ध्यान श्याम की ओर खिच गया, "बेटे आओ, इधर आओ। वहाँ क्यो खडे हो ?" श्याम ठाकुरसाहब की ओर देखकर स्तब्ध रह गया। प्रभावती ने बढकर उठा लिया। ठाकुरसाहब ने कहा

"यह लडका कहाँ से पकड लाई हो ?"

फिर आपने बीती बात याद दिलाई। मेरा तो सिद्धान्त है कि बिना बीती बात याद किये भविष्य उज्वल नही हो सकता। धनुष का तीर जितना ही पीछे खीचकर छोड़ा जाता है, उतना ही तीर आगे जाता है। सीधे शब्दो मे अपनी उन्नति के लिए पीछे के आदर्श पुरुषो को स्मरण कर आगे बढना उत्तम है।"

अच्छा, तो मै भी तुम्हारे विचारो से सहमत हूँ। अपने सिद्धान्तवाद के परिचय मे बच्चे का परिचय कराना भुला ही दिया।"

प्रभावती खिल-खिलाकर हसती हुई बोली, "हाँ, बता तो रही हूँ, आप जल्दबाजी क्यो करते है। आज ब्रह्म मुहूर्त मे पतिदेव के सुख के लिए कूप की शरण मे अपने अरमान पूर्ण करने के हेतु गई थी, किन्तु इस बालक ने 'माँ' कहकर मेरी साड़ी पकड ली। यही इसका सक्षिप्त परिचय है । नाम है श्याम, जाति पडित और सब अज्ञात।

ठाकुर साहब ने कहा, "पति इस कलंक से समाज मे रहने योग्य न रह जाता। इस बालक ने वस्तुतः मुझे कठोर पाप से मुक्त किया है। कृतज्ञता का भाव प्रकट कर श्याम का गाल स्पर्श करते हुए वह बोले "बेटे तुमने बडा उपकार किया। मैं तुम्हारी इस उपकार के बदले मे क्या सेवा कर सकता हूँ ? अपनी शक्ति के अनुसार तुम्हारी सेवा करते हुए जीवन भर कृतज्ञ रहूँगा।"

सुग्गी चाय लेकर उपस्थित हुई। प्रभावती ने चाय बनाकर ठाकुरसाहब को दी और श्याम को स्वय पिलाने लगी। फूँक मार-मार श्याम चाय धीरे-धीरे पी रहा था। सुग्गी छोटा बालक देखकर बोली

"दुलहिन, इ लरिका कहाँ से लै आयन ?"

ठाकुर साहब प्रभावती के बोलने के पहले ही बोल उठे, "इ लरिका ऐसइ आइगाहई।" ठहाका मार कर ठाकुर-ठकुराइन दोनो हँसने लगे। सुग्गी कुछ सकोच में मुसकराकर मौन होगई।

ठाकुर साहब कभी-कभी सुग्गी को चिढाने के लिए बघेली भाषा मे भी बोलने का प्रयास करते थे। सुग्गी को काशी मे इतने दिन रहते हो गये; किन्तु वह अपने देश की ही भाषा मे बोलती थी। रहते-रहते यहाँ की भाषा अच्छी तरह समझ लेती थी और सुग्गी से सम्पर्क रखने वालो को भी बघेली-भाषा समझने मे अड़चन नही होती थी।

प्रभावती ने कहा, "सुग्गी तुम चुप क्यो हो गई ? ठाकुर साहब ने तो कोई बुराई नही की, बल्कि तुम्हारी ही भाषा को सीख रहे है।"

सुग्गी ने कहा, "बिना काम का बतई। हम तो चाहिये कि अपनउ पचे हमरे बोली मा बतकहाउ करी पय अपनउ पचे जब ऐसन सोची तब न काम सधी। हमरे भर सोचे का होथइ।"

श्याम चकपकाकर सुग्गी की बातें सुन रहा था, पर समझ न पाया। उसके लिए अजीब तरह की भाषा थी। प्रभावती ने कहा

"सुग्गी सुनो, यह बालक आज बगीचे में मिला है। भगवान् जाने

किसका है। अपना नाम श्याम और जाति पडित बतलाता है, आगे कुछ नही।

ठाकुर साहब ने कहा, "बडा होनहार लडका है।"

मुग्गी ने समर्थन किया "हाँ हजूर, भाग क जबर जनात है।"

प्रभावती ने घडी की ओर देखा नौ बज गये थे। बोली, "सुग्गी नहलाने का प्रबन्ध करो, नौ बज गये।" ठाकुर साहब बैठक के लिए चल पडे। प्रभावती ने ठाकुर साहब की ओर देख कर कहा, "बच्चे के लिए कुछ कपडा चाहिए।"

ठाकुर साहब ने मुस्करा कर उत्तर दिया, "अच्छा, शाम तक आ-जायगा।" जाकर बैठक मे बैठ गये। यह सामने सरदार कीर्तिसिह विराजमान थे। ठाकुर साहब के दरबारी सरदारो मे सब से सम्मानित सरदार माने जाते थे। कीर्तिसिह ने सलाम किया, ठाकुर साहब आशीर्वाद देकर कोच पर बैठते हुए बोले—'बिराजिए सरदार कीर्तिसिह जी।"

कीर्तिसिह सकोच मे दब गए और बोले, 'ठाकुर साहब आप मुझे सरदार न कहा कीजिए।"

"क्यो बिगड रहे हो? सरदार तो सम्मानसूचक शब्द है।"

कीर्तिसिह ने कहा, "ठीक है! किन्तु बडो द्वारा छोटों के लिए श्रेष्ठ शब्दो का प्रयोग कम अपमानजनक नही होता।"

ठाकुर साहब ने कहा. "आप गलत सोच रहे है। जब अपने ही आदमियो द्वारा सम्मान न मिलेगा तो दूसरों से मिलना सभव नही। ऐसे ही धीरे-धीरे उन्नति कर मानव उच्च शिखर पर पहुँचता है। फिर भी मै तो अपने बराबरी के ही शब्दो का प्रयोग कर रहा हूँ। इन बातो को जाने दीजिए। दशहरे के उत्सव की कितनी तैयारी बाकी है?"

कीर्तिसिह ने गभीर स्वर मे कहा, "अभी तो सब बाकी है। रुपये इकट्ठे नही हुए, काम कैसे शुरू हो? दीवान साहब पन्द्रह दिन

से इलाके में दशहरे के लिए चन्दा लेने गये है, परन्तु पता न चला वहाँ क्या स्थिति है ?"

ठाकुर साहब ने कहा, 'अच्छा, आज रुककर कल आदमी भेज दीजिए, खबर ले आए।"

कीर्तिसिंह ने आज्ञा स्वीकार की। मुंशी ने आकर नहाने के लिए कहा। ठाकुर साहब थोड़ी देर के लिए कीर्तिसिंह से अवकाश लेकर नहाने चले गये। नहा-धोकर आध घण्टे बाद लौटे। तब तक दो सज्जन और पधार गए और कीर्तिसिंह से आपस की बाते होती रही। ठाकुर साहब के आने पर बाते बन्द हो गई। उठकर खडे हुए सलामी दागी और फिर बैठ गये।

ठाकुर साहब ने कहा, "विजयदशमी-उत्सव के लिए बहुत कम दिन रह गये है। तैयारियाँ बहुत बाकी है। जिससे सभी काम होना है अभी उसी का प्रबन्ध नही हुआ। कम-से-कम दस हजार रुपये लगेंगे।"

कीर्तिसिंह ने कहा। 'हा, ठाकुर साहब सबसे पहले रुपये का प्रबन्ध होना बहुत जरूरी है। यदि रुपये का प्रबन्ध उचित रीति से हो जाता है तो सब काम दस दिन मे हो जायगा।"

ठाकुर साहब ने कहा—"हाँ, हाँ, ठीक है। लेकिन दस दिन मे कार्य पूर्ति की आशा कर मक्खी मारते बैठे रहना ठीक नही है; क्योंकि कम समय मे काम ठीक नही हो पाता। अत धीरे-धीरे पहले से ही कार्य आरम्भ कर देना अच्छा होता है। सभी तरह की सहूलियते धीरे-धीरे काम करने मे होती है।"

कीर्तिसिंह ने उत्साहपूर्वक कहा, "जो आज्ञा हो हम करने के लिए तैयार है। आप काम की चिन्ता न करे, सब अच्छी तरह होगा। समय-समय पर हम लोगो को बतला दिया कीजिए।"

ठाकुर साहब और सरदारो के बीच की बातें समाप्त न हो पाई थी कि चुनार के प्रसिद्ध सम्मानित सरदार भगतसिंह की मोटर आ

पहुँची। वे उतर कर बैठक मे पधारे। सरदार भगतसिह का देख कर सब ने खड़े होकर सलाम किया। ठाकुर साहब बोले, "आज आपने बहुत दिनो मे आने का कष्ट किया।"

भगतसिह ने हसते हुए कहा, —"हाँ, इधर कुछ झझटो के कारण न आ सका" कीर्तिसिह की ओर इशारा करते हुए बोले। "आप पन्द्रह दिन पहले चुनार पधारे थे और आपने विजय-दशमी-महोत्सव मनाने का शुभ-सदेश भी सुनाया था। मुझे बडी खुशी हुई। इस युग मे अपने पर्व को सब भूल जा रहे है। एक दिन था, जब क्षत्रिय समाज मे विजया-दशमी महोत्सव बड़े उल्लास से मनाया जाता था। घर-घर मे शस्त्रो की पूजा होती थी, किन्तु अब तो घडी-चश्मा के सामने शस्त्रो का कोई मूल्य ही न रह गया। बडी प्रसन्नता है कि आपने इस युग मे भी अपने जातीय गौरव को बढाने के लिए विजय-दशमी महोत्सव मनाने का आयोजन किया है। उसकी सफलता के लिए मै मगल-कामना के साथ ही हर तरह से सहयोग देने के लिए तैयार हूँ।"

ठाकुर साहब सरदार भगतसिह की बाते सुनकर गद-गद हो गये और बोले, "सरदार साहब, आप लोगो की ही आशा पर इस पुनीत कार्य की ओर अग्रसर हो रहा हूँ। दिन कम रह गये है, और प्रबन्ध बहुत बाकी है। अभी यही इन लोगो से कह रहा था। रुपये भी अभी इकट्ठे नही हो पाये। दस हजार व्यय होने का अनुमान है।"

सरदार भगतसिह ने गभीर होकर कहा, "घबराने की कोई आवश्यकता नही, सब भगवान् पूरा करेंगे।"

सुग्गी बैठक मे आकर बोली, "सरकार जेवनार बनि गइ है, पधारी।"

भगतसिह के लिए सुग्गी की भाषा अजीब तरह की थी, सुनकर सन्न रह गये। ठाकुर साहब हसते हुए बोले, 'सरदार साहब, यह औरत विन्ध्य प्रदेश की राजधानी रीवा की है। हमारे यहाँ करीब

पन्द्रह वर्ष से रहती है, लेकिन अपनी ही भाषा में बोलती है। सुनते-सुनते हम लोगों को समझने में थोड़ी भी असुविधा नहीं होती। लेकिन एकाएक सुननेवालों के लिए कुछ आश्चर्य होता है।" ठाकुर साहब मुग्गी की बातें और सुनवाना चाहते थे। साथ ही रीवाँ के दशहरा का स्मरण हो आया। बोले,

"मुग्गी, तुम्हारे यहाँ अब भी दशहरे का उत्सव होता है ?"

"हाँ सरकार – अब तो नामैं भर है। पहिले जैइसन नहीं होत आय, जब भर राजन महाराजन के राजि रही, तब भर सब होत रहा। अब कोनउ समान सरकार से नहीं मिले। हाथी, घोड़ और असबाब जेतना रहा सब बिकवाइ दीन गए। फौजिउ टोरि दीन गए। राजा बिचारे काहे मा उच्छाह करें अउ काहे माँ पेट भरें। भला अपने लरिका मेहरिअन का खवाइ लेंइ फेरि उच्छाह करिहीं। नबैं केर जाइदे कि आनन्द से जोन मन परत रहा तौन करत रहें, अब अपनइ पेट जियावइ क लागि है।"

सरदार भगतसिंह कान देकर मुग्गी की बातें सुन रहे थे। ठाकुर साहब मन-ही-मन सरदार भगतसिंह के आश्चर्य पर मुस्करा रहे थे। सरदार भगतसिंह ने ठाकुर साहब की ओर मुग्गी की बातों को स्पष्ट करने के लिए देखा, ठाकुर साहब बतलाने लगे।

'सुना सरदार जी ! रीवां का दशहरा-महोत्सव अपना विशिष्ट स्थान रखता था। राजसी ठाट-बाट देखने योग्य रहता था। मेरे पिता जी इधर कई वर्षों से वहीं का दशहरा देखने जाते थे, मैं भी कभी-कभी साथ में चला जाया करता था। उत्सव का दृश्य बड़ा ही मनोहर और मनहरण होता था।"

किले से सायकाल चार बजे जलूस निकलकर नगर की प्रधान सड़कों से बढ़ता हुआ आठ बजे परेड के मैदान में पहुँचकर समाप्त हो जाता था। सर्व-प्रथम आगे-आगे फौज मार्च करती थी, फिर घुड़सवार इसके बाद राज्य के पवाईदार अपने-अपने सैनिक एवं सवारियों के साथ

चलते थे। सरदार सब राजसी वेश मे होते थे, उस दिन रीवाँ नगर का एक बच्चा भी बिना साफे के नही दिखाई देता था।

रईसो के बाद महाराजा घोडे की सवारी पर चलते थे, और उनके पीछे हाथी पर कुलपूज्य गढी के देवता राजाधिराज की मूर्ति रहती थी। अपार जन-समूह इस महोत्सव में भाग लेता था। नगर मे फूलो की वर्षा होती थी। जय-नाद से आकाश गूँज उठता था। मार्ग मे राजभक्तो के दीपदान एव आरती से ऐसा लगता था मानो सुरराज का जुलूस निकला हो।

राज्य के कोने-कोने मे इस महोत्सव मे भाग लेने के लिए लोग पधारते थे। जुलूस के चलने के पूर्व तोपो से सलामी होती थी। तोप की आवाज से ही जलूस के चलने का अनुमान कर लिया जाता था और सायकाल परेड की सलामी से समाप्त होने का अन्दाज स्वय हो जाता था। तोपो के घनघोर गर्जन से पृथ्वी थर्रा जाती थी। परेड के मैदान में तरह-तरह के खेलो का भी आयोजन रहता था।

यह कार्य-क्रम दस बजे रात तक समाप्त होता था।

दूसरे दिन महाराज की न्यौछावर के लिए सरदारो एव महाजनों की बैठक होती थी। अपनी हैसियत के अनुसार मोहरो से न्यौछावर करते थे। अतरग बैठक समाप्त होते ही जनता-जनार्दन के समक्ष महाराजा नवीन कार्यो की घोषणा करते थे। बडा सुन्दर समारोह होता था उसी उत्सव के लिए मुग्गी बतला रही थी कि राज्यो का संघ बनकर केन्द्रीय शासन मे हो जाने मे सब बन्द हो गया है। जो महाराजे इन महोत्सवो मे अपार धनराशि व्यय करते थे, वे ही आज अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए चिन्तित हैं।

भगतसिह ने कहा—"धन्य हो ठाकुर साहब, आपने अभी तक मुझ से इस महोत्सव के सम्बन्ध मे कभी चर्चा भी नही की थी। भगवान् करेंगे तो हम लोगो का भी महोत्सव इसी रूप मे सफल होगा।"

ठाकुर साहब ने कहा, "लेकिन वह राजसी ठाट-बाट कहाँ? केवल

'फौज ही दस हज़ार आगे-आगे मार्च करती थी !"

भगतसिंह ने आश्चर्यपूर्वक कहा, "दस हज़ार ।"

"जी हाँ, अच्छा अब समय अधिक हो रहा है । भोजन के लिए चलना चाहिए" सुग्गी की ओर देखकर ठाकुर साहब बोले, 'नही तो सुग्गी सोचेगी कि गप में ही सारा समय बिता दिया" । किन्तु सुग्गी मन ही मन अपने देश की बडाई सुनकर प्रसन्न हो रही थी । वह सोचती थी

"हमरेउ देश माँ ऐसन कउन चीज हइ जौन क सुनि जानि कइ लोगन के अचरज होत हइ ।"

ठाकुर साहब सरदार भगतसिह तथा कीर्तिसिह को साथ लेकर भोजन के लिए चले । सुग्गी ठाकुर साहब से पहले ही अन्दर पहुँच गई थी ।

: २७ :

शान्ति रायसाहब की बातो पर सोच रही थी, "एक महाराजिन रख ली गई है, फिर भी मुझे सहायता देने के लिए रख ही लिया । बड़े दयालु है । भगवान् मै कैसे इनके ऋण से उऋण हूँगी ?"

कमला ने शान्ति से कहा, 'क्यो, इस महाराजिन का छुआ खाओगी ?"

शान्ति ने उत्तर दिया, "मै तो आज खाकर आई हूँ ।"

"नही-नही, संकोच मत करना । यदि इसका छुआ न खाना हो तो स्वय बना लेना ।" कमला ने कहा ।

शान्ति हसकर बोली, "नही, आपसे क्या सकोच करूँगी । खाकर ही आई हूँ ।"

"कमला स्वयं भोजन करने जा रही थी। उसे मोहन की याद आ गई तो बोली, "बद्री," पर वह न बोला, रायसाहब को पान देने गया था । मोहन का नौकर सामने आया । "क्यो जी, मोहन भैया कहाँ गए ? घर से निकलने पर तुम्हे लौटने का ख्याल नही रहता । बारह बज रहे है । बिना कुछ खिलाए ही घुमा रहे हो ?" बिगडकर कमला ने कहा ।

'तुम्हे काठी न मिलेगी, खपरैल मे रहना पडेगा।"

'खपरैल क्या है, माँ ?"

"जैसा बद्री का घर बना है, वैसा ही खपरैल होता है।" एक दो बार सैर करने के लिए बद्री के गाँव कमला, और मोहन सब जा चुके थे। रायसाहब को चार गाँव मिले थे जिसमे से एक मे बद्री का भी मकान था। वहाँ जाने पर बडी खातिरदारी होती थी। मोहन ने समझा बद्री के गाँव मे ही रहना होगा, खुश हो गया और बोला

"वहाँ बड़ा आनन्द रहता है। दूध खूब पीने को मिलता है। बूढे-बूढे आदमी है। पगडियाँ बाँधते है, हल चलाते है, खूब आम खाते हैं। हमारे जैसे लडके गायो को घास खिलाते है।" कहते हुए नाचने लगा।

कमला ने मुस्कराकर कहा, "पहले खाना तो खाओ फिर गाँव मे रहना।" मोहन, बैठकर खाना खाने लगा। दोनो महाराजिन हँस रही थी। कमला ने कहा, "मोहन तुम किस महाराजिन को लोगे ?"

मोहन ने दोनो की ओर देखा, मन-ही-मन तुलना की और फिर शान्ति की ओर देखकर कहा, "इस को।"

कमला दूसरी महाराजिन की ओर इशारा करके बोली, "क्यो इनको नही ?"

मोहन ने जवाब दिया, "नही वह बडी खराब है।"

सब हसने लगे। कमला ने महाराजिनियो से कहा, "देखा, तुम लोगो ने? एक को अच्छी और एक को खराब झट बतला दिया। एक सयाना आदमी भी बिना कुछ दिन साथ रहे किसी को भला-बुरा नही कह सकता, लेकिन इन बच्चो को कोई सकोच नही। मनमाने जिसको जो चाहते है कह देते है।"

शान्ति ने कहा, 'इसीलिए तो ये बच्चे है। यदि उचित-अनुचित का ज्ञान हो जाय, तो बच्चे-ही क्यो कहे जायँ ?"

कमला सोच रही थी--"दो महाराजिन है बुलाने पर धोखा भी हो सकता था, लेकिन मोहन ने दोनो मे भेद कर दिया। एक को अच्छा

बतायाऔर एक को बुरा। साथ ही नाम मे भी फर्क कर दिया, एक महाराजिन और दूसरी भैया की महाराजिन।"

× × × ×

पहली महाराजिन सोच रही थी—कितना दुष्ट लडका है, मुझे खराब और इस रॉड को अच्छा कहता है। गाल की लाली बूढे बच्चे सभी को मोह लेती है। इसीलिए रायसाहब ने भी रख लिया है, नही तो कौन पूछता है? दूध पिये जैसी बैठी है।

कमला ने महाराजिन से कहा, "अभी तुमने खाना नही खाया?"

"खा लूगी।"

'कब खा लोगी? अब तो सब खा चुके। भैया की महराजिन खायगी नही। तुम क्यो बैठी हो?"

वह सब चीजे रखकर स्वय खा-पीकर खाली होगई।

कमला ने कहा, "तुम दोनो गेहू साफ कर डालो। मै अभी आती हूँ।" दोनो महाराजिन गेहूं बनाने मे लग गई और कमला आराम करने चली गई। एक घण्टे बाद कमला आराम करके लौटी, तब तक गेहूँ साफ हो चुके थे। दोनो महाराजिन आपस मे बाते कर रही थी। कमला ने सोचा इन दोनो मे खाना कौन अच्छा बनाती है, यह देखना चाहिए। इसकी तो जरूर परीक्षा करनी चाहिए। बोली, "भैया की महाराजिन इस वक्त तुम खाना बनाना" शान्ति ने आदेश स्वीकार कर लिया।

× × × ×

रायसाहब कचहरी जाना चाहते थे। बडे मुनीम जी अपने कागजात लेकर जा चुके थे, और जाते समय कहा भी था कि एक घण्टे के लिए दो बजे वह भी पधारे। बारह बज चुके थे रायसाहब की नीद सुबह तक सोते रहने पर भी पूरी नही हुई थी। एक घटे आराम कर कचहरी जाने के लिए निश्चय किया और ड्राइवर से कह दिया कि कही जाये नही। कुछ देर मे कचहरी चलेगे। आज दुकान का काम

न करेंगे। दूकान पर मुनीमों से कह देना कि आज मेरे पास व्यापारियों को न आने दें।

ड्राइवर मुनीम जी को आदेश सुनाकर मोटर में बैठा प्रतीक्षा कर रहा था। रायसाहब गहरी नींद सो रहे थे। चार बजे तक नींद न खुली, बार-बार ड्राइवर जाकर वापस लौट रहा था, पर जगाने का साहस न हुआ।

टन, टन चार बजे, रायसाहब की नींद खुली। देखा चार बज गए थे, सामने ड्राइवर खडा था, बिगडकर बोले, "तुमने जगाया क्यों नहीं ? कचहरी चलना था, सब काम चौपट कर दिया।"

ड्राइवर ने डरते हुए कहा, 'साहब, मैं सोने में किसी को नहीं जगाता।"

पहले तो काफी गुस्सा हुए, फिर शान्त हो गये। उन्होंने सोचा, "मेरे जाने पर ही क्या होता ? मुनीम जी ने पूरा काम करही लिया होगा। अदालत का फैसला मेरे न जाने से रुकेगा नहीं। हाँ, मुनीम जी कसातोष हो जाता।"

× × × ×

कचहरी में कुछ देर तक मुनीम जी ने प्रतीक्षा की, वकीलों ने भी कई बार पूछा, किन्तु अदालत ने प्रतीक्षा कर अपना फैसला सुना दिया—

"वादी का दावा मंजूर किया जाकर प्रतिवादी आराजी से बेदखल किए गये।"

किसान चिल्ला उठे, "महान् अन्याय ! हम लोग घर से निकाले जाते हैं। अदालत को इस पर विचार करना चाहिए। हम भूखों मर जाएँगे।" मुनीम जी आनन्द से वकीलों से बातें करते हुए निकले और फैसले की नकल के लिए अर्जी देकर उसे प्राप्त किया। मुश्किल से पाँच बजे फैसले की नकल मिली। छ बजे तक घर पहुँचे।

दिन भर की दौड-धूप में थके थे, कपडे उतार कर लेट गये। कुछ

देर बाद उठे, हाथ-पाँव धोए और कुछ नाश्ता कर रायसाहब की सेवा मे हाजिर होना चाहते थे, तब तक बद्री आकर बोला

"रायसाहब आपके बुलउले हउअइ ।"

"अच्छा, चलता हूँ ।" बस्ता बद्री को देते हुए कहा, "तुम चलो ।"

कुछ ही क्षणो मे सम्मान के अधिकारी बनने की आशा लिए वह कोठी पर पहुँचे । रायसाहब मुनीम जी को देखते ही बोले, "कहिए मुनीम जी, क्या रहा ?"

मुनीम जी ने हँसकर कहा, "आपकी कृपा से विजयी हुए ।"

आश्चर्यपूर्वक रायसाहब ने कहा, "विजयी हुए ?"

"हाँ साहब ! सब किसान खेतो से बेदखल कर दिये गए । वे अपना कब्जा साबित नहीं कर सके । पटवारी मे लगातार दस वर्ष का अपना कब्जा लिखा लिया था । उन्हें अपना कब्जा साबित करने का कोई जरिया ही न रह गया ।"

रायसाहब बोले, "इसमे मेरी विजय हुई या पराजय । बेचारे मुद्दतो से रह रहे है । मकान बनाये है, खेतो की उन्नति कर जोत-बो रहे है । फिर भी अपना कब्जा साबित नही कर सके । बडा आश्चर्य है ।"

मुनीम जी रायसाहब की इस तरह की बात सुनकर सन्न रह गये । मुनीम जी क्या सोचकर आये थे और क्या हो गया । सम्मान मिलना तो दूर रहा, रोजी बचाने की नौबत आगई । चुपचाप ठिठके से खड़े रहे ।

"मुनीम जी, किसानो के सम्बन्ध मे कोई काम करने से पहले मुझ से सम्मति ले लिया कीजिए, और सब से पहले कल गाँव मे चलकर जिन किसानो के खिलाफ मुकदमा दायर हुआ था, उन्हे मेरे सामने पेश कीजिए । किसानो से लडकर कोई लाभ नही उठा सकता । मेल करने पर वे ही दरिद्र किसान पारस बन जाते है । आप नही समझते है, इस जमाने में छोटी-छोटी चीज बडी बन जाती है । कही नेताओ को पता चल जायगा तो किसानों को बेदखल करना सर्वथा असम्भव हो

जायगा और जगह-जगह विरोधी भाषणो की वजह से लोग मुझे गिरी निगाहो से देखेगे। जाइए, कल सुबह चलने के लिए तैयार रहिए।" मुनीम जी हताश हो अपने घर की ओर चल दिए।

× × × ×

सात बज गये शान्ति तथा उसके साथ की महाराजिन दोनो अपने-अपने घर के लिए चल पडी। चलते समय कमला ने कहा "एक दूसरे के पहले पहुँचने का अन्दाज स्वय घर बैठे न लगा लेना कि एक का भी दर्शन न हो। दोनो महराजिन कहने लगी, "नही-नही समय से आऍगे।" नमस्ते कर अपने-अपने घर की ओर चल दी।

: २८ :

कीर्तिसिह ने कहा, "सरदार साहब! घबराइएगा नही, जरा भोजन करने मे मुझे देरी लगती है।"

भगतसिह ने बेपरवाही प्रकट करते हुए कहा, "नही-नही, घबराने की कोई बात नही है। आप शौक से भोजन कीजिए।"

ठाकुर साहब कीर्तिसिह की चतुरतापूर्ण बातो पर मुस्कराकर बोले, "सरदार साहब! आप यह न सोचियेगा कि कीर्तिसिह को भोजन करने में देरी लगती है। मुझे पहले ही खाना बन्द करना चाहिए नही तो नुकसान मे रहेगे।" कीर्तिसिह की ओर इशारा करके फिर बोले "जरा आप बनानेवाले के परिश्रम को अधिक सफल करते है, देरी, का एकमात्र यही कारण ह।"

सरदार साहब हँसने लगे साथ ही और सबभी हँस पडे। ठाकुर साहब ने कहा, "खाने मे मै सकोच नही करता, फिर आप के यहाँ तो घर जैसा-व्यवहार ठहरा।"

कीर्तिसिह ने कहा "यही मुझे भी विश्वास था इसीलिए निवेदन के लिए बाध्य होना पडा।" प्रभावती की ओर देखकर कहा, "बहू जी से अनुरोध करता हूँ कि दो पूडियो से मेरा स्वागत करे।"

प्रभावती ने लज्जाभरी आँखो से कीर्तिसिह की ओर देखकर कहा, "मैं तो स्वय ला रही थी। घबराने की क्या बात ? अभी सरदार साहब के लिए उपदेशक बने थे, पर स्वय सन्तोष न कर सके।"

"नही, बहू जी ! मुझे पूर्ण सतोष है। चिता है तो केवल सरदार साहब की। मेरे कारण उन्हे क्यो देरी हो। अरे आपने गजब कर दिया दो के बजाय चार पूडियाँ छोड दी। मालूम होता है अब आप परोसने से थक गई है। तो मुझे भी खाना बन्द कर देना चाहिए।"

प्रभावती ने कहा, "थकने की बात नही। मै और ला रही हूँ। अभी सरदार साहब भी तो भोजन कर रहे है, ऐसी क्या जल्दी है ?"

कीर्तिसिह हँसते हुए कहने लगे, "मुझे ध्यान न था। मैंने सोचा शायद भोजन कर चुके।"

ठाकुर साहब ने कहा, 'आपको पूडियो के ध्यान मे किसी आदमी का ध्यान कैसे रहेगा ?"

सब खिलखिला कर हँस पडे। कीर्तिसिह बडे विनोदी जीव थे। खासकर भोजन के समय। अपरिचित आदमियो को पेट भर खाना मुश्किल हो जाता है। बहुत ही चट हुए तो इनकी बातो मे नही पडते, पर अधिकाश पट ही जाते है। सभी भोजन कर चुके थे। प्रभावती के आग्रह करने पर भी कोई और लेने के लिए तैयार न हुआ। प्रभावती चौके के अन्दर चली गई।

सुग्गी हाथ धुलाने के लिए सामने खडी थी। सब के हाथ धुलाये, फिर पान लेकर बैठक मे पहुँची और पान चौकी पर रखकर वापस लौट आई। कीर्तिसिह ने तश्तरी मे रखे हुए पान सरदार साहब की ओर बढाये उसके बाद ठाकुर साहब की ओर फिर स्वय पान खाकर तश्तरी एक ओर चौकी पर रख दी।

सरदार साहब थोडा विश्राम करने चलने को तैयार हो गये। ठाकुर साहब ने शाम तक और रुकने की प्रार्थना की, किन्तु किन्ही जरूरी कारणो से न रुक सके। चलते समय ठाकुर ने कहा, 'सरदार

साहब इस उत्सव के लिए अध्यक्ष आपही चुने गये है। सब काम आपके बताये हुए ढग पर ही होना है। इसका ख्याल रखिएगा।"

सरदार साहब ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा, ठाकुर साहब इस पद के योग्य मै नही हूं। अच्छा होता कि किसी महाराजा को चुना जाता और रही सहायता आदि की बात सो तो मै हर तरह से सहायता करने के लिए तैयार हूँ। जब जरूरत पड़े नि सकोच बताइएगा।"

"ठीक है, सरदार साहब! लेकिन मै किसी महाराजा को इस पद के लिए योग्य नही समझता। मेरी इच्छा रईसो तक ही थी। फिर आप जैसी आज्ञा देंगे करने को तैयार हूँ।"

"अच्छा इस विषय पर फिर कभी बाते करेंगे। और सब तैयारी कराइए।" नमस्ते के बाद मोटर पर सवार हुए और ठाकुर साहब भी अपने सरदारो के साथ वापस लौट पड़े।

बैठक मे दरबार जम गया। कीर्तिसिंह दशहरा-उत्सव की बात सोच रहा था, आखिरकार इस उत्सव मे किसानो को क्या लाभ? यदि नही है तो चन्दा ही क्यो दे। ठाकुर साहब को यह पागलपन कैसे सवार हो गया। पहले महाराजा लोग स्वच्छन्द राज्य करते थे। उन्हे किसी का भय न था, जो चाहते थे करते थे। साल में दो चार उत्सव भी मना लिया करते थे, लेकिन जनता से चन्दा लेकर उनके बच्चो को नगे कर मनबहलाव के लिए उत्सव करना कितनी मूर्खता है। फिर काशिराज के यहाँ रामलीला महीने भर होती है। साथ ही विजय-दशमी का उत्सव भी उचित रीति से मनाया जाता है। व्यर्थ किसानो को तबाह करने के लिए तूफान रचने की क्या आवश्यकता है? कुर्सी से उठकर कीर्तिसिंह ने कहा.

"ठाकुर साहब मै कुछ निवेदन करना चाहता हूँ।"

"सहर्ष, कहिए।" सब कीर्तिसिंह की ओर देखने लगे।

"निवेदन यह है कि विजय-दशमी का महोत्सव काशी के लिए नवीन नही है। यहाँ के हर मुहल्ले मे मनाया जाता है। फिर काशिराज के यहाँ

से भी राजसी ठाट-बाट के साथ प्रति वर्ष मनाया ही जाता है। आपको अलग डफली पर अलग राग अलापने से क्या लाभ ?"

ठाकुर साहब डफली का राग अलापना सुनते ही क्रोध से भभक उठे। आँखे लाल हो गई। डाट कर बोले, "कीर्तिसिंह होश से बोलो। तुम्हारी जबान बहुत बढ गई है। समय को बिना देखे जो मन मे आया बकना शुरू कर दिया। जबान खिचवा लूँगा। इससे क्या मतलब ? मै भी कुछ समझता हूँ, तुम्हे आदेश पालन का अधिकार है, नुक्ताचीनी करने का नही, समझे ?"

"हाँ, ठाकुर साहब ! मै अच्छी तरह समझ रहा हूँ। आपके आदेशो का पालन करने वाला तभी तक हूँ, जब तक देश के हित की बात होगी अन्यथा नही। मै स्वतत्र भारत का नागरिक हूँ। मुझे देश के अहित मे रोक लगाने का अधिकार है। मै सोचता था, कि यह उत्सव मनाने की बात केवल मनोरजन के लिए हम लोगो तक ही सीमित है, किन्तु दीवान साहब चन्दा वसूल करने गये हुए है, और जनता को चूसनेवालो के लिए अध्यक्ष पद देने की कल्पना की जा रही है। इस अनाचार को मै बरदाश्त नही कर सकता।"

"कीर्तिसिंह ! तुम अपने को नेतागीरी के घमण्ड मे बर्बाद न करो। मै तुम्हे अच्छी तरह जानता हूँ। तुम्हारे बापदादो ने यही जिन्दगी बिताई है।"

"ठाकुर साहब ! यदि मेरे बाप-दादो ने यही जिन्दगी बिताई होगी तो इस तरह शोषण के कार्य न हुए होगे। किसी उत्सव के लिए किसानों का गला न घोटा गया होगा।"

ठाकुर साहब ने आँखें चढा करकहा, "तो किसानो का गला घोटा जा रहा है ?"

तब क्या हो रहा ? बेचारे किसानो को इस महँगी मे अपने बच्चो का पालन-पोषण करना कठिन हो रहा है। सालाना लगान देने

के लिए रुपये नही जुटा पाते, औरतो के जेवर गिरवी रखकर मुश्किल से रुपये लायेंगे ? गरीबो पर मार पडती होगी । गाँव मे हाहाकार मचा होगा। क्या आपने इस ओर भी कभी सोचा है ?"

ठाकुर साहब और कीर्तिसिंह के विवाद शुरू होने के थोड़ी ही देर बाद दीवान साहब भी आगये, लेकिन वातावरण अनुकूल न देख चुप खडे रहे। कीर्तिसिंह द्वारा की गई चन्दे की बुराई दीवान साहब बरदाश्त न कर सके। ठाकुर साहब कुछ बोलना चाहते थे पर उनके पूर्व ही दीवान साहब बोल उठे

"कीर्तिसिंह, तुम अभी किसानो की स्थिति नही समझ सके हो। आज वे सबसे अधिक मजे मे है। घर-घर मे आनन्द छाया है। इस महँगी मे सेर भर की बिक्री से वे सब बन गये है। औरतें जेवरो से लदी है। दस मन गल्ला बेचने पर रुपये-ही-रुपये दिखलाई देते है। पहले विवाह आदि उत्सवो मे बडे-बडे किसानो के यहाँ ही 'गैस' की बत्ती जलती थी, किन्तु आज यो ही साधारण बिना उत्सव के गैस जलती रहती है। कोई ऐसा किसान नही है जो विवाह आदि उत्सव मे गैस और लाउडस्पीकर का प्रबन्ध न करता हो। गाव के बडे किसानो के यहाँ रेडियो लगा है, आनन्द से कार्यक्रम सुनते है। नगर के लोग किसानो के बराबर आनन्द नही पा रहे है। गाँव अब गाँव नही रह गये है, वहाँ सुख-शान्ति का निवास हो गया है।"

आवेश मे आकर कीर्तिसिंह ने कहा, 'दीवान साहब ! आपको गरीब किसानो की स्थिति का ज्ञान नही है। अभी आपने गाँवो मे जाकर बडे-बडे एजेण्ट किसानो के यहाँ ठहरकर सुख-साम्राज्य देखा है, लेकिन उन गरीबो को नही देखा है, जो नगे और भूखो मर रहे है। बडे किसान गाँव मे एक ही दो होते है। उनके साथ गाँव भर के सुख-दुःख का अन्दाज लगाना भूल है। जेवर पहनना तो दूर रहा अपना तन नही ढाँक सकते, बच्चो को खाना नही दे सकते, चार-छ बीघे जमीन से दस आदमियो का भरण-पोषण कैसे हो सकता है ? शादी आदि मे

किसान अपनी इज्जत के लिए भूखे रह जमीन गिरवी रखकर काम चलाते है। उन बेचारो की सही परिस्थिति का ज्ञान उसे ही हो सकता है जो उनके साथ रहकर अपना जीवन बिताता है । उन्हे रेडियो, लाउडस्पीकर लगवाने को कहाँ से पूरा पड सकता है ? आपको बडे किसानो की मेहमानदारी से गरीब किसानो की स्थिति जानने का अवकाश कहाँ ? भर पेट खाना नही मिलता और ऊपर से चन्दे के लिए बाध्य किया जा रहा है, बेचारे कहाँ से देगे ?"

दीवान ने गुस्से मे आकर कहा, "कीर्तिसिंह तुम जितने दिन के न होगे मै उतने सालो से किसानो के बीच काम कर रहा हूँ । किसानो की नस-नस पहचानता हूँ । किसान काम सब करते है किन्तु रो-रो कर । उन्हे हँसकर काम करना नही आता, एक यही कमी है । लगान देते है, लेकिन समय पर नही । तुम आज के छोकरे किसानो के सम्बन्ध मे क्या जानते हो ?"

"दीवान साहब ! बनते तो आप सयाने है, किन्तु विचार एक बच्चे से भी नीचे है । किसान हँसकर काम करना क्यो नही जानते ? आपने क्या इस पर कभी विचार किया है ? यदि किया होता तो हम आपकी बाते मानने के लिए तैयार थे । केवल कह देने से नही होता । बेचारो के पास कुछ रहता ही नही इसलिए हँसकर काम नही कर पाते । कोई प्राणी ऐसा न होगा जो कभी दुखी रहना चाहता हो । किन्तु परिस्थिति से लाचार होकर भोगना ही पडता है ।

"अभी आप चन्दा इकट्ठा कराने गये थे । सचसच, अपने हृदय से पूछिये कितने किसान खुशी मन से चदा देने के लिए तैयार थे और जो चदा नही देना चाहते थे क्या उनके पास रुपये है ?"

ठाकुर साहब क्रोध मे थे ही आगे कीर्तिसिंह की बाते बरदाश्त न कर सके । गरज कर बोले "कीर्तिसिंह ! बकवास मत करो । घटो से बरदाश्त कर रहा हूँ । जिसकी रोटी खायी उसी को बदनाम करते हो । शर्म नही आती ।"

"ठाकुर साहब, शर्म उसे आती है जो नीच कर्म करता है। सत्कर्म करनेवाला सदा सम्मान का अधिकारी होता है। मै आपसे अन्तिम बार नम्र शब्दो मे निवेदन करूंगा कि आप अपनी तानाशाही नीति बदल दे, अन्यथा आप अपना ही नुकसान कर बैठेंगे।"

ठाकुर साहब क्रोध मे अपने को न सँभाल सके। बोले, "कीर्तिसिंह! मेरे सामने से हट जाओ। मैं तुम्हे एक मिनट भी नही देखना चाहता, अब बोले तो धक्का देकर निकलवा दूँगा।"

"ठाकुर साहब! एक शब्द भी यदि अशोभनीय निकला तो जीभ खीच लूँगा। सारी ठकुराइस धूल में मिल जायगी।"

एक-दूसरे की ओर द्वन्द करने के लिए बढे। कीर्तिसिंह के हाथ मे कोई चीज न थी। ठाकुर साहब के हाथ मे छडी थी। उपस्थित सरदारो ने झगडने से दोनो को अलग किया। कीर्तिसिंह ने कहा, "मै देखूँगा दशहरे का उत्सव कैसे मनाया जाता है? किसानो से चंदे के नाम पर डंडे मिलेंगे" कहता हुआ वह बैठक से बाहर हो गया।

ठाकुर साहब कीर्तिसिंह की बातो से जले जा रहे थे, किन्तु अब कीर्तिसिंह सदा के लिए ठाकुर साहब से अलग हो गया, उसका कुछ बिगाडना ठाकुर साहब की शक्ति से परे था। वह हाथ मलते हुए खडे रहे।

: २९ :

मुनीम जी के कर्तव्य पर रायसाहब सोच रहे थे—आज बेचारे किसान चिंता से व्यग्र होगे। अपने बाल-बच्चे लेकर कहाँ जायेंगे? इतनी अपार धन-राशि भरी पडी है। किसानो को निकालने से मुझे क्या लाभ होगा? फिर बदनामी भी होगी, बडा ही अनुचित कार्य हुआ।"

दर्शन का समय हो गया था। उठकर चल दिए और नौ बजने के पूर्व दर्शन कर वापस आगये। कमला मोहन के सो जाने पर

अकेली प्रतीक्षा मे खडी थी। रायसाहब के पहुँचने पर बोली।

"आपकी प्रतीक्षा करते-करते आँखे पथरा जाती है।"

रायसाहब ने मुस्कराकर कहा, "इतनी कमजोर है ? कही..."

कमला खिन्न हो रायसाहब की ओर चुप होने का इशारा करते हुए बोली, "ऐसा अपशब्द न निकालिए।"

रायसाहब चुप हो गये। कपडे उतार कर भोजन के लिए बैठे। कमला ने तुरन्त थाली सामने उपस्थित की। रायसाहब ने भोजन करना आरम्भ कर दिया। कमला ने मोहन को खपरैल मे रहने के लिए कहा था। यह सुनकर रायसाहब हँस पडे। कमला ने कहा, "मैंने बतला दिया है घबराओ मत, ऐसा जमाना आ रहा है जब बिना हल जोते और बिना काम किये खाना न मिलेगा। गॉव मे रहकर मौज से काम करना। मोहन गाँव मे रहने के लिए खूब प्रसन्न था।"

रायसाहब ने कहा, "इसका कारण यह है कि एक-दो बार गाँव मे हो आया है। वहाँ ख्वानिरदारी अच्छी होती है। डॉटनेवाला कोई नही, मनमाना खेलने को पाता है। इसलिए गाँवो मे इसका चित्त लगता है। क्या दोनो महाराजिन समय पूरा होने तक काम करती रही ? "

कमला ने कहा, "सात बजे गई है। मोहन ने तो पुरोहितजी वाली महाराजिन को पसन्द किया है और दूसरी को खराब बतलाया है। लेकिन खराबवाली ही मुझे अच्छी मालूम होती है। मोहन की महाराजिन बडी चतुर है।

रायसाहब ने कहा, "क्या बात है ?"

कमला ने उत्तर दिया—"बात कोई नही है, उसकी बातचीत, स्वभाव तथा वेश-भूषा सभी से ऐसा आभास हो रहा था।"

"लेकिन, एक-दो बार मैंने बतलाया था कि किसी की वेश-भूषा देखकर अच्छाई बुराई का अनुमान नही लगाया जा सकता। उसके व्यवहारों की परीक्षा करने के बाद ही मूल्य आँका जा सकता है।"

कमला सुबह शान्ति का चेहरा देखते ही सुर्ख पड गई थी। रात मे रायसाहब की अप्रसन्नता का निष्कर्ष निकालने मे देरी न लगी। कमला ने पहले ही कहा था, "रही होगी कुछ ढग की, इसीलिए अन्दर भेजने का कष्ट नही किया।" इस पर रायसाहब नाराज भी हुए थे। क्यो न होते सही बात कहने पर लोग नाराज हो ही जाते है। एक अन्धा भी अन्धा कहने पर नाराज हो जाता है।

आज मैंने शान्ति को जवाब भी दे दिया था, परन्तु इन्होने पुरोहित जी की नाराजगी की आड लगाकर रास्ते मे वापस लौटा लिया और एक-दो बात उलटे मुझे सुनाई भी। इन सब का कुछ कारण तो अवश्य है। पुरुष नारी की हवा लगने से ही सिहर उठता है, देखती हूँ, कब तक छिपाये रखते है ! आखिर खुलकर ही रहेगा।

रायसाहब ने कहा, "चुप क्यो हो गई ?"

"क्या व्यर्थ बकवास करूँ ?"

"अच्छा, बडा ज्ञान हो गया है ?"

"तो क्या आपने समझा था कि सदा अज्ञानी ही रहूँगी ?"

"नही-नही, मैंने तो यह नही समझा था कि तुम ज्ञान-शून्य रहोगी। अपनी पत्नी को ज्ञानी बनाना कौन न चाहेगा ? तुम खूब ज्ञान-वृद्धि करो।"

"कैसे करूँ ! क्या कोई पडित मुझे भी पढाने आता है ? फिर मुझे चूल्हे के ज्ञान से फुरसत कहाँ ? इतने बडे रायसाहब है, लेकिन कोई महाराजिन नहीं ठहरती। दस-पाँच दिन काम किया फिर चलती बनी।"

"अब तो दो महराजिन हो गई।"

कमला मुँह सिकोडकर बोली, "कहने के लिए हो गई।"

"क्यों ?"

"चार-छ दिन मे ये भी चल देंगी। इनकी शक्ल सूरत काम करने की नही मालूम होती। हाँ, पुरोहित जी वाली माहाराजिन आवे तो नही कह सकती।

"क्यो पुरोहित जी वाली ही महराजिन क्यो आयेगी ?"

"यो ही, चाल-ढाल से ऐसा मालूम होता है ।"

कमला के इस व्यग को रायसाहब न समझ सके । उन्हे कमला की शाम की बातो का ध्यान न था। साधारण बाते कर रहे थे, और कमला का सन्देह अधिक पुष्ट होता जा रहा था। शान्ति का स्वरूप देखते ही रायसाहब के रखने के कारण कमला को निश्चित कर रहा था । वह उनके मुख से भी कुछ शब्द कहला लेना चाहती थी। अत रायसाहब की बातो से उसकी भी पूर्ति हो रही थी ।

रायसाहब भोजन कर चुके थे, पान खाया और पलग पर लेट गये । कमला रायसाहब से अलग रहना चाहती थी, अत: बोली

"आज मेरी तबियत खराब है ।"

कुछ आश्चर्य मे आकर रायसाहब ने कहा, "तुम्हारी तबियत खराब हे ? डाक्टर को नही दिखाया ? कह कर रायसाहब ने अपना हाथ बढाया और शरीर का स्पर्श कर के कहा, "कोई खास बात तो नही है ।"

कमला मुस्कराई और नजर तिरछी कर के बोली, "अच्छा, इन्ही डाक्टर साहब को दिखलाने के लिए आप कह रहे थे तो मै इन डाक्टर साहब के लिए बीमार नही हूँ ।" आँखे सकोच से दब गई और दोनो हँस पड़े ।

"कमला ! आज मुनीम जी की करामात तो तुम्हे बतलायी ही नही । न जाने कितने किसानो को उनके घरो से निकाल आये है । बेचारे दुख के समुद्र मे डूबे होगे ।"

कमला आश्चर्यपूर्वक कहने लगी, "मुनीम जी ने किसानो को घर से कैसे निकाला हे ? बिना आपकी राय लिए जमीदारी के कामो मे वे दखल नही दे सकते । यदि कोशिश भी करे तो कोई मानने के लिए तैयार न होगा ।"

"ये सब बाते कारण जानने के पहले की है । पहले बात तो सुन लो ।"

कमला मुँह बनाती हुई बोली, "अच्छा सुनाइए ।"

रायसाहब मुनीम जी की करामात बतलाने लगे—"गोविन्दपुरा के किसानो के खिलाफ बेदखली का मुकदमा दायर किया था । दस वर्ष का झूठा इन्तखाब पटवारी से लेकर अदालत मे अपना कब्जा साबित कर उन गरीबो को बेदखल करा दिया । इससे किसान के परिवार दु खी होगे । कल शाम को खाना न बना होगा । किसानो से जमीन चली गई, मानो सब लुट गया और रहता ही क्या है उन बेचारो के पास ।"

कमला ने कहा, "अदालत झूठा फैसला तो नही दे सकती ।"

"हाँ, अदालत झूठा फैसला नही दे सकती । लेकिन उसे क्या मालूम ? जो दौड-धूप मे काफी निपुरा हुआ, वही अपना पक्ष बलवान बना लेता है और अदालत को मानना पडता है । उनके बाप-दादो के ज़माने से ज़मीन उन्हें मिली है । उनका सुधार किया हे, लेकिन आज छलछद्म न जानने की वजह से अपनी साबित न कर सके । कितने आश्चर्य की बात की ?"

कमला ने कहा, "क्या मुनीम जी ने इस सम्बन्ध मे आपसे कभी पूछा नही था ?"

' पूछा था, किन्तु इस रूप मे नही । उन्होंने कहा था, कि कुछ गोविन्दपुरा के बदमाश किसान और गाँव वालो को परेशान करते है । उनके सुधार के लिए उन पर मुकदमा दायर करना जरूरी है, किन्तु ऐसा न कर किसानों को निकालने के लिए मुकदमा दायर कर दिया । जिस के फल स्वरूप गाँव भर के किसान अपने घर-द्वार से बेदखल किये जा रहे है । मै तो इस नीति को उचित नही समझता ।"

कमला ने कहा, "मुनीम जी ने भी आखिर कुछ सोचकर ही किया होगा । इतने दिन से काम कर रहे है । कभी नुकसान नही चाहा, तो आज ही दूसरो का नुकसान कर स्वय कैसे नुकसान उठाये होगे ।

हा, यदि दूसरो को लाभ पहुंचाये होते तो यह भी मान लिया जाता कि अपना भी कुछ नुकसान किया होगा।

रायसाहब ने कहा, "तुम क्या समझो ? स्त्री यदि इतना समझने लगती तो काम ही क्यो बिगडता। इससे सबसे बडा नुकसान यह हुआ कि गरीब किसानो के खिलाफ अदालत मे खडे हुए, फिर सही बात झूठी करने के लिए तरह-तरह के प्रयत्न किए। जीत कर पाया क्या ? गरीब किसानो की बेदखली। फिर भी अभी किसान सतोष नही कर बैठेगे। अपील मे आज कल गरीबो के ही पक्ष मे फैसला होता है। वहाँ तो मेरी धाक न चलेगी। हजारो रुपये खर्च होगे, और बदनामी ऊपर से। साथ ही मुकदमेबाजी से आपसी प्रेम-सम्बन्ध भी टूट जायगा। हम किसी तरह की मदद उनसे न ले सकेगे। यदि अपील मे भी हार जायेगे तो बेदखली आन्दोलन चलायेगे। जाने जायेगी, महापाप होगा। इससे बढकर और क्या नुकसान हो सकता है ? उनसे तो मिल कर काम करना अच्छा होता है उन्हे मालूम भी न हो और काम भी निकल जाय।"

कमला रायसाहब की बाते ध्यानपूर्वक सुन रही थी और सोचती थी कि जमीदार किसानो से दबने मे अपना अपमान समझते है, लेकिन रायसाहब जीतने को ही बुरा समझ रहे है। फिर बोली, "इसके लिए आपने क्या सोचा ?"

मैंने मुनीम जी से कह दिया कि कल किसानो के यहाँ गोविन्दपुरा चलूँगा और समझौता करके ज़मीनें लौटा दूँगा।

कमला ने कहा, "इससे आप की ही मानहानि होगी। किसान हारने पर भी विजयी होंगें। वे आपके पास नही आये और आप उनके पास जा रहे है। किसान और लाट साहब बन जायेंगे। समय पर लगान देना भी बंद कर देंगे।"

"तुम नही समझती। मैं जाऊँगा और उनसे समझौता करूँगा। हज़ार दो हज़ार रुपये लेकर वापस चला आऊँगा। किसान तो

आय-निधि है, यदि उन्हे प्रसन्न रखा जाय तो रुपया ही रुपया देते है। हा, उनको नुकसान पहुंचाने मे वे भी नुकसान पहुंचाते है। यह तो ससार का नियम है, जो जिसके साथ जैसा करता वह भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार करता है। दूकानदारी के तरीके भिन्न होते है। व्यापारियो मे मैं पैसे निकाल लेता हूं, और उन्हे अखरता भी नही। इसी तरह किसानो से भी रुपये ले लूंगा और वे आनन्द से देगे। मेरे पहुंचने पर किसान गद्‌गद्‌ हो जायेंगे।"

"चलिए, अब के किसान नही है ये स्वतत्र भारत के किसान है, धोखा नही खा सकते। नेताओ ने उन्हे पढा-लिखाकर खूब चतुर बना दिया है। पहले, रोज किसानो का जमघट कोठी पर लगा रहता था; अब दीवाली, दशहरा भी नही झाँकते।"

"इससे क्या ! मेरे यहाँ आवें या न आवे। उनके आने से मेरा नुकसान ही होता था फायदा तो होता नही। फिर मीठे वचन बोलने वाला आदमी कभी धोखा नही खा सकता।"

"अच्छा, आप मीठे वचन बोलने वाले है। मै आज तक न समझ पाई।"

"क्यो अभी तक तुमने क्या समझा था ?"

"मैंने तो कुछ नही समझा था लेकिन.. ......"

"हाँ-हाँ, कहो।"

कमला मीठे वचन से शान्ति पर कटाक्ष करने जा रही थी पर उचित न समझ चुप होगई। राय साहब किसानो के ही सम्बन्ध मे समझ रहे थे। क्योकि वे किसानो को राजी करने की धुन मे मस्त थे। रायसाहब यह दिखलाना चाहते थे कि मुनीम जी ने जिनसे झगडा पैदा कर मुकदमा दायर किया है, उन्ही से मैं समझौता कर हजार-दो-हजार रुपये शाम तक लेकर लौट आऊँगा और किसी पर जुल्म भी न होगा। अपनी खुशी से रख देगे।

"किसानो को अपने खिलाफ होने का अवसर न देना चाहिए। अपना कुछ नुकसान सहकर भी उन्हे लाभ पहुँचाने का प्रयत्न करना चाहिए। उनकी फटी बडी देखकर तिरस्कृत करना अनुचित है। फिर हम जमीदारो के लिए तो वही सब कुछ है।"

कमला ने कहा—अच्छा ! अब मै भी समझौते के प्रस्ताव का समर्थन करती हूँ। ग्यारह से अधिक हो रहे है। नीद बारबार कष्ट उठा कर आती है और हताश लौट जाती है। उत्तम होगा कि उसे आश्रय दे दिया जाय।"

रायसाहब हँसते हुए बोले—"समझौते का प्रस्ताव स्वीकार है।" कमला की ओर हाथ बढाते हुए बोले, "लेकिन·· · ····।"

: ३० :

कीर्तिसिह के चले जानेके बाद ठाकुरसाहब चिंतित बैठे सोच रहे थे। मुझे आशा न थी कि कीर्तिसिह धोखा देगा। उसके बापदादो ने मेरे यहाँ जीवन भर सेवाएँ की थी—अपने कर्तव्य पर अटलरहे थे। किन्तु आज कीर्तिसिह सब उपकारो को भूलकर मेरे ही साथ कृतघ्नता करने का दु स्साहस कर रहा है। नही, मेरे साथ नही, बल्कि अपने पैरो पर कुल्हाडी मार रहा है। जिस दिन मारा-मारा फिरता था, उस दिन गरीब किसानो की सहायता न सूझी। रोजी लगते ही नेतागीरी सूझी। लगी रोजी छोडना अभाग्य नही तो क्या है ?

दीवान साहब ने कहा "ठाकुर साहब ! आज कीर्तिसिह से कैसे बातें शुरू हुई ? सदा आज्ञा का पालन करने के लिए तैयार रहता था, किन्तु आज आपके विरोध की बाते कैसे निकली ?"

ठाकुरसाहब ने कहा, "छोडिए, क्या कीर्तिसिह के बिना काम न होगा ? हजारो कीर्तिसिह रोज आते है; जरा दिमाग-बढ गया है। कुछ दिनो मे आपही ठडा हो जायगा।"

दीवानसाहब इन सब बातो को न समझ सके थे। उन्हे तो किसानो

मे पैसा ऐठकर ठाकुर साहब को प्रसन्न करना था, पर उसमे भी असफलता ही दृष्टिगोचर हो रही थी।

उपाय पूछने आये थे, किन्तु यहा दूसरा ही काण्ड रचा देखा। ठाकुरसाहब ने दीवान साहब से कहा

"आप बताइए अपना काम। अभी चंदा वसूल होने मे कितनी देरी है ?"

दीवान साहब चिंतित होकर बोले, "अब तक सिर्फ पाच सौ रुपये इकट्ठे हो पाये है, उसमे भी तीन किसानो ने मिल कर ही दिया है। और कोई एक कौडी देने को तैयार नही। हर एक यही कहता है कि मै चन्दा नही दूंगा, बल्कि गाँव छोडकर निकल जाऊँगा। बीच-बीच मे कीर्तिसिह से पूछने की बाते करते थे।"

"अच्छा, कीर्तिसिह से पूछने की बाते कर रहे थे ?"

"हाँ साहब !"

"कीर्तिसिह से पूछने से क्या मतलब !"

"यही कि यदि वह कहेंगे तो रुपये देगा, नही, तो सत्याग्रह करेगा।"

"कीर्तिसिह पहले से भी इस तरह षड्यन्त्र रचता था क्या ? कई बार किसानो ने लगान-बंदी आन्दोलन चलाया, उसमे भी कीर्तिसिह का हाथ रहा होगा।"

"हम नही कह सकते साहब ! लेकिन जब ऐसी बात नही थी तो आज ही क्यो लडने के लिए तैयार हुआ ?"

ठाकुर साहब ने सिर हिलाते हुए कहा "हूं, अब मै समझा।" "तो गाँव मे उसका प्रभाव है ?"

"हाँ, साहब, उसे सब जानते है। गाँवो मे जाकर घर-घर घूम आता है। छोटे-बड़े सभी उस पर विश्वास करते है। आज मैने सभी किसानो को खूब फटकारा और घर से निकालने की धमकियाँ दी। जमीन से बेदखल कराने को कहा पर एक न माने, बल्कि आपके पास

शिकायत करने के लिए करीब दो सौ किसान आ रहे है। अभी कुछ ही देर मे आ-जायेगे।"

बैठक का वातावरण गर्म देखकर प्रभावती भी निकल आई। सब जा चुके थे। केवल दीवान साहब ठाकुर साहब से बाते कर रहे थे। बैठक मे पहुँच कर प्रभावती ने पूछा!

"आज लडाई कैसे हो रही थी?"

ठाकुर साहब के बोलने के पहले दीवान साहब बोल उठे,

"कीर्तिसिह का घमण्ड बढ गया है। अब वह किसी को कुछ नही समझते। दशहरे के उत्सव के लिए किसानो से चन्दा लेने का विरोध कर रहे थे और काम छोडकर चले गये।"

प्रभावती ने कहा "काम छोड कर चले गये? बडा बुरा हुआ। एक कीर्तिसिह ही ऐसा था जो कठिन कार्यो के लिए उत्साहपूर्वक आगे बढता था। उसे निकालना अनुचित हुआ। वह किसानो से मिल कर विद्रोह करेगा। इससे अशान्ति फैलेगी।"

ठाकुर साहब ने कहा, "यह तो मुझे भी मालूम है। कीर्तिसिह जैसा उत्साही कार्यकर्ता हमारे यहाँ कोई नही था। लेकिन अपने अभाग्य से वह स्वय छोड कर चला गया, मै क्या कर सकता हूँ। मेरे उपकारो को भूलकर मेरे ही साथ कृतघ्नता करने का दुस्साहस कर रहा था। मेरे ही कार्यों मे विघ्न!"

प्रभावती ने कहा—"लेकिन उत्सव के लिए किसानो से चन्दा वसूल करने का विरोध किया तो कोई अनुचित नही किया। बेचारे किसान लगान अदा करदे यही बहुत है। घर में बीमार आदमी की दवा नही करा पाते और न बच्चो को पढा पाते है। तन ढकने के लिए कपडा नही फिर चन्दे देने मे कैसे समर्थ हो सकते है? दीवान साहब! आप बताइए किसानो की कैसी स्थिति है?"

दीवान साहब मौन रहे। फिर प्रभावती बोली, "मै उत्सव मनाना उचित नही समझती। इस युग मे जातीय दृष्टिकोण से उत्सव

मनाना द्वेष का सूत्रपात करना है। एक-दूसरे को देखकर लोग अपनी-अपनी जातीय भावनाओं से संघर्ष करने के लिए प्रस्तुत होंगे। हिन्दू-मुस्लिम दंगे जातीय संगठन के ही दुष्परिणाम हैं।"

प्रभावती की बातें सुन क्रोध में आकर ठाकुर साहब ने कहा, "प्रभा, मेरे प्रबन्ध में तुम्हें दखल देने का कोई अधिकार नहीं। मैं स्वयं कर लूँगा। देखता हूँ, कीर्तिसिंह कैसे किसानों को चन्दा देने से रोकता है। एक घंटे के अन्दर ही दस हजार रुपये इकट्ठे करा लूँगा। न देने पर उनके घर फुँकवा दूँगा।"

प्रभावती गम्भीर मुद्रा में होकर बोली, "लेकिन इसका परिणाम क्या होगा? इस ओर भी आपने विचार किया है? एक आदमी के द्वेष से सैकड़ों आदमियों का अहित होगा? फिर कीर्तिसिंह की शक्ति की क्या परख? गरीब किसानों को चूसना कोई वीरता नहीं, पाप है, अधर्म है।"

दीवान ने कहा, "बहू जी दुनिया में सब पाप ही पाप है या कुछ पुण्य भी।"

"दोनों हैं। प्रसन्नता से दूसरी आत्माओं को सहयोग देकर सुखी बनाने के लिए जो कार्य किया जाता है वही पुण्य है और क्रोध से दूसरों को अपमानित कर कष्ट देना ही पाप है।"

ठाकुर साहब ने कहा, "मुझे इन पुण्य-पापों से कोई मतलब नहीं।"

प्रभावती मुस्करा कर बोली, "इस संसार में प्राणिमात्र पुण्य-पाप से अलग नहीं रह सकते। फिर आपही कैसे हो सकते हैं। स्वयं अपने लिए जो कार्य किया जाता है, उसमें भी पुण्य-पाप निहित है। आवेश में आकर काम करना हानिकारक होता है। यदि आप गरीब किसानों की स्थिति जानते तो उत्सव के लिए उनसे रुपया न वसूल करवाते। सर्व प्रथम गरीब बन, संपूर्ण ऐश्वर्यमद को तिलाँजलि देकर उन किसानों के साथ कुछ दिन अपना जीवन बिताइए, फिर यदि आपको किसी

प्रकार का चन्दा इकट्ठा कराने का साहस हो, तब कहिए।" भारतीय किसान अभी इतने धनवान नही है।"

× × × ×

आठ बज रहे थे सहसा कोलाहल सुनाई पडा। दीवान साहब बोल उठे, "ठाकुर साहब, यह कोलाहल किसानो का ही मालूम होता है।"

ठाकुर साहब, दीवान साहब और प्रभावती सहित बाहर निकले। देखा, "सामने क्रान्ति करने के लिए किसानो की भीड जमा थी। एक दो प्रमुख किसान आगे बढ कर नारे लगा रहे थे—'इन्कलाब जिन्दाबाद गरीब किसान-लूटे गये। हम क्यो आये है, मरने आये है। ठाकुर साहब ने शान्त होने का इशारा किया। लोग बाते सुनने के लिए शान्त हो गये। वह बोले

"क्या, बात है ? तुम लोग क्यो हल्ला मचा रहे हो ?"

सब एक स्वर से बोल उठे, "हम लोग लूटे जा रहे है।"

सब जानते हुए भी ठाकुर साहब ने कहा, "कौन लूट रहा है ?"

"हुजूर, दीवान साहब से पूछिए।" उपस्थित भीड मे से आवाज आई।

ठाकुर साहब की बगल मे ही दीवान साहब खडे थे। ठाकुर साहब दीवान साहब की ओर देख कर चुप रहे। फिर बोले, "तुम लोगो से चन्दा माँगा गया, उसी को लूटना कह रहे हो क्या ?"

"हाँ सरकार, हम लोग लुट गये, बच्चे भूखो मर रहे है।" सभी ने एक स्वर मे कहा।

फटी बडी पहने, पगडी बाँधे, बूढे-जवान तथा बच्चे, पेट-खोले, आँखो मे आँसू भरे खडे थे। ऐसा मालूम हो रहा था मानो मरने के लिए आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हो। प्रभावती से यह दारुण दु ख न देखा गया। वह बोल उठी :

"जाओ, तुम लोगो से चन्दा नही लिया जायगा।"

अपार हर्ष-ध्वनि से आकाश गूज उठा। मरने के लिए आये थे,

जीवन-दान पाया। बच्चो की भूख मिटने की आशा हुई। ठाकुर साहब की जय बोल उठे। एक बूढा घबराया हुआ आगे बढा और बोला, "हजूर जे दइ चुका हयँ।"

प्रभावती मुस्करा कर बोली, 'उनका चन्दा वापस कर दिया जायगा।"

सब किसान प्रसन्न हो अपने घरो को लौट पडे। ठाकुर साहब का सारा शरीर क्रोध से जला जा रहा था, किन्तु एक दिन पहले ही प्रभावती से विवाद हो चुका था, इसलिए पुन सघर्ष नही बढाना चाहते थे। प्रभावती भी उनकी नाराजगी को समझ रही थी, लेकिन किसानो के सामने जीवन-मरण का प्रश्न था। अत उत्सव को कम उपयोगी समझ कर किसानो को चन्दे से मुक्त कर दिया।

दीवान साहब चलने के लिए तैयार होते हुए बोले, "तो चन्दे की रकम वापस कर दूँगा ?"

कुछ क्षण ठाकुर साहब मौन रहे फिर बोले, "अब भी सन्देह! कल ही जाकर वापस कर दीजिए।"

दशहरे का उत्सव गरीब किसानो की भूख शान्त करने मे परिवर्तित हो गया।

प्रभावती-के सहित ठाकुर साहब सीढी की ओर बढे और दीवान साहब अपने घर की ओर चल दिये।

: ३९ :

रायसाहब समय पर उठकर सात बजे तक सब कामो से निवृत्त हो मुनीम जी की प्रतीक्षा मे बैठे थे। आने मे देरी समझ, आदमी भेज कर बुलवाया। मोटर तैयार थी, मुनीम जी के आने पर गोविन्दपुरा के लिए चल दिये। ड्राइवर ने पूछा

"किस तरफ से चलना है ?"

रायसाहब ने उत्तर दिया, "सीधे सारनाथ होकर गोविन्दपुरा पहुँचना है।"

ड्राइवर निर्दिष्ट स्थान की ओर तेजी से मोटर ले जा रहा था। मुनीम जी रायसाहब की बगल मे बैठे सोच रहे थे—कितनी ही शिकायतें हो। आज तक रायसाहब ने कभी मुझ पर अविश्वास नही किया, पर कल शाम को न जाने कैसी बात होगई! मैंने जो भी कार्य किया है, सब उन्ही के फायदे के लिए, फिर भी नाराज़ होगये। एक साल लगान न वसूल हो तो सारी उदारता मिट जाय। सब तरह से परिश्रम करके लगान वसूल कर लेता हूँ। नही, कौडी न मिले। मै काम छोड दूँगा तब पता चलेगा। कितने परिश्रम के बाद मुकदमे मे विजय हुई, किन्तु इस भले आदमी ने बदले मे एक शब्द भी धन्यवाद मे नही कहा। मेरे काम की कौडी कीमत नही व्यर्थ ही दिन-रात मरता फिरा।

रायसाहब ने कहा, "मुनीम जी, आप क्या सोच रहे है।"

मुनीम जी ने सतर्क होते हुए उत्तर दिया, "कुछ नही साहब।"

रायसाहब ने कहा, "मैने इसीलिए पूछा कि आप चुपचाप बैठे है, कुछ बोले नही। फिर आपकी मुख-मुद्रा कुछ चिन्तित सी मालूम होती है।"

मुनीम जी बनावटी मुस्कान लाने का प्रयत्न करते हुए बोले, "मै चिन्तित तो नही हूँ।"

रायसाहब ने कहा, "अच्छा कोई बात नही है, हाँ, आपसे मैने किसानो की बेदखली के लिए मुकदमा चलाने को तो नही कहा था। आपने बडी गलती की। चारों ओर बदनामी हुई, इसका तो आपको ख्याल रखना ही चाहिए। थोडी सी वस्तु के लिए व्यर्थ मे बदनाम होना अच्छा नही होता। किसानो से रुपये वसूल करने के बहुत-से तरीके है। आप बुजुर्ग हो गये, पर विचार से काम नही करते।

"गाँव वालो से काम निकालने के लिए यह आवश्यक होता है कि गाँव के एक-दो प्रमुख आदमियों को छूट देकर अपने पक्ष मे कर ले, फिर वही स्वय गाँव भर से रुपये इकट्ठे कराने में मदद करेगे। आवश्यकता पडने पर लड़ेंगे भी। पूरा नौकर का काम करेगे, गाँववालो को

उभरने न देंगे, लेकिन छूटवाली बात और दूसरा कोई न जानने पावे ।"

मोटर सन्न से सारनाथ के आगे से निकल गई । कुछ ही क्षणो मे तीस मील की यात्रा समाप्त कर गोविन्दपुरा मे पहुँची । किसानो ने मुकदमे मे हार कर वापस आने पर तय किया था कि जमीन न छोडेगे, बल्कि बलिदान हो जायेगे । गॉव भर के लोग इकट्ठे होकर सत्याग्रह करने के सम्बन्ध मे विचार कर रहे थे । सायकाल रायसाहब के घर पहुँचकर प्रदर्शन करना चाहते थे, किन्तु रायसाहब स्वय उपस्थित हो गये । देखकर किसान लोग आगे बढते हुए कह रहे थे, "आज ही जमीन से बेदखल करने आरहे है ।"

मोटर से उतरते ही रायसाहब ने भीड देखकर सोचा—शायद किसान लोग मुकदमे के सम्बन्ध मे ही विचार करने के लिए इकट्ठे हुए है ।

किसानो ने उठकर सलाम किया, और खातिरदारी के साथ बैठाया । एक-दो बूढे किसान मुकदमेबाजी पर खेद प्रकट कर पुराने सम्बन्ध की चर्चा कर रहे थे । रायसाहब अधिक देर तक बरदाश्त न कर सके, बोले :

"आप लोग शायद सोचते होगे कि मुकदमे मे रायसाहब जीत गये है, बेदखली कराने आये होगे । लेकिन मै अपने किसी किसान भाई को बेदखल करने नही आया हूँ, बल्कि उनकी सुविधा के लिए और तरह-तरह के सुझाव लेने आया हूँ । कुछ बातो का सदेश तो मुनीम जी के द्वारा मिलता रहा लेकिन मैने स्वय आकर देखना चाहा ।"

किसानो ने बडी कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा, "आपने बडी कृपा की ।"

किसानो के नम्र शब्द सुनकर रायसाहब प्रसन्न हो गये । फिर बोले, "जिन किसानो से मुकदमे बाजी हुई शायद उन सब को मै पहचानता भी नही । कही-कही हमारे किसान भाई भी गलती कर बैठते है । यह

तो आप जानते ही हैं। आज बडे भाग्य से किसानो का राज्य कायम हुआ है। हम सब किसानो के सेवक है, तो कही मालिक पर सेवक नाराज हो सकता है ? हाँ, मालिक का कर्तव्य होता है कि वे अपने सेवको का भी ध्यान रक्खे।"

रायसाहब की इस तरह बाते सुनकर भोले किसान गद्गद होकर सोचने लगे, "रायसाहब बडे अच्छे है। मुकदमा जीत कर भी किसानो को बेदखल न करेगे। बीच के काम करनेवाले ही घपला मचा देते है। रायसाहब के पिता जी भी ऐसे ही थे। उनके और किसानो के बीच कभी झगडा नही हुआ।"

सब किसान हाथ जोडकर कहने लगे, "नही, सरकार! मालिक आपही है।"

"नही, तुम नही समझते हो। आज तुम मे सबसे बडी ताकत है, जिसको चाहो राजा बना दो और जिसको चाहो प्रधान मन्त्री बना दो, सब तुम्ही लोग कर सकते हो। देखते ही हो तुम लोगो से वोट माँगने के लिए कितने बडे-बडे आदमी आते है, यदि कोई महत्व न होता तो क्यो आते ?"

रायसाहब की बाते सुनकर सभी किसान गदगद हो गये। उन्हे यह आशा न थी कि रायसाहब मुकदमे मे जीतकर भी हम किसानो को बेदखल न करेगे।

किसान रायसाहब के जलपान का प्रबन्ध कर रहे थे, दूध काफी था, लेकिन चीनी सम्पूर्ण गाँव मे तलाश करने पर भी आधा पाव से ऊपर न मिल सकी। तुरत दूध गरम कर रायसाहब के सामने हाजिर किया। रायसाहब ने कहा, "आप लोगो ने बेकार ही कष्ट किया, हम तो जलपान करके आये थे।"

"हाँ सरकार, आप भूखे नही है लेकिन, पत्रपुष्प हम लोगो का भी स्वीकार कर लीजिए। हम लोगो के पास आपके खिलाने के योग्य कोई चीज भी तो नही हे।"

"नही-नही, सभी चीजे है। दूध से बढकर और क्या हो सकता है ? शहरो मे तो पानी पीते-पीते लोगो का होश बिगड जाता है।

"हाँ, सरकार आपके कहने को यही है।"

रायसाहब ने दूध पीते हुए कहा, "मै आज ही लौट जाना चाहता हूँ। सिर्फ झगडा शान्त करने आया था।"

"सरकार, हम लोग झगडा करने योग्य नही है।" किसानो ने कहा।

"हाँ-हाँ, मै समझता हूँ । जितने रुपये लगाकर मुकदमा लडोगे उतने से कोई दूसरा काम हो जायगा। हजारो रुपये लग जाते है, लाभ कौडी का नही होता।"

"हाँ, सरकार।" (सब किसानो ने स्वीकार किया।)

रायसाहब आराम करने लगे, किसानो ने तय किया कि रायसाहब मुकदमा मिटाने आये है। जीत कर भी बेदखल न करेगे तो कुछ अपना लाभ ही सोचे होगे। उन्होने कहा, "कुछ नही, फिर भी हम लोगो को सोचना ही चाहिए, यदि जमीन से बेदखल कर देते तो हम लोगो की कोई नही सुनता। नेता लोग भी आते है, लम्बे-लम्बे भाषण दे जाते है, लेकिन वक्त पडने पर कोई साथ नहीं देता ? पानी मे रह कर मगर से बैर अच्छा नही होता । जाते समय रायसाहब को कुछ रुपये भेंट कर देना चाहिए।

समय हो गया था रायसाहब को भोजन करवाया और स्वय भी किया। फिर रुपये के प्रबन्ध मे जुट गये। गोविन्दपुरा बडा गाँव है दूकाने नही है, केवल एक यही कमी है, नही तो पूरा कस्बा है। दो बजे तक एक हजार रुपये का प्रबन्ध हो गया। किसी ने उधार लिया, किसी ने जेवर रखा और किसी ने जमीन ही रेहन रखी। जिस किसी तरह हो सका, रुपये सब ने दिये। जो रुपया देने से सर्वथा असमर्थ थे, उन्होने गल्ला ही दिया। यहाँ तक की अपने बच्चो के लिए कुछ न रख कर सब दे दिया।

रायसाहब के चलने का समय हो गया। चार बजने मे कुछ ही समय शेष था। वर्षा की भी आशा न थी, चलने के लिए तैयार हो गये। किसान भी अपनी तैयारी कर उपस्थित हो गये थे। चलते समय गाँव का एक प्रमुख किसान आगे बढा और रुपये देते हुए कहा, "यह आपके लिए बिदाई है सरकार।

रायसाहब ने कहा, 'नही-नही, मेरे लिए बिदाई क्या ? आप लोग लगान देते है, वही मेरे लिए सब कुछ है। फिर आप लोगो की कृपा भी तो चलती है। आप लोग लगान भरने के बाद फिर कैसे गुजर कर पाते है। रुपये वापस करने लगे।

सब किसान एक साथ बोल उठे, "नही साहब, ऐसा नही हो सकता आपको रुपये लेने पडेगे।" रायसाहब आगे एक शब्द भी न बोल सके। उन गरीबो की उदारता से आत्मा दब गई, सोचने लगे—सच मे यही देश के सेवक है, और मोटर पर बैठ गये।

मोटर घरघरायी, किसानो ने जय-नाद किया और रायसाहब हाथ जोडे हुए क्षण भर मे ही बगीचे के आगे निकल कर आँखो से ओझल हो गये।

: ३२ :

ठाकुर साहब शयन-गृह में पहुँचकर बोले, "प्रभा, तुम फिर अपने कर्तव्य से विमुख होने लगी हो। तुमने यह नही सोचा कि विजयदशमी के उत्सव मनाने की बात चारो ओर फैल चुकी है। उसके बन्द होने से कितनी बडी बदनामी होगी ?"

प्रभावती ने कहा, "गरीब किसानो की हत्याएँ तो बन्द होगई। क्या इसमे नेकनामी नही है। मै तो समझती हूँ, केवल मनोरजन के लिए किसी को कष्ट देना उचित नही। हाँ, यदि सब का मनोरजन होता हो तो कोई बात नही। किन्तु, विजयदशमी के उत्सव से किसानो के मनोरंजन का कोई सम्बन्ध नही। फिर भी मै अपनी धृष्टता के लिए क्षमा चाहती हूँ।"

ठाकुर साहब आगे कुछ न बोल सके। प्रभावती उठी, सुग्गी को आवाज दी और वह खाना लेकर उपस्थित हुई। दोनो ने प्रेम की बाते करते हुए भोजन करना शुरू कर दिया। रसेदार आलू मे नमक न था। प्रभावती बोली, "अरे ? सुग्गी आज रविवार का व्रत मना लिया क्या ?"

सुग्गी घबराई हुई सामने आकर बोली, 'का हुकुम ह मालकिन ?"

"हुकुम क्या है ! साग मे नमक नही है।"

सुग्गी सन्न रह गई ! तुरत पिसा हुआ नमक थाल के एक कोने मे रख दिया। ठाकुर साहब ने कहा, "तुम्हारा श्याम खाना खा चुका ?"

प्रभावती मुस्कराकर बोली, "हमारा ही भर क्यो आपका नही। वह दिन रहते ही खा चुका था, और आठ बजे सोगया। अब हम लोगो की .."

"हाँ-हाँ, देरी क्यो पलग बिछा है।" ठाकुर साहब ने कहा।

× × × ×

श्याम को आये कई महीने हो गये। प्रभावती अपने बेटे के समान उसके पालन-पोषण मे लगी रहती थी। श्याम प्रभावती को "माँ समझने लगा। उसे घर मे निकलने की सारी आपत्तियाँ भूल गई। कभी-कभी गिरीश की याद आती थी, पर कुछ देर बाद ही शान्त हो जाती। वह राजसी सुख-भोग रहा था।

प्रभावती श्याम के अधिक स्नेह के कारण ठाकुर साहब की सेवा अधिक समय तक नही कर पाती थी। इससे ठाकुर साहब खिन्न रहने लगे। कभी-कभी झुँझला कर श्याम को घर से निकालने की बाते भी करने लगते थे। पर प्रभावती उनकी बातो पर ध्यान न देकर अपना काम करती रहती थी। वह श्याम की पढाई के बारे मे सोच रही थी। एक मास्टर को घर पर लगा लिया गया। श्याम पढने मे बड़ा तेज था। मास्टर खूब परिश्रम से पढाते थे। थोडे ही दिनो में

कक्षा चार मे दाखिल कराने योग्य बना दिया।

स्कूल खुलते ही श्याम को दीवान साहब के साथ दाखिले के लिए भेजा। हेडमास्टर साहब दाखिला रजिस्टर निकाल कर बोले, "लड़के का क्या नाम है।"

दीवान साहव ने कहा – "श्याम पडित।"

मास्टर साहब ने कहा—"श्याम पडित या पडित श्याम।"

दीवान साहब—"ऐसे ही कुछ है।"

मास्टर साहब अभी आपने क्या कहा है ?

दीवान साहब—"मैंने ?"

चिढ कर मास्टर साहब ने कहा, "हाँ तुम्ही ने।"

दीवान साहब, 'श्याम पडित।"

मास्टर साहब—' पडित तो जाति है। ब्राह्मण को पडित कहते हैं, आपतो ठाकुर साहब के यहाँ से आये है। क्षत्रियो के यहाँ लाल कुँवर तथा ठाकुर नाम के साथ जुडता है। आप पडित कैसे कहते है ?"

दीवान साहब ने कहा, "अब तक तो हमने एक गाँव का लगान वसूल कर लिया होता।"

मास्टर साहब—"हाँ, हाँ, दीवान साहब, लगान वसूल करने और लडके पढाने मे बहुत बडा अन्तर है। बिना पढा आदमी भी लगान वसूल कर सकता है, लेकिन बच्चे नही पढा सकता। इसके लिए शिक्षित, चरित्र-वान तथा प्रतिभाशाली होना बहुत जरूरी है।"

दीवान साहब ने कहा—"मास्टर साहब आज मुझे भाषण सुनने का अवसर नही है, आप जल्दी से नाम लिख लीजिए, मै चलूँ।"

मास्टर साहब मन-ही-मन कुपित हुए। पर चुपचाप नाम लिख लिया। फिर पिता का नाम पूछा तो दीवान साहब नही बता सके। बच्चे सें पूछा तो वह भी उत्तर न दे सका। मास्टर साहब भी जानते थे कि ठाकुर साहब के कोई लडका नही है, यह किसी दूसरे का ही लड़का है।

दीवान साहब के न बतलाने पर मास्टर साहब ने कहा, "तब आप क्या नाम लिखाने आये है ? पिता का नाम नही जानते, जाति नही जानते और ठीक से नाम भी नही जानते। मेरी समझ मे नही आता कि आप लगान कैसे वसूल कर लेते है।"

दीवान साहब बोले, "अच्छा मास्टर साहब, मै अभी पिता का नाम पूछ कर आता हूँ। आप नाराज न हो।"

मास्टर साहब, "नाराज नही हो रहा हूँ। आप स्वय सोचिए कि जिस काम के लिए आप आये है उसे नही जानते। आप अगर नही जानते थे तो पूछ कर आते। आपने अपना तो नुकसान किया ही, साथ ही बच्चो की पढाई मे भी हर्ज हुआ।"

श्याम को स्कूल मे छोडकर दीवान साहब ठाकुर साहब की कोठी पर चले गये। प्रभावती बैठी सोच रही थी—श्याम ने जिसकी कोख मे जन्म लिया है वह समझती होगी कि श्याम इस ससार मे नही है। किन्तु भगवान् की कृपा से आज स्कूल मे पढने गया है, पढ लिखकर विद्वान् बनेगा और मेरे साथ माँ का-सा व्यवहार रखेगा। मै उसे अपनी सम्पूर्ण जायदाद का अधिकारी बनाऊँगी।

दीवान साहब सामने दिखाई दिये। प्रसन्नता से प्रभावती बोली, "दाखिला हो गया ?"

दीवान साहब ने कहा—"नही, मै श्याम के पिता का नाम ही नही जानता था।"

प्रभावती की आँखो मे आँसू भर आये। बोली, 'मुझे भी नही मालूम। आप तो श्याम को जानते ही है, वह किस तरह हमारे यहाँ पहुँचा है। मास्टर साहब से सम्पूर्ण किस्सा बतला देना। ठाकुर साहब का नाम सरक्षक मे लिख लेंगे। दीवान साहब पुनः वापस हुए। मास्टर साहब प्रतीक्षा मे ही बैठे थे। बगल मे श्याम नीचे की ओर सिर किये बैठा था। दीवान साहब पहुँचते ही बोले, "मास्टर साहब, श्याम के पिता का नाम मालूम नही है। यह भूल कर कोठी पर पहुँचा था, तब से

ठाकुर साहब ही पालन-पोषण करने लगे। अब तक इसके माँ-बाप का पता नही है।"

श्याम बोल उठा "माँ का पता नही है ? कोठी पर बैठी है।"

"मास्टर साहब हँसने लगे। श्याम को अनाथ समझकर मास्टर साहब को दया आगई। पिता का स्थान रिक्त छोड सरक्षक के स्थान मे ठाकुर साहब का नाम लिख लिया और श्याम को छुट्टी देदी।"

फिर बोले "कल से दस बजे स्कूल आया करना बेटा !"

दीवान साहब श्याम को साथ लेकर वापस कोठी पर पहुँचे। प्रभावती ने श्याम को गोद मे उठा लिया। श्याम कहने लगा, "माँ ! दीवान साहब मास्टर साहब से कहते थे कि श्याम के माँ-बाप का पता नही है। तुम कहाँ चली गई थी।"

प्रभावती—"मै तो यही थी।"

श्याम—"तब दीवान साहब क्या कहते थे ?"

प्रभावती "योही कहते रहे होगे।"

श्याम—"माँ, बडे आदमी क्या झूठ बोलते है।"

प्रभावती—"बडे आदमी झूठ नही बोलते। मुझे न देखा होगा।"

श्याम—"अच्छा, हमारे बाप का क्या नाम है ?"

इस प्रश्न से प्रभावती मुश्किल मे पड गई। उसका हृदय दया से भर आया। सोचकर उत्तर दिया—"तुम्हारे पिता का नाम भगवान् है बेटा।"

श्याम—"हमारे पिता का सभी लोग सुबह नाम लिया करते है।"

प्रभावती—"हाँ ! श्याम पुलकित हो खेलने लगा। प्रभावती अपने काम मे लग गई। श्याम खेलते-खेलते ठाकुर साहब के कोठे मे पहुँच गया। वहाँ ठाकुर साहब की घडी से खेलने लगा। कुछ देर में घड़ी के सब पुरजे अलग-अलग हो गये। श्याम चलना चाहता था। कि ठाकुर साहबआकर बोले "यह क्या ?" घडी की हालत देखकर दो चाटे श्याम के गालों पर जमा दिये। श्याम चिल्लाकर रो पड़ा। प्रगावती दौड़ कर

आई। रोते हुए श्याम को उठा लिया और "बोली, क्यो, क्या बिगाड रहा था ?"

ठाकुर साहब ने कहा, "पहले अपने लाल की करामात देख लो, फिर बात करो।"

प्रभावती ने कहा, "देख क्या लूँ ! आपको सुरक्षित रखना चाहिए। यह नादान बच्चा क्या जाने ?"

ठाकुर साहब, "तुम तो जानकार की बच्ची थी तुमने क्यो नही रोका ! खबरदार, सामने आया तो खैरियत न समझना।"

प्रभावती—"आपको दया नही आती। एक अनाथ बच्चे के लिए इस तरह से कटु शब्द।

क्रोध मे आकर ठाकुर साहब ने कहा

"निकल जाओ मेरे घर से ! बडी बच्चे वाली बनी हो।"

प्रभावती—"निकल क्यो जाऊँ ? इस घर मे मेरा भी हक है। उस दिन इसी श्याम के लिए आपने कहा था—बेटे तुमने मेरा बडा उपकार किया। मै तुम्हारे इस उपकार के बदले मे क्या सेवा कर सकता हूँ, मै अपनी शक्ति के अनुसार तुम्हारी सेवा करते हुए जीवन भर कृतज्ञ रहूँगा आज उसी उपकार का बदला चुका रहे है ?"

ठाकुर साहब प्रभावती के स्मरण दिलाने पर पीले पड गये। दो सौ रुपये की घड़ी के स्वार्थ मे बच्चे का अमूल्य उपकार भूल गये थे। तुरन्त प्रभावती के पास आये और श्याम को अपनी गोदी मे लेते हुए बोले, "बेटे आओ।" श्याम सिसक-सिसक रो रहा था। माँ को छोडकर ठाकुर साहब की गोद मे नही गया। ठाकुर साहब ने कहा, "स्कूल मे दाखिल हो गया ?"

प्रभावती ने आनन्दमग्न होकर कहा, "हाँ, हो गया। श्याम को आप मारा न कीजिए।"

ठाकुर ने कहा, "पगली, मै श्याम को क्यो मारूँगा ? घडी के पुर्जे सब अलग कर दिये थे इसलिए गुस्सा आगया।

प्रभावती—"चाहे जो भी हो, लेकिन श्याम को कुछ भी न कहिए। उसके बदले मुझे सब कुछ कह लीजिए।" और श्याम की पीठ पर हाथ फेरते हुए उसे अपनी छाती से लगा लिया।

: ३३ :

मोहन कई दिन से स्कूल मे पढने लगा था। अध्यापको को पहल पहल बडा आश्चर्य हुआ, कि वह उपस्थिति मे भी नही बोलता। एकाएक गिरीश के सत्ससग से उसका जी पढने मे लगने लगा। यह खुशखबरी रायसाहब को सुनाने के लिए स्कूल की छुट्टी होने पर सब अध्यापक कोठी पर उपस्थित हुए। पर पाँच बजे तक रायसाहब वापस न आये थे। अध्यापक दूसरे दिन आने के लिए निश्चिय करके वापस जा रहे थे।

कोठी से निकलते ही मोटर सामने आकर रुकी। ड्राइवर ने उतर-कर फाटक खोला। रायसाहब मोटर से उतरते हुए बोले, "आज मास्टर साहबान एक साथ यहाँ कैसे पधारे है?"

प्रधानाध्यापक ने कहा, "आज आप ही के यहाँ बधाई देने आये है।"

रायसाहब—"पधारिए बडी कृपा है।"

बैठक भर गयी। रायसाहब ने बद्री को आवाज लगायी, वह हाजिर होकर बोला

"हाजिर हइली सरकार।"

रायसाहब—"देखो, मोहन के मास्टर साहबान आये है नाश्ते का इन्तजाम कराओ।"

प्रधानाध्यापक—नही-नही, नाश्ते की कोई जरूरत नही है।

रायसाहब—जरूरत क्यो नही है, अभी आप लोग स्कूल से आ रहे होगे।

प्रधानाध्यापक—जी हाँ, स्कूल से ही आ रहे है। हम लोग कई दिनो से सोच रहे थे, पर न आ सके। बडी खुशी की बात है कि मोहन

अब खूब पढता है। इधर कुछ दिन से गिरीश नाम का एक लडका आने लगा है। उसके सत्सग से मोहन भी खूब पढता हे। अब अपनी कक्षा मे मोहन का दूसरा स्थान है। गिरीश है तो गरीब लडका, लेकिन पढने मे बडा तेज है। कभी-कभी बिना खाये ही स्कूल चला आता है।

मोहन अन्दर द्वार से झाक रहा था। प्रधानाध्यापक महोदय की नजर पड गई। बोले आओ, मोहन दूर से क्या देख रहे हो।" मोहन कैसे भाग सकता था, सामने आकर नमस्ते की। प्रधानाध्यापक महोदय ने पास मे बैठा लिया। मोहन गम्भीर हो, चुप-चाप बैठ गया।

बद्री आठो अध्यापको के सामने अलग-अलग तश्तरियो मे मीठा और कपो मे चाय लेकर रख गया। रायसाहब बोले—आप लोग खाना शुरू कीजिए।

प्रधानाध्यापक—"मोहन के सामने तो अभी कुछ आया ही नही।

मोहन बोला—'मै मास्टर साहब, अभी खाकर आया हूँ।"

रायसाहब, "आप लोग शुरू कीजिए, मोहन को मिल जायगा।" मास्टर साहबान ने शुरू कर दिया और स्वय रायसाहब ने तश्तरी मे मिठाई रखकर मोहन की ओर बढादी। फिर स्वय खाने लगे।

बद्री ने सब को पान दिया। मास्टर साहबान पान खाकर चलने के लिए तैयार हो गये। रायसाहब उठे और पाँच-पाँच रुपये सभी अध्यापको को और दस रुपये प्रधानाध्यापक को देने लगे।

प्रधानाध्यापक बोले—कृपा बनाए रखिए हमेकुछ नही चाहिए।"

परन्तु रायसाहब ने सबको इनाम दिया और उस गरीब लडके का पाँच रुपया महीना बजीफा बाँध दिया। अध्यापक लोग प्रसन्न चित्त बिदा हुए।

× × ×

मोहन अदर आकर अपनी माँ से कहने लगा, "पाँच-पाँच रुपये सभी मास्टरो को और दस रुपये हेडमास्टर साहब को बाबू जी ने दिया।

है। और पाँच रुपये महीने हमारे साथी को भी देने के लिए कहा है।"

कमला भौह सिकोडते हुए बोली, "कौन साथी।"

मोहन—"वही जिसने मुझे पढना सिखाया है।"

माँ-बेटे की बाते हो रही थी। इसी बीच रायसाहब भी उपस्थित हो गये। कमला कुछ सहम कर व्यग करती हुई बोली, "किसानो से हो गया समझौता ?"

रायसाहब ने कहा, "समझौता क्यो न होता ? समझौता भी हो गया और एक हजार रुपये भी मिल गये।"

कमला—"अब तो एक हजार रुपये देने मे किसानो को कष्ट न हुआ होगा ?"

हँसकर रायसाहब ने कहा, "कष्ट होता तो देते ही क्यो ?"

कमला—"बेचारे दबाव से दिए है, खुशी मन से न दिए होगे। कहाँ इतने इफरात से रुपये भरे है जो लुटा रहे है।"

रायसाहब—"किसान जमीन से बेदखल नही हो रहे है, मैने रुपये लेने के लिए एक शब्द भी नही कहा, फिर दबाव किस बात का ?

कमला—"आपने भले न कहा हो, लेकिन · · ·।"

रायसाहब—"लेकिन क्या बार-बार मना करने पर भी जबरन रुपया मोटर मे डाल दिया। इससे हम उन्हे प्रसन्न ही समझते है।"

कमला—"आप समझिये किन्तु मै ऐसा नही समझती।"

रायसाहब—"तुम क्यो समझो ? तुम्हे तो लडाई करनी है।"

कमला—"हाँ, मुझ जैसी लडाकी और आप जैसे··· ··।"

× × ×

सात बज गये, दोनो महाराजिन कमला से छुट्टी लेने आईं। कमला ने कहा, "खाना अच्छी तरह ढँक दिया है ?"

शान्ति ने कहा, "सब ठीक से रखा है।"

दोनो को घर जाने की आज्ञा मिल गई।

× × ×

कमला रायसाहब से मास्टरो के आने का कारण जानना चाहती थी, किन्तु दूसरी बात शुरू हो जाने से न जान सकी। बोली

"आज मास्टर साहबान क्यो आये थे ?"

रायसाहब ने कहा, "हाँ, मै बतलाना ही भूल गया, और बतलाता भी कैसे ? तुमने तो आते ही दूसरी बात छेड दी। मास्टर साहबान बधाई देने आयें थे। मोहन अब स्कूल मे पढने लगा है। किसी गरीब लडके का साथ हो गया है। इसी खुशियाली मे सब मास्टर साहबान आयें थे। जाते समय पाँच-पाँच रुपये सब मास्टरो को, और दस रुपये हेडमास्टर साहब को पुरस्कार मे दे दिया। उस गरीब लडके के लिए पाँच रुपया महीना देने के लिए कह दिया है।"

कमला मोहन की पढाई का समाचार जानकर गद्-गद् होगई और बोली, "मास्टरो को आपने पुरस्कार दे दिया बडा अच्छा किया। मोहन ने भी एक-दो बार बतलाया था कि एक गरीब लडका हमको पढना सिखाता है, लेकिन मै यो ही समझती थी। उस लडके के लिए सहायता जरूरी थी, फिर उससे अपना स्वार्थ भी है। यदि मोहन को पढने मे मदद देता है तो खास तौर से मदद करनी चाहिए।

रायसाहब ने कहा, "मै सब काम अच्छा ही करता हूँ।"

कमला ने कहा, "आप सब काम अच्छा ही करते है पर उस महाराजिन······।"

: ३४ :

"कीर्तिसिह के निकल जाने से जमीदारी का सारा काम ठप्प हुआ जाता है। काम करने वाले आदमी को बुला लेना कोई अनुचित नही है। यदि कीर्तिसिह होता तो किसान लगान-बदी आन्दोलन करने के लिए तैयार न होते। वह किसानो को मदद करता होगा। आपके कुछ काम भी ऐसे ही होते है, जिसकी मुखालफत करने के लिए किसानों को खडा

बल प्राप्त करना बहुत जरूरी है, लेकिन इन सब से कीर्तिसिह का क्या सम्बन्ध ? वह नाराज होकर गया है । मैने तो गलती नही की ! फिर चिता ही क्यो करूँ ?"

ठाकुर साहब की गम्भीर-मुद्रा देखकर प्रभावती ने कहा—"यदि आप अनुचित न समझे तो कीर्तिसिह को बुलवा ले, योग्य आदमी का तिरस्कार करना उचित नही ।"

आवेश मे आकर ठाकुर साहब ने कहा, "मेरा क्या अपराध है ? कीर्तिसिह स्वय गलती करके अलग हुआ हे, माफी माँगने तक नही आया। उलटे मै ही उसे मनाने जाऊँ ! कदापि नही हो सकता ।"

प्रभावती, "इसमे क्या हुआ ?"

ठाकुर साहब, हुआ क्यों नही ? अपने अभिमान से चूर होकर ससार को तुच्छ समझना क्या कम मूर्खता है । उसे, बाप-दादो के जमाने से बिना लगानी जमीन दी गई थी, साल मे ऊपरी खर्च के लिए रुपये दिए जाते थे और कपडे का भी यही से प्रवन्ध होता था । इसके अलावा आवश्यकता पडने पर और तरह-तरह की सहायता भी दी जाती थी। सब कुछ भुला कर मेरा विरोध किया है उसने इस पर भी मै उसे पुन बुलाना उचित समझूँगा ?"

प्रभावती—'यही तो मनुष्य की गलती है ससार मे जो मान-अपमान को त्यागकर उचित-अनुचित विवेक को ग्रहण कर लेता है, वही उन्नति करता है । हाँ, सैहसा ऐसा होना कठिन लगता है, पर क्रमश. ठीक हो, परन्तु कीर्तिसिह ने कोई अनुचित कार्य भी नही किया। जो कहा आपके हित के लिए कहा । जी हुजूरी नही की, यही एक अपराध है ।

प्रभावती की बाते समाप्त न हुई थी कि दीवान साहब आ गये। प्रभावती ने पूछा "दीवान साहब, इस समय कीर्तिसिह कहाँ रहता है ? आपको कुछ मालूम है !"

दीवान ने कहा, "जी हाँ, वह अपने गाँव मे मौज से रहता है।

एक चरखा-सघ कायम कर लिया है। दस आदमी उसके यहाँ काम करते है।"

प्रभावती ने कहा, "ठीक है, जो व्यक्ति कर्तव्यशील होता है, वह सर्वत्र सुखी रहता है। दीवान साहब, कल आप कीर्तिसिह को बुला लाइए। और कहिए ठाकुर साहब ने बुलाया है।"

ठाकुर साहब डाँटकर बोले, "मै कीर्तिसिह को फिर से यहाँ नही आने देना चाहता।"

दीवान साहब, "ठीक भी है, इसमे आपका अपमान है।"

प्रभावती दीवान साहब को डाँटती हुई बोली, "आप लोगो के काम से क्या ठाकुर साहब का अपमान नही होता। चारो ओर किसान मुकदमेबाजी पर तुले है। साल भर से किसान लगान देना बंद किए है। आपको महीने मे तनख्वाह मिल जाती है। बैठे हुए-हजूरी करते रहते है। जमीदारी का सारा काम चौपट हो गया।

प्रभावती की बाते दीवान साहब को काफी बुरी लगी। भीतर ही भीतर आग बबूला हो गये, पर कर ही क्या सकते थे। प्रभावती "दीवान साहब, श्याम को साथ लेते जाइए। और कीर्तिसिह का घर बता दीजिए वह बुला लायेगा।"

दीवान साहब ने कहा, "मुझे कोई आपत्ति नही और श्याम माँ का आदेश स्वीकार कर दीवान साहब के साथ मोटर मे जा बैठा मोटर चल पडी।

: ३५ :

शान्ति को रायसाहब के यहाँ काम करते दो वर्ष से अधिक बीत रहे थे। वह समय पर आती, जाती और काम करती। शान्ति का काम बडा सन्तोषजनक था, पर कमला उसकी सुन्दरता से द्वेष करती थी, और कभी-कभी ताने दिये बिना नही रहती थी। शान्ति को अपने काम से मतलब। वह और प्रपच मे नहीं पडना चाहती थी। अपने काम को पूरा कर घर लौट जाती थी।

दूसरी महाराजिन शान्ति की कार्य-कुशलता से द्वेष करती थी। भोजन बनाने का काम शान्ति को ही मिला था, क्योकि दोनो की परीक्षा ली गई, जिसमे शान्ति को ही सफलता मिली थी। कभी दोनो महाराजिन मे झगडा भी हो जाता था। रायसाहब दोनो को डाट कर शान्त करने का प्रयत्न करते पर वह शान्त न हो सका। धीरे-धीरे बढता ही गया।

× × × ×

रायसाहब बैठक मे बैठे थे। मोहन की वर्षगाठ की तैयारी के लिए सोच रहे थे, एक दिन बाकी था। इसी समय ठाकुर सग्रामसिह ने आकर प्रणाम किया। रायसाहब ने कहा, "आइए, आइए, ठाकुर साहब! आपने तो इधर आना ही छोड दिया है।"

ठाकुर साहब बोले, "नही-नही, ऐसी कोई बात नही। आजकल जरा किसानो के उपद्रव अधिक होते है, इसलिए फुरसत नही मिलती।"

रायसाहब ने कहा "इसके लिए आप किसानोमे ही किसी को नेता बना दीजिए और कुछ उसकी मदद भी कर दिया कीजिए, फिर वही आपकी सम्पूर्ण गॉव से मदद करायेगा।"

रायसाहब की बाते ठाकुर साहब मे होती रही, उसी समय शान्ति अपने घर जाने के लिए बैठक मे होकर निकली। ठाकुर साहब, देख कर दग रह गये। आखे लाल पड गई। बोले, "यह औरत आपके यहॉ रहती हे।"

रायसाहब—"रहती तो नही, काम करती है।"

ठाकुर साहब—"आप इसको जानते नही है क्या।"

रायसाहब—"नही जानता हूँ पुरोहित जी के मुहल्ले मे रहती है। ब्राह्मणी है, काम करने मे बडी निपुण है।"

ठाकुर साहब—"होगी, लेकिन दुश्चरित्र है।

रायसाहब—"अच्छा!"

ठाकुर—"हा, इसे हम बहुत दिन से जानते है। इसकी ननिहाल

भी हमारे ही मुहल्ले मे है। आचरण ठीक नही है, एक बार महीनो गायब रही, फिर लौटकर आई, इसके पति रखते ही नही थे। बडी पचायत जुडी मुश्किल मे रखा गया। बेचारा पाप भोगने के लिए जी ही न सका। अब इधर-उधर फिरती है।"

रायसाहब—"इसे तो मैं बडी सम्मान की दृष्टि से देखता था, लेकिन इतनी गिरी हुई है?"

ठाकुर साहब—"हाँ, इससे आप पर भी लोग बुरा अनुमान लगाते होगे। अच्छा, अब चलूँ।"

रायसाहब—"चाय तो पी लीजिए।"

"ठाकुर साहब चाय नही पीऊँगा। आज्ञा चाहता हूँ।"

रायसाहब शान्ति के चरित्र के बारे मे सोच रहे थे। देखने मे तथा व्यवहार मे बडी भली मालूम होती है, लेकिन चरित्र के लिए कैसे कहा जा सकता है। आखिर ठाकुर साहब कह रहे है, तो कुछ जानते ही होगे, नही क्या पडी थी।

कमला आज सुबह शान्ति को निकालने का निश्चय कर चुकी थी। एक शब्द रायसाहब से कहला लेना चाहती थी। रायसाहब के आते ही थाल सामने रख दिया और रायसाहब भोजन करने लगे। कमला ने कहना शुरू किया, "आपने जो भैया की महाराजिन को रखा है, वह ठीक नही है। वह रानी बनी बैठी रहती है, कई बार मैने बतलाया भी। दूसरी महाराजिन बेचारी दिन भर काम करती है फिर भी वह उससे लडती है। ऐसी चुडैल से घर का सत्यानाश हो जायगा। मैंने कई बार उसे निकालने के लिए कहा, पर आपने अनसुनी करदी। इसका परिणाम बुरा होगा। यह दूसरी बात है कि आप उसके रूप पर ही मुग्ध हो रहे हो, लेकिन मेरे रहते कोई रॉड इस घर मे पैर नही रख सकती।"

रायसाहब कमला की, बाते सुनकर बोले, "तुम क्यो इतना बडबडा रही हो न रखना हो, तो जवाब देदो।"

कमला ने क्रोध मे आकर कहा, "आप से कोई मतलब नही, तो अब तक निकाल क्यो नही दिया।"

रायसाहब—"अधी मत बनो कमला! बिना कारण क्यो निकाल दूँ। तुम उस बेचारी से न जाने क्यो चिढती हो। जबान काबू में रखो और यदि उसका काम ठीक नही है तो निकाल दो।"

कमला ने प्रसन्न होकर चुप हो गई, और सुबह शान्ति के आते ही जवाब देना तय कर लिया।

× × × ×

उत्सव के कारण सभी नौकर अपने समय से एक घटे पहिले आते थे। शान्ति भी उसी के अनुसार पहुँची और काम मे लग गई।

कमला शान्ति को देखकर सुबह मना कर देने वाली थी, पर सोचा कि अभी कह देने से आज दिन मे ठीक काम न करेगी। इसलिए जाते समय दूसरे दिन आकर तीसरे दिन से न आने को कहा।शान्ति सुनकर सन्न रह गई। बोली, "बहू जी! हमने कोई गलती की है।"

कमला—"मै क्या बताऊँ अपने से ही पूछो।"

शान्ति—"मै अपने से पूछ कर ही आपसे पूछ रही हूँ।"

कमला—"मुझे दो महाराजिन की जरूरत नही है। अभी तक केवल तुम्हारी सहायता के लिए लगा रखा था।"

शान्ति—"आपने बडी कृपा की, इसके लिए मै सदा आभारी रहूँगी।"

कमला—"खैर, यह तो कहने की बात है, लेकिन कल मोहन की वर्षगाँठ है आना जरूर।"

शान्ति स्वीकार कर अपने घर के लिए चली गई।

: ३६ :

मोहन की वर्षगाँठ के उपलक्ष्य पर रायसाहब अपने इष्ट-मित्रों को निमत्रण-पत्र भेज चुके थे, और मोहन स्वय अपने साथियो के घर जा-जा कर उन्हे निमत्रण दे रहा था। वह सबके यहाँ पहुँच चुका था। एक

गिरीश को निमत्रण देना बाकी था, उसे भी देने के लिए मकान ढूँढ रहा था। यह मोहन जानता था कि उनका घर स्कूल के पास है और गिरीश को खेलते भी कई बार उसी जगह देखा था, पर किस मकान मे गिरीश के लिए आवाज लगाए, यह निश्चित् न कर सका। दो-तीन चक्कर लगाये, मकान न मिला। घरो मे झाँकता हुआ आगे बढा जा रहा था।

गिरीश अन्दर बैठा पढ रहा था। देखा, मोहन बेचैनी से आगे कहाँ बढता जा रहा है ? कही मुझे ही तो नही ढूँढ रहा। तुरन्त बाहर निकला और पीछे से आवाज़ दी

"मोहन, जरा मुझ गरीब की भी कुटिया देखते जाओ।"

मोहन ने चौककर पीछे की ओर देखा, गिरीश जाघिया और हाफ कमीज़ पहने आ रहा था। मोहन तेजी से बढता हुआ बोला, "अरे ! भाई, तुम्ही को तो घटो से ढूँढ रहा हूँ। अब तक तुम ने घर तक न दिखाया। सोचते होगे कि कभी आ न जाय, लेकिन न बताने पर भी न बच सके, आज मै आ ही गया।"

गिरीश, मोहन को अन्दर ले जाकर कम्बल ठीक करते हुए बोला, "बैठिए।" मोहन बैठ गया और बोला, "तुम्हारी माँ नही है क्या ?"

गिरीश ने उत्तर दिया, "हाँ, नही है, किसी सेठ जी के यहाँ खाना बनाती है। सात बजे बाद लौटती है।"

मोहन—"अब तो सात बज रहे है।"

गिरीश—'हाँ आती ही होगी। क्या सेवा करूँ तुम्हारी ?"

मोहन—"सेवा क्या ? आपने दर्शन दे दिया यही क्या कम सेवा है?"

गिरीश ने हँसते हुए कहा, "दर्शन तो आपही ने दिये।" गिरीश उठा, और ताख से कुछ पैसे उठाये और बोला। "भाई, दो मिनट मे हाज़िर हुआ।"

मोहन—'नही-नही, मेरे लिए कोई चीज लाने की जरूरत नही।"

गिरीश ने मुस्कराकर कहा, 'मै आपके लिए तो ला नही रहा हूँ। मेरे लिए भी बन्द करना चाहते हो तो कोई बात नही।"

मोहन गिरीश की चतुराईपूर्ण बातो के सामने कुछ न बोल सका। गिरीश तुरन्त पाव भर पेडा और आध सेर दूध लेकर वापस आगया। मोहन चारो ओर फटी-टूटी चीजे व्यवस्थित देख मन-ही-मन सोच रहा था—बेचारा बडा गरीब है। फिर भी काम सब कायदे से है। आज जो पैसा खर्च कर रहा है वह किसी दूसरे काम मे आता। गिरीश की गरीबी से मोहन का हृदय दबता जा रहा था।

गिरीश ने दोने मे पेडे और गिलास मे दूध रख कर कहा, "अब भोग लगना चाहिए।"

मोहन सकोच से आगे कुछ न कह सका। दोने से चार पेडे निकाल कर अलग रख दिये, फिर खाना शुरू किया। एक घूँट दूध पीने के बाद बोला, "यह आपने बेकार कष्ट किया।"

गिरीश मुस्कराते हुए कहने लगा, "बेकार क्यो ? खाने की वस्तु है, हम लोग खा रहे है। खाद्य-पदार्थ की यही उपयोगिता है। मेरे यहाँ कोई वस्तु नही है, फिर भी यदि मा होती तो शायद कुछ हो भी जाता।"

मोहन—"भाई साहब, सब कुछ तो है। कमी किसी वस्तु की नही है। मिठाई खाने के लिए और दूध पीने के लिए, और क्या चाहिए ?

गिरीश—"मित्रवर, आपके कहने के लिए ऐसा ही है, लेकिन कमी को मैं ही समझ रहा हूँ।"

मोहन—"क्या मुझे समझने का अधिकार नहीं है ?"

गिरीश—"क्यो नही! अपने मित्र की सम्पूर्ण परिस्थिति जानने का आपको अधिकार है। आपके लिए तो कुछ छिपा ही नही है।"

मोहन ने हँसते हुए कहा, "हाँ मै समझता हूँ।"

मोहन ने मिठाई समाप्त कर दूध पिया और जेब से रूमाल निकाल कर हाथ पोंछने लगा।

गिरीश नें कहा, "पानी दू ?"

मोहन—"नही, जब मिठाई के साथ दूध पीनें को मिला, तो पानी की क्या आवश्यकता है ?"

गिरीश—"यह ठीक है, लेकिन पीने के अलावा हाथ धोने के लिए भी तो पानी की आवश्यकता है।"

मोहन—"पेडा खाने में हाथ से लगता ही क्या हे ?"

गिरीश—"लौंग की तो जरूरत पड सकती है ?" मोहन ने कहा, "हाँ-हाँ, शौक से।" गिरीश ने एक पुस्तक पर लौंग रख मोहन के सामने बढ़ायी। दो-तीन लौग लेकर मोहन ने कहा, "गिरीश, मैं तुम्हें अपने वर्षगाठ के उपलक्ष मे आज निमत्रण देने आया हूं।" जेब से लिफाफा निकाल कर निमन्त्रण-पत्र गिरीश के हाथ में दे दिया :

गिरीश ने निमत्रण-पत्र स्वीकार करते हुए कहा, "बधाई है।"

मोहन नमस्ते करके चल दिया। स्कूल से थाडा आगे जाने पर शान्ति आती हुई दिखाई पडी, सामने आने पर शान्ति ने हँसकर पूछा, "मोहन, आज इधर कहाँ गये थे भय्या ?"

मोहन नें जबाव दिया, "ऐसे ही, एक गिरीश नाम का लडका हमारा मित्र इसी मुहल्ले मे रहता है, उसी को निमत्रण-पत्र देने आया था।"

शान्ति ने कहा, "अच्छा।" मोहन आगे बढ गया। शान्ति मन-ही-मन सोचती रही—इस मुहल्ले मे गिरीश नाम का लडका, शायद और कोई नही है। क्या मेरे गिरीश के ही साथ मोहन की मित्रता है ? नही मुझ अभागिनी के लडके के साथ कौन मित्रता करेगा ? लगी रोजी आज से छूट गई, भगवान् गिरीश को इतने बडे आदमी का कैसे मित्र बनायेगे ?

मोहन के निमत्रण से गिरीश खूब प्रसन्न हो रहा था, और बार-बार अपनी माँ से बतलानें के लिए उत्सुक था। शान्ति के पहुँचते ही गिरीश ने दौड़कर मोहन का दिया हुआ निमत्रण-पत्र दिखलाया और सब हाल

बतलाया। कहने लगा—"मोहन अभी-अभी गया था, शायद तुम्हे रास्ते मे मिला भी हो। किन्तु तुम क्या जानो उसे?" शान्ति गिरीश की बाते सुनकर प्रसन्न हो रही थी। रायसाहब के ही लडके की वर्षगाठ का निमत्रण-पत्र था। शान्ति सोच रही थी, दस रुपये महीना गिरीश को रायसाहब की ओर से ही मिल रहे है। बडे ही उदार है। शान्ति ने कहा, "गिरीश, मोहन मुझे रास्ते मे मिला था। उसने भी बतलाया कि वह निमत्रण-पत्र देने आया था।

गिरीश ने कहा, "मा, तुम मोहन को कैसे जानती हो?"

शान्ति, "मै ऐसे ही जानती हूँ। रायसाहब की कोठी ठठेरी बाजार में है, और वही मै भी काम करने जाती हूँ। इसलिए मोहन को जानती हूँ।"

गिरीश पुलकित हो अपनी माँ से बाते करता रहा, और शान्ति भविष्य मे जीविका के लिए चिता करती हुई गिरीश की आनन्द-कहानी सुन रही थी।

: ३७ :

कीर्तिसिह चरखा-सघ के मजदूरो को मजदूरी दे रहा था। सघ के अतर्गत हाथ की कताई, बुनाई और बढईगीरी आदि का काम होता था। गरीब बच्चे जो स्कूलो मे नही पढ पाते थे, उन्हे कीर्तिसिह स्थान देकर शिक्षा को आर्थिक सहायता भी देता था। उनसे तैयार की हुई वस्तु बडे शहरो मे भेजकर समुचित लाभ उठाता था। बडे-बडे नेताओ द्वारा कीर्तिसिंह के कार्य की प्रशसा होती थी। वह अपने जीवन मे कभी असफल नही हुआ था, उसे अपने कर्तव्य पर दृढ विश्वास था।

चरखा-सघ, भवन के बगल से सडक निकाली थी। मकान अभी कच्चा ही था, लेकिन नये ढग से हवादार बना था। खिडकियो की कमी न थी। देखने से आभास होता था कि कोई राष्ट्रीय सस्था है। तिरगा झंडा फहराता रहता था, साथ ही बडे-बडे नागरी के अक्षरो मे 'चरखा-संघ बलरामपुर' लिखा था।

सामने मोटर रुकी और श्याम तथा दीवान साहब फाटक के अन्दर घुसे। तरह-तरह के रग-विरगे फूलो की आभा प्रकृति को चुनौती दे रही थी, दृश्य बडा मनोहर था। एक चौकी पर कुछ काग़ज पत्रो के साथ एक लाल थैली मे रेजगी और दो-तीन नोटो के बण्डल लेकर कीर्तिसिह बैठा एक-एक का नाम लेकर पुकारता और महीने भर के परिश्रम का म-न दे रहा था। रजिस्टर का पन्ना खोलकर कीर्तिसिह ने आवाज दी, "श्यामलाल।"

श्याम था छोटा, लेकिन प्रकृति से बहुत चचल। बोल उठा, "हाजिर हूँ सरकार।"

महसा नवीन आवाज आने पर कीर्तिसिह ने हकपका कर सामने देखा, मुस्कराते हुए दीवान साहब और श्याम खडे थे। तुरन्त चौकी से उतरकर कीर्तिसिह ने दीवान साहब को सलाम किया। और श्याम को गोद मे उठा लिया। उसे श्याम से मिलने पर बडा आनन्द हुआ। दीवानसाहब सामने कुर्सी पर विराज गये और कीर्तिसिंह श्याम को गोदी में लिए चौकी पर बैठ गया।

कीर्तिसिंह की आत्मा गरीबो की करुण दशा बरदास्त नही कर सकती थी। उसने गरीबी को मिटाने के लिए ही चरखा-संघ की स्थापना की थी और भगवान् की कृपा से बीस-पच्चीस गरीबो का पालन-पोषण भी होता था। ठाकुर साहब के यहाँ का काम छोडने का उसे क्षोभ न था, किन्तु श्याम से अलग होने के लिए उसका हृदय गवाही नही देता था। वे यह भी जानते थे कि प्रभावती श्याम को अपने से एक क्षण भी अलग न होने देगी। बाध्य होकर कीर्तिसिंह को अलग होना पडा था, फिर भी श्याम कीर्तिसिंह को हृदय से अलग नही समझता था।

खोए हुए पुत्र से मिलनें पर जो सुख पिता को मिलता है उसी सुख का कीर्तिसिंह अनुभव कर रहे थे। उनकी आत्मा स्नेह से पिघल गई और आँखो में प्रेमाश्रु उमड आये। अगल-बगल खडे चरखा-सघ के

काम करने वाले मजदूर कीर्तिसिह की दशा देखकर सोच रहे थे—"यह लडका शायद कीर्तिसिह का ही है, कही खो गया था। पाने पर यह बुड्ढा पहुँचाने आया है।

कीर्तिसिह ने कहा, "दीवानसाहब, आज आपने बडी कृपा की। साथ ही श्याम को भी साथ लाये मै बहुत ही आभारी हूँ आपका, श्याम तुमने तो हमे भुला ही दिया था।

श्याम नें कहा, "आप अब कोठी मे आते ही नही है।"

दीवान साहब ने कहा "आज श्याम आपको बुलाने के लिए आया है।"

कीर्तिसिह दीवान साहब की बाते सुनकर चुप रहे। श्याम के सिर पर हाथ फेर रहे थे। एक कर्मचारी एक बाल्टी पानी ले आया, और हाथ मुँह धुलाये, और फिर कुछ फल भी आये।

कीर्तिसिह बोला, "दीवानसाहब, नाश्ता कर लीजिए," तश्तरी आगे बढाई और श्याम को स्वय खिलाने लगे। श्याम ने कहा, 'आप भी खाइए। मै स्वय खा लूँगा।"

कीर्तिसिह ने मुस्कराकर कहा, "अच्छा" और स्वय भी नाश्ता करने लगे फिर बोले। "अरे ड्राइवर, आओ! आओ! तुम वहाँ क्यों रह गये? ड्राइवर ने भी नाश्ता किया।

दीवान साहब ने कहा, "कीर्तिसिह जी, आपके आश्रम मे एक बात मुझे खास तौर पर देखने को मिल रही है।"

कीर्तिसिह नें कहा, "वह क्या?"

दीवान साहब "मै देख रहा हूँ कि किसी काम के लिए किसी को कहना नही पडता। सब अपने-अपनें काम में बडी सावधानी से लगें है। मै तो बडों के मुँह से सुनता था कि पुष्पक विमान मन के अनुसार चलता था। भगवान् रामचन्द्र जी को कहना नही पडता था। किन्तु मै आज आप के आश्रम में स्वय वही बात देख रहा हूँ।"

कीर्तिसिह ने नम्र शब्दो मे कहा, "सब आप बुजुर्गो की कृपा है । हमारे बापू जी भी तो राम-राज्य की ही कल्पना करते थे। उसकी सफलता के लिए प्रयत्न करना हर भारतीय का कर्तव्य है ।"

दीवान साहब ने कहा, "छ बज रहे है, अब चलना चाहिए।"

कीर्तिसिह ने कहा, "आज कैसे ? कम-से-कम एक दिन तो रुकिए। आज यहा छुट्टी हो चुकी। कल यहाँ के सब कामो का निरीक्षण कीजिए। सायकाल चले जाइएगा।

दीवान साहब ने कहा, 'बहुत अच्छा, लेकिन बहू जी ने कहा था कि साथ मे लेकर आज ही सात बजे तक लौट आना। आप तो जानते ही है, वह एक दिन भी श्याम के बिना नही रह सकती !"

कीर्तिसिह ने कुछ चिंतित होकर कहा, "मै कोठी पर कैसे चल सकता हूँ ? ठाकुर साहब ने मुझे विद्रोही घोषित कर दिया है। और उस दिन आपके सामने काफी विवाद भी हुआ था, इसलिए वहाँ जाना मै उचित नही समझता।"

दीवान साहब—"नही-नही, ससार मे वाद-विवाद होता ही रहता है। टक्कर होना भी स्वाभाविक ही है । आप जैसे विचारवान् पुरुष को कभी ऐसा न सोचना चाहिए।"

कीर्तिसिह—"ठीक कहते है दीवान साहब, लेकिन यदि कोठी पर पहुँचते ही ठाकुर साहब मुझ पर पुन बिगडने लगेगे, तो· · · · ·और मै जमीदारो का विरोधी हूँ ही। ऐसी दशा मे मेरा वहाँ जाना उचित नही है, आप स्वय सोच सकते है।"

दीवान साहब—"नही, कीर्तिसिह जी, अब मुझे यह कहना पडेगा कि आपका यह सोचना बिल्कुल गलत है। ठाकुर साहब के विचारो में अब काफी परिवर्तन हो चुका है। समय-समय पर आपकी चर्चा करते है। अपनी गलती मानते है, इसीलिए तो आज मुझे भेजा है।"

आश्चर्य मे पडकर कीर्तिसिह ने कहा,—"अच्छा, ठाकुर साहब ने आपको भेजा है।"

दीवान साहब – 'जी हा यदि उन्हे भी मना करना होता तो बहू जी के कहने पर भी कर देते। पहले जो बाते हुई हो, मेरे पहुँचने ही आपको बुलाने के लिए आदेश मिला और साथ मे श्याम को भी भेजा गया।"

श्याम के सिर पर हाथ रखते हुए कीर्तिसिह ने कहा, "लेकिन मेरा चलना उचित नही है। बहू जी से निवेदन कर दीजिएगा। मै माफी चाहता हूँ।"

दीवान साहब के बोलने के पहले ही श्याम कीर्तिसिंह की ओर देख कर बोला, "क्या आप हमको छोड देगे ?" श्याम के इस प्रश्न का उत्तर कीर्तिसिह न दे सके। उठाकर उसे हृदय से लगा लिया।

दीवान साहब ने कहा, "कीर्तिसिह जी, अब आपको श्याम की बात माननी ही पडेगी।" कीर्तिसिह को भी स्वीकार करना पडा। श्याम की बात टालने की उनमे सामर्थ्य न थी ? अपने घर, शहर जाने का सदेशा भिजवाकर कीर्तिसिह मोटर पर सवार हो गये।

: ३८ :

प्रातःकाल होते ही गिरीश सोकर उठा और नहा-धोकर सात बजे मे ही मोहन के यहाँ जाने के लिए तैयार हो गया। शान्ति ने कुछ जलपान का प्रबन्ध करें गिरीश से कहा, "बेटे, मैं अपने काम पर जाती हूँ, तुम अपने मित्र के यहाँ समय से हो आना।"

गिरीश ने कहा, "क्यो माँ, जहाँ मैं जाऊँगा, वहा तुम न रहोगी।'

शान्ति—"बेटे, मै अभी कैसे बता सकती हूँ, वहाँ पहुँचने पर जो काम मिलेगा, वही करना होगा।"

गिरीश—"मोहन के यहाँ जाने के लिए एक घंटे की छुट्टी न मिलेगी।"

शान्ति—"वहाँ चलने पर ही पता चल सकता है।"

गिरीश—"अच्छा, तो जाओ, लेकिन एक घटा के लिए मोहन के

यहाँ अवश्य पहुँचना। बेचारा आग्रहपूर्वक बुला गया है। मै दो बजे जाऊँगा, आज स्कूल की छुट्टी है।"

शान्ति गिरीश को घर पर छोडकर चल पडी। श्याम के खो जाने पर कुछ दिन गिरीश को घर पर अकेले रहना अच्छा न लगा था, लेकिन अब रहते-रहते आदी हो गया था। उसे किसी सहायक की आवश्यकता न थी। उसके पडोस की नाइन भी दस बजे अपने काम पर चली जाती थी और सायकाल आठ बजे से पहिले कभी नही लौटती थी। गिरीश के लिए आठ घटे का समय बिताना पहाड होगया। वह मोहन का घर भी नही जानता था। किससे पूछेगा, इसकी भी चिन्ता थी। शान्ति के जाते समय घर का पता पूछने का स्मरण न रहा। गिरीश सोच रहा था—दो घटे पहले चलेगे, रायसाहब इतने प्रसिद्ध है कि मुहल्ले का बच्चा-बच्चा उन्हे जानता होगा। फिर उत्सव का दिन है, बाजा बजता होगा। उसे पहचानने मे देरी न लगेगी। हाँ, यदि कई घरो मे उत्सव होता होगा तो बाजे से पता चलना कठिन हो जायगा। लेकिन आजकल तो शादी व्याह के दिन है नही, ऐसा नही होगा। दो बजे चलना निश्चित् कर गिरीश अपना समय बिताने लगा।

रायसाहब के यहाँ सुबह से ही शहनाई बज रही थी, दूर-दूर से अतिथि आकर विश्राम-गृह में उपस्थित होते जाते थे। अलग-अलग सबके ठहरने का इन्तजाम था। गाँव के आये हुए किसान सब से अलग समीप ही धर्मशाला मे ठहरे थे और दूसरी जगह रिश्तेदार रईस। समय से नाश्ते का प्रबन्ध हो चुका था, भोजन चार बजे पगत मे सबका साथ होना था। पुरोहित जी पूजन कराने का प्रबन्ध बहुत देर पहले कर चुके थे। उन्होंने रायसाहब को बुलाया और पूजन करने के लिए कहा। रायसाहब कपडे बदलकर पुजारी के वेश मे पद्मासन लगाकर बैठ गये। पूजन आरम्भ हुआ। कही औरतो के गीत, कही शहनाई, और कहीं वेद-मन्त्रो के उच्चारण से आकाश गूज उठा था।

मोहन पिता के समीप बैठा गिरीश के लिए सोच रहा था—अब

तीन बज चुके हैं और वह आया नही। कल मैने कहा भी था कि दो बजे के लगभग आ जाना, पर न जाने क्यो नही आया। पूजन बिना हुए उठ भी नही सकता था। मोहन के टीका लगा, आशीर्वाद मिला और पूजन समाप्त हुआ।

मोहन तुरन्त बाहर आया, उसके सभी मित्र मोज से बैठे थे, किन्तु गिरीश न आया था। मोहन सोचने लगा—'कल मेरे जाने पर गिरीश ने कुछ पैसे खर्च कर दिये थे, कही उसकी माँ नाराज न हुई हो और आने से मना कर दिया हो।' निश्चित् कर गिरीश को बुलाने के लिए चल दिया। रायसाहव ने मोहन को बाहर जाते देखा तो रोक दिया। मोहन ने बतलाया, 'मेरा साथी गिरीश अब तक नही आया, उसीको बुलाने जा रहा हूँ।"

रायसाहव ने कहा, "घबराने की कोई बात नही है, वह आता ही होगा। सामने सफेद कुर्ता, धोती पहने आता हुआ एक लडका दिखाई दिया। रायसाहब ने इशारा किया. "देखो, यह लडका तो नही है।"

मोहन गिरीश को देखते ही प्रसन्न हो गया और बोला, "भाई, इतनी देर क्यो होगई, मै सोचता था कि कही माँ नाराज़ तो नही होगई।"

गिरीश ने हँसते हुए कहा—"नही-नही, मा नाराज नही हुई। वह प्रसन्न थी। सम्भवत रास्ते में तुम्हे मिली भी थी और इसी तुम्हारे मुहल्ले मे काम भी करती है। चार बजे आने को कहा है।"

× × × ×

कमला को शान्ति के चरित्र पर सदेह था, वह इसका निर्णय करना चाहती थी। शान्ति के मुहल्ले मे कमला के परिचय के अधिक लोग थे। वर्षगाठ मे सम्मिलित हो वधाइया देने बहुत-सी स्त्रियाँ आई थी। समय निकालकर कमला ने शान्ति के चरित्र के सम्बन्ध में पूछा भी, लेकिन किसी ने एक शब्द भी सदेहजनक न बताया। कमला को विश्वास हो गया कि शान्ति अच्छी औरत है, चरित्रहीन नही है। मैने उसे निकालने के लिए कहा है यह अनुचित किया है, लेकिन अब तो जो होना था सो हो

गया। वह अपनी सहेलियो से मोहन के चिरजीवी होने की बधाइयाँ स्वीकार करती हुई आनन्दित होरही थी।

× × × ×

पगत बैठ गई। रायसाहब परोसने के इन्तजाम मे थे। हजारो आदमी एक साथ बैठे थे। आमने-सामने, ऊपर छत पर सभी जगह आदमी ठसाठस भरे थे। ब्राह्मणो ने भोजन करना आरम्भ कर दिया। कही से मिष्टान्न, कही से पूडी, रायता, साग आदि चीजो के लिए पुकारे हो रही थी। परोसनवाले दौड-दौड कर चीजे दे रहे थे। रायसाहब गुलाब-जामुन परोस रहे थे, किन्तु दूसरे परोसनेवालो से इनकी गति धीमी थी। ब्राह्मण, रईस तथा रिश्तेदार सभी आनन्द मे भोजन कर रहे थे।

मोहन ने गिरीश को अपने कक्ष मे लेजाकर बैठाया। बद्री नौकर सभी वस्तुएँ एक-एक करके रख गया। मोहन ने कहा, "मेरी समझ मे अब भोजन शुरू करना चाहिए।"

गिरीश ने मुस्कराते हुए कहा, "हाँ-हाँ, देरी किस बात की है। दोनो ने पहले मिठाइयो से ही भोजन आरम्भ किया। बद्री बीच-बीच मे सभी चीजे ला-लाकर देता जाता था। मोहन ने कहा, "गिरीश, तुम्हारी माँ अभी नही आई!"

गिरीश--वह तो सुबह से ही निकली है। मैने चार बजे अवश्य आने के लिए कहा था और उन्होने स्वीकार भी किया था, शायद आई भी हो, औरतो मे बैठी हो कही।"

मोहन—"नही, आती तो पता अवश्य चलता। देखो, अभी पता लगाता हूँ। वह शान्ति से गिरीश की माँ का पता लगवाना चाहता था। अत. उसे आवाज दी, "महाराजिन, जरा यहाँ आना।"

शान्ति बैठी सोच रही थी—"क्या गिरीश अब तक नही आया· नही, आकर चला गया होगा। मोहन की आवाज पर बोली, "आ रही हूँ।"

गिरीश अपनी माँ की आवाज पहचान कर हकबकाया। इधर-उधर

देखने लगा। शान्ति कक्ष मे प्रवेश करते ही मोहन और गिरीश को एक साथ बैठे देखकर गद-गद होगई। मोहन के कुछ बोलने के पहले ही गिरीश ने कहा, "माँ तुम आगई।"

मोहन गिरीश को मा कहते सुनकर सन्न रह गया। फिर गिरीश की ओर देखकर बोला, "यह तुम्हारी माँ है।"

गिरीश ने उत्तर दिया, "जी हाँ, यही मेरी माँ है।"

मोहन दौडकर शान्ति से लिपट गया और बोला, "तुमने अब तक क्यो नही बताया" मेरी महराजिन!

× × × ×

रायसाहब ब्राह्मणो को भोजन के बाद पान के साथ एक-एक रुपया दक्षिणा दे रहे थे। सबको देने के बाद उन्हे याद आगई कि मोहन के मित्र गिरीश को अभी दक्षिणा नही मिली है। वह देने के लिए अन्दर चल दिए। कमला भी मोहन के मित्र को देखने जा रही थी, उसे बडी उत्सुकता थी। रायसाहब ने कहा, "गिरीश ने मोहन के लिए मित्र का नही, बल्कि उपदेशक का काम किया है। सभी अध्यापक पढाकर हार गये, लेकिन उसके सत्सग से ही मोहन की जिन्दगी सुधर गई।" कमला को कुछ कहने का अवसर न मिल पाया और मोहन के पास पहुँच गई। मोहन, गिरीश और शान्ति आपस मे बाते कर रहे थे।

रायसाहब को कक्ष मे प्रवेश करते देख मोहन ने कहा, "बाबू जी, हमारे मित्र गिरीश यही है। शान्ति की ओर इशारा करके बोला और हमारी महाराजिन इन्ही की माँ है।" गिरीश ने मुस्कराते हुए नमस्ते की।

रायसाहब आशीर्वाद देते हुए आश्चर्य मे पड़कर बोले, "ये महाराजिन गिरीश की माँ है!"

मोहन—"हाँ, बाबू जी, मुझे भी अभी मालूम हुआ है।"

रायसाहब – "महाराजिन, अब तक तुमने क्यो नही बताया?"

शान्ति के बोलने से पहले कमला ने कहा, "इसने कभी बताया

नही, कल मैंने काम के लिए भी मना कर दिया इसे।" शान्ति के पैरो पडती हुई बोली, "क्षमा करना बहन! मैंने तुम्हारे साथ बडी धृष्ठता की है। तुम-जैसी कार्य-कुशल, सुशील शायद ही और कोई महिला मिले। तुम्हारे गिरीश ने मोहन को अच्छे रास्ते पर ला दिया है, यही तुम्हारा उपकार सब से बडा है। मै तुम्हारे ऋण से उऋण नही हो सकती। आशा है, मेरे अपराधो को क्षमा कर, मेरे यहा का आना-जाना न छोडोगी।"

शान्ति ने हसकर कहा, "बहू जी, आपकी सहायता मुझे न मिली होती तो न जाने कहाँ-कहाँ भटकती। आप ही एक आधार है। आपको छोड मै जा ही कहा सकती हूँ। शरण मे आई हूँ, जीवन भर रहूँगी, गिरीश आपका है। उससे जो हो सकता है वह उसके कर्तव्य का पालन है। कल जाते समय मोहन मुझे मुहल्ले मे मिले थे और उनके बताने से निश्चित् हो गया था कि यही मोहन गिरीश के मित्र है। गिरीश अपने मित्र की कभी-कभी चर्चा करता था, परन्तु नाम कभी नही बताया, बल्कि एक-दो बार मैंने पूछा भी था। गिरीश ने यह कहकर टाल दिया कि स्कूल के लडको के नाम से तुम्हे क्या मतलब। मै चुप रह गई। मुझे बडी प्रसन्नता है, और भगवान् से प्रार्थना है कि कृष्ण-सुदामा जैसी मित्रता गिरीश मोहन की अमिट हो।"

रायसाहब ने शान्ति की वाक्पटुता पर आश्चर्य कर कमला की ओर देखा। कमला ने मन्द मुस्कान मे समर्थन किया और फिर एक-दूसरे की ओर देखते रहे।

: ३६ :

प्रभावती सोच रही थी, दीवान साहब, कीर्तिसिंह को बुलाने गये है, कही जवाब न दे दे क्योकि कीर्तिसिंह का स्वभाव बडा अक्खड है। वह अपनी हठ पर अटल रहता है, स्वाभिमानी आदमी किसी की परवाह नही करता। वह ठाकुर साहब से बोली, "ठाकुर साहब! देखिए, कीर्तिसिंह के आने

पर फिर किन्ही अशिष्ट शब्दो का प्रयोग न कीजिएगा। ससार में अपना कार्य साधना ही चतुरता है। यदि कोई व्यक्ति अपनी बुद्धि के प्रमाद मे अपना अहित कर बैठता है, तो वह अपना जीवन कभी सुखी नही बना सकता। बुद्धिमत्ता तो यही है कि "अपना कार्य हर दशा मे सफल करले। दूसरे भले ही नाराज़ हो, पर समय पडने पर काम कराले।"

ठाकुर साहब ने गहरी साँस लेते हुए कहा, "इतना मै भी समझता हूँ, लेकिन परिस्थिति लाचार कर देती है। जब मनुष्य कार्य-व्यस्त रहता है और उससे चारो ओर से लोग असहयोग करने लगते है तो वह झुँझलाकर कुछ अनुचित बाते भी कह देता है, यह स्वाभाविक ही है। इसे ही यदि लोग बुरा समझ कर उससे अलग हो जाय तो किसकी गलती है कीर्तिसिह की बुद्धिमानी तो मै तभी मानता, जब वह मेरी गलती पर भी खामोश हो उचित पथ का निर्देश करता। किन्तु वह तो मेरी एक गलती पर स्वय दो गलती कर बैठा।"

प्रभावती ने कहा, "नही, ठाकुर साहब, उसने गलती नही की। जब मानव के चित्त मे भ्रम पैदा हो जाता है तो उसे अच्छी बातो पर भी बुरा सदेह होने लगता है। यही कीर्तिसिह प्रसन्नता के समय मे न जाने कितनी बाते कहता रहा होगा, लेकिन कोई ध्यान नही दिया गया। और जाते समय एक-दो शब्द कह दिये तो अब तक वह नही भूले। किसी के प्रति दूषित भावना कर लेना ही बुराई पैदा कर देना है।'

कोठी मे मोटर रुकने की आवाज सुनाई पडी। प्रभावती तुरन्त बैठक से निकल कर दालान मे आई और सामने देखा—कीर्तिसिह बिलकुल नेता के वेश मे—धोती, कुर्ता तथा गान्धी टोपी पहने श्याम का हाथ पकडे आ रहे है। साथ ही पीछे दीवान साहब भी एक डोलची मे कुछ लिए आ रहे है। प्रभावती ने पुलकित हो, ठाकुर साहब को बतलाया कि कीर्तिसिह जी आ गये।

कुछ आश्चर्य में पडकर ठाकुर साहब ने कहा, "कीर्तिसिह आगये !"

कीर्तिसिह बैठक के द्वार के सामने पहुँच चुके थे। प्रभावती दुबारा न कह पाई थी, कि स्वय कीर्तिसिह ने कहा, "जी, हाँ मै आगया।"

एकाएक कीर्तिसिह का उत्तर सुनकर ठाकुर साहब कुछ सहमे, और फिर हँसते हुए बोले, "आइए कीर्तिसिह जी, आपने तो हमें बिलकुल ही भुला दिया।"

कीर्तिसिह—'नही, ठाकुर साहब हमने नही, बल्कि आपनेही मुझे अलग कर दिया था। आदेश पाने पर पुन हाज़िर हुआ हूँ।"

ठाकुर साहब अपनी गलती पर मौन हो गये। प्रभावती ने कहा, "ठीक है, लेकिन यदि किसी से गलती हो जाय तो सुधार करना भी तो कर्तव्य होता है।

कीर्तिसिह—"हाँ होता है, लेकिन यदि गलती करनेवाला व्यक्ति स्वय अपनी गलती स्वीकार करे तब।"

प्रभावती—"मै इस बात को मानती हूँ, इसीलिए तो श्याम को दीवान साहब के साथ भेजा था।" श्याम कीर्तिसिह की तरफ इशारा करके बोला "माँ दीवानसाहब के कहने पर भी आप नही आते थे, फिर जब मैंने कहा तब चले।" प्रभावती ने श्याम को गोद उठाते हुए कहा, "तुम्हारी बात तो मान गए न !" सरदार कीर्तिसिह श्याम के विवेक पर गौर कर रहे थे।

ठाकुर साहब ने पूछा, "कीर्तिसिह जी, आजकल कौन सा काम होता है।"

कीर्तिसिह—"यही, जो कुछ बन पडता है, राष्ट्र की सेवा करता हूँ।"

ठाकुर साहब—"आपके चले जाने के बाद मेरे यहाँ अशान्ति का ही वातावरण रहा। उस दिन कुछ आपने गलती की और कुछ मैंने भी, लेकिन अच्छा हुआ उस गलती का प्रायश्चित हो गया।"

कीर्तिसिह—"उस दिन मुझ से कोई गलती नही हुई थी, मुझे अपराधी मानना अब भी आपके गलत विचारो का ही परिणाम

है। मैंने उस दिन भी कहा था और आज भी कहता हूँ देश के अहित के लिए जो भी कार्य होगा उसका मै विरोध करूँगा।

प्रभावती ने कहा—सरदार कीर्तिसिह जो ! आप जो कह रहे है, मै भी उसे उचित ही समझती हूँ। आज आपका सहयोग हमारे लिए जरूरी है। मै चाहती हूँ, आप पुन मेरी जमीदारी का कार्य अपने हाथो मे लेले, और आधुनिक ढग पर जैसा उचित समझे।

कीर्तिसिह ने कहा—बहू जी, अभी आवेश मे आकर सबकह जारही है, लेकिन समय आने पर अपने आप स्वार्थो को तिलाजलि देकर देश की सेवा करना कठिन होता है।

प्रभावती—इसीलिए तो आपका सहयोग चाहती हूँ। यदि कठिन कार्य न होता तो मै स्वय कर लेती। आपको कष्ट ही न करना पडता है।

कीर्तिसिह—"लेकिन अब मै आपके यहाँ सरदार होकर नही रह सकता। जन-सेवक की हैसियत से आपकी सेवा करने के लिए तैयार हूँ।"

प्रभावती—"बडी कृपा है आपकी। इसी आशा से मैंने आपको कष्ट दिया था।"

ठाकुर साहब ने कहा, "बातें भर होती रहेगी कि कुछ जलपान का भी प्रबन्ध होगा।"

प्रभावती ने कहा—"अभी सब कुछ हुआ जाता है। बहुत दिन मे आये है, पहले बाते तो कर लूँ। प्रभावती ने सुग्गी को आवाज़ दी, और वह हाजिर हुई। कीर्तिसिह को देखकर सलाम करते हुए कहा, "सरकार अपना बहुत दिन मे देखानेन है। हमार पचेन कै सुधि ही बिसराइ दीन।"

कीर्तिसिह ने कहा, "नही-नही, सुग्गी, तुम लोगो को भूल गये होते तो आते ही क्यो ?"

सुग्गी ने कहा, "बडी किरपा कीन जान आए कै दरसन दीन।"

प्रभावती ने कहा, "सुग्गी सरदार साहब को कुछ शर्बत वगैरह भी दोगी या कोरी बातें होती रहेंगी ?"

सुग्गी ने कहा, "अबहिन लइअइत दुलहिन।" वह अंदर गई और चार गिलाश केवडे का शर्बत बनाकर लेआई, और कीर्तिसिह, ठाकुर साहब आदि उपस्थित महानुभावो को दिया। शर्बत पीते हुए सब आनन्द की बाते कर रहे थे, बीच-बीच में श्याम की भोली बातें विदूषक का काम कर जाती थी।

: ४० :

गिरीश अपने मित्र मोहन के साथ उचित रीति से पढता हुआ हाई-स्कूल की परीक्षा मे प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण कर काशी हिन्दू-विश्व-विद्यालय मे विज्ञान का अध्ययन करने लगा था। गिरीश और मोहन साथ-साथ पढने जाते थे।

श्याम भी इसी वर्ष मैट्रिक मे प्रथम श्रेणी मे पास हुआ और उसके यूनिवर्सिटी मे दाखले का काम ठाकुरसाहब ने सरदार कीर्तिसिह के सुपुर्द किया।

श्याम सुबह से ही विश्वविद्यालय जाने की उत्सुकता मे था। जल्दी-जल्दी सभी कामो से निवृत्त होकर सात बजे ही तैयार हो गया। परन्तु सरदार कीर्तिसिंह नही आये। प्रभावती ने आकर "कहा, आओ श्याम टीका लगा दूँ।" श्याम माँ के समीप आया, टीका लगवा कर प्रणाम किया और चलने के लिए निकलकर बैठक मे आया।

कीर्तिसिह कुछ पहले ही पहुँच चुके थे किन्तु पुकारना उचित न समझ कर श्याम की प्रतीक्षा मे बैठ गये। ठाकुर साहब भी उस समय उपस्थित न थे। शीघ्र जाकर भरती कराने क सोच रहे थे। श्याम को देखते ही कीर्तिसिह ने कहा, "चले ?"

श्याम—"जी।"

कीर्तिसिह के साथ श्याम भी सीढी से उतरकर मोटर में बैठ गया और कीर्तिसिह स्वय मोटर चलाते हुए मिनटो मे ही विश्वविद्यालय पहुँच गये। देशान्तर के आए हुए छात्रो की भीड इकट्ठी थी। प्रवेश

न मिलने की आशा से नगर के बडे-बडे आदमी सिफारिश करने के लिए गए थे। मोटरो की कतार दूर तक फैली थी। मोटर से कीर्तिसिह तथा श्याम दोनो उतर पडे और वाइसचांसलर के कार्यालय मे उपस्थित होकर कीर्तिसिह ने अपना परिचय कार्ड भेजा।

वाइसचासलर महोदय लडको के प्रवेशपत्र पर हस्ताक्षर कर रहे थे। चपरासी ने वह परिचय पत्र सामने रख दिया। उन्होने देखा और कहा, "बुलाओ।"

चपरासी के सकेत पर कीर्तिसिह ने श्याम के साथ कक्ष मे उपस्थित होकर नमस्ते किया।

वाइसचासलर—"नमस्ते, आइए सरदार कीर्तिसिह जी।" उठते हुए कुर्सी की ओर इशारा करके कहा, 'पधारिए! कीर्तिसिह जी।" वह बैठ गये और साथ ही बगल मे श्याम भी। वाइसचासलर महोदय ने पान का डिब्बा सामने करते हुए कहा—"आज आपने कैसे कष्ट किया।"

कीर्तिसिह (श्याम की ओर सकेत करके बोले) "ठाकुर सग्रामसिह जी ने श्याम दाखिल कराने के लिए मेरे साथ भेजा है।

वाइसचासलर—"अच्छा, यह उनके लडके है?"

कीर्तिसिह—"नही, उनके तो कोई लडका है ही नही, किन्तु इन्हे लडके से भी अधिक मानते है।"

वाइसचासलर—"किस क्लास मे भरती होगे?"

कीर्तिसिह—"इन्टर मे।"

वाइसचासलर—"अच्छा!" इन्हे चपरासी के साथ भेज दीजिए फार्म भर दे।"

वाइसचासलर महोदय के आदेशानुसार कीर्तिसिह ने श्याम को चपरासी के साथ भेज दिया। वह फार्म भर कर कुछ ही मिनटो बाद वापस आया। कीर्तिसिह ने पूछा, "हो गया।"

श्यामने उत्तर दिया, "हाँ हो गया।"

कीर्तिसिह ने वाइसचासलर महोदय से कहा, "अब मुझे आज्ञा हो

तो चलू ?"

वाइसचान्सलर—"मेरे योग्य और कोई काम !"

"आपकी कृपा" कहकर कीर्तिसिह तथा श्याम आफिस से बाहर निकले। बहुत से लडके विविध वेश-भूषा, रूप-रग आदि देखते हुए घूम रहे थे। सामने से गिरीश ने आते हुए श्याम को देखातो उसे एकाएक श्याम की याद आई। वह सोचने लगा—यदि आज मेरा श्याम होता तो वह भी इतना ही बडा हो जाता, पर यह बिलकुल श्याम की ही तरह मालूम होता है। एक-दो बार पूछने को भी सोचा पर साहस न कर सका। एक अपरिचित व्यक्ति से अकारण कुछ पूछना जरा अनुचित है।

श्याम ने भी गिरीश को देखा। उसे भी अनुभव हुआ कि मैंने इन्हे कही देखा है, पर स्पष्ट न कह सका।

गिरीश बार-बार श्याम से परिचय प्राप्त करने के लिए सोच रहा था। मोहन ने कहा, "चलो अब घर चलने का समय हो गया है।"

गिरीश ने कहा—"जरा दस मिनट ठहरो फिर, चलता हूँ।"

मोहन —"अच्छा, लो भाई रुकता हूँ।"

गिरीश ने श्माम की ओर सकेत कर धीरे से कहा, 'मोहन, यह लडका मेरे भाई जैसा मालूम होता है।"

मोहन —"अच्छा तो मै अभी पूछे लेंता हूँ।"

मोहन आगे बढ कर श्याम के पास पहुँचा और बोला—क्यो भाई साहब, आप कहाँ से पधारे है।

श्याम ने मोहन की ओर देखते हुए कहा—"मै तो गोवर्धन सराय मे रहता हूँ।"

श्याम की आवाज निकलते ही गिरीश पहचान गया, और श्याम की ओर बढता हुआ बोला, "श्याम, तुम मुझे पहचानते हो ?"

श्याम का भी ध्यान गिरीश की ओर आकर्षित हुआ। वह बोला भैया गिरीश! दोनो आपस मे मिल गये।"

कीर्तिसिंह गिरीश और श्याम के मिलन को देखकर सोच रहे थे—ये दोनों भाई-भाई हैं क्या ? किन्तु श्याम के तो माँ-बाप भाई-बहन किसी का कोई पता ही न था। वस्तु-स्थिति सरदार कीर्तिसिंह जानना चाहते थे किन्तु श्याम स्वतः बताने लगा—"गिरीश जी मेरे बड़े भाई हैं।"

कीर्तिसिंह श्याम के भाई भी हैं यह जान कर अतिप्रसन्न हुए और बोले 'भगवान ने बड़ी कृपा की। आज आप लोगों के दर्शन हुए। अचानक ठाकुर संग्रामसिंह के यहाँ श्याम पहुँच गया था। उनकी पत्नी बड़ी ही सुशील हैं, उन्होंने अपने पुत्र की तरह पाल पोषकर इन्हें बड़ा किया है। जिसके फलस्वरूप आज श्याम आप लोगों से मिलने के लिए उपस्थित है।"

श्याम बार-बार गिरीश से माँ को पूछता रहा और स्वयं गिरीश की कुशलता पूछते हुए फूला न समाया।

कीर्तिसिंह ने कहा—"गिरीश जी, चलिए अब कोठी पर पहुँचकर आनन्द से बातें होंगी।" सब चल दिये तैयार हो गए।

मोहन और गिरीश अपनी मोटर में बैठते हुए बोले "सायकाल हम लोग स्वयं आयेंगे।"

श्याम—'भैया मेरे यहां होकर जाओ।"

गिरीश—"सायकाल हम सब आयेंगे।"

घर्र घर्र मोटर की आवाजें हुईं। गिरीश पुलकित हो माँ से सब समाचार बतलाने के लिए आनन्दित होता हुआ अपने घर के लिए चल दिया।

: ४१ :

श्याम के लौटने का समय हो गया था, प्रभावती प्रतीक्षा में बैठी सोच रही थी—आज से श्याम विश्वविद्यालय का छात्र हो गया। भगवान् चिरजीव रखेगा तो एक दिन बहुत बड़ा आदमी होगा। उसके मा-बाप बेचारे सोचते होंगे कि श्याम संसार में नहीं रहा, नहीं तो अब तक कहीं-न-

कही अवश्य पता चल जाता। हताश हो कर्म को दोषी ठहराते होंगे, किन्तु भगवान् की कृपा से श्याम क्रमश उन्नति करता जा रहा था।

× × × ×

श्याम गिरीश से अलग होकर तुरत कोठी पर पहुँचकर अपनी माँ से भाई गिरीश के सम्बन्ध की बाते बतलाने की कल्पना में पुलकित हो रहा था। उसे अपने बालकाल के कुछ सस्मरण अवश्य थे किन्तु उन्हे विकसित होने का अवसर न मिल सका था। आज अचानक गिरीश भैया से भेंट हुई और माँ-बाप का पता चला। अब मै भी अपने पिता का नाम बता सकूगा।

मोटर क्षणभर मे कोठी पर जाकर रुकी। श्याम मोटर से उतर कर बैठक मे होता हुआ अन्दर गया। ठाकुर साहब बैठक मे उपस्थित न थे। वह भोजन करने के लए अन्दर जा चुके थे और श्याम की प्रतीक्षा मे प्रभावती से बाते कर रहे थे।

श्याम को देखते ही प्रभावती उठी और खाना देना चाहती थी कि श्याम ने कहना शुरू किया, "माँ आज मेरा भाई गिरीश मिला था और उसने बतलाया कि मेरी माँ जीवित है।" आगे कुछ न बोल पाया। प्रभावती का हृदय अधीर हो उठा। वह कहने लगी, "सच तुम्हारे भाई से भेंट हुई थी, उसे यहाँ क्यो नही लिवा लाये।"

श्याम ने कहा, "हमने उनसे कहा और सरदार कीर्तिसिह जी ने भी कहा, पर उन्होने शाम को आने के लिए कहा है। रायबहादुर भोलानाथ के यहाँ रहते है।"

ठाकुर साहब ने कहा, "रायसाहब के यहा रहते है। वह तो हमारे बहुत मित्र है।"

प्रभावती—"शाम को हमी लोग चल कर मिल आयेगे। वहाँ भैया से भी भेंट होगी और तुम्हारी माँ से भी।"

श्याम दूसरी मा के प्रति प्रभावती की उदार सेवा से कुछ सकुचित होकर सोच रहा था—कही प्रभावती को बुरा न लगे, लेकिन श्याम

के भाई तथा माँ बाप का पता लगने से प्रभावती एव ठाकुर साहब को बेहद खुशी थी। वे जल्दी-से-जल्दी श्याम के भाई गिरीश और माँ के दर्शन कर कृतकृत्य होना चाहते थे।

ग्रीष्मान्त के मध्याह्न कालीन सूर्य के ताप से बाहर निकलने योग्य न था। मिनटो को गिन-गिन कर घटे पूरे किए जाते थे। अन्य दिनो एक नीद मे ही सारी दोपहरी समाप्त हो जाती थी, किन्तु उस दिन की दोपहरी के बीतने मे बहुत समय लगा। सुग्गी प्रभावती से कह रही थी

"दुलहिन, बडी भागि से साम के बडकऊ भइया और महतारी को पता चला है। भगवान् के गति नही कही जाइ सकति। छिन भरे म सब काम होइ सकत है।"

प्रभावती ने कहा, "ठीक कहती हो सुग्गी। अब चार बज गये है। चलो, तैयार हो जाओ, रायसाहब के यहाँ चलना है।"

ड्राइवर मोटर लेकर तैयार था ठाकुर साहब, प्रभावती श्याम तथा सुग्गी मोटर पर सवार होकर चल दिये।

× × × ×

गिरीश और मोहन दोनो ने घर पहुँचते ही श्याम के मिलने का समाचार माँ को बतलाया। सुनकर शान्ति गदगद होगई। रायसाहब ने कहा, "तुम्हारा लडका गायब हो गया था और तुमने मुझ से कभी चर्चा भी नही की।"

शान्ति ने नम्र शब्दों मे कहा, "हाँ, मैंने आप को नही बताया था परन्तु बहू जी को बतला दिया था।"

रायसाहब—"यदि मुझे मालूम होता तो श्याम कभी का मिल गया होता।"

कमला ने कहा—"हाँ जिस दिन यह आई थी उसी दिन बतलाया था कि बच्चा खो जाने के कारण आने मे देर हुई।"

रायसाहब ने कहा, "गिरीश, श्याम कहाँ पर रहता है।"

गिरीश —"गोबर्धनसराय में ठाकुर सग्रामसिह के यहाँ रहता है।"

रायसाहब—"अच्छा, वे तो मेरे दोस्त है, कभी-कभी यहाँ आते ही रहते है। दुनियाँ मे सभी चीजें भरी पडी है पर मिलती सब भाग्य से ही है। दोपहरी समाप्त कर ठाकुर साहब के यहाँ सब चलेंगे।"

शान्ति सोच रही थी—जो ठाकुर सग्रामसिंह इज्जत बिगाडने पर तुला था, उसे यदि मालूम हो जाय तो कही अनर्थ न कर बैठे। और उसकी इतनी कठोर आत्मा श्याम के प्रति कैसे पिघली। नही, उसने नही, बल्कि उसकी पत्नी ने पालन-पोषण किया होगा।

ठाकुर साहब के यहाँ चलने का समय हो गया। रायसाहब मोटर पर बैठ गये। शान्ति, गिरीश, कमला और मोहन सभी थे। मोटर-सचालन कार्य मोहन ही करने वाला था। जल्दी-जल्दी मे अपनी घडी वही भूल गया वह। उसे लेने के लिए चला कि तब तक ठाकुर सग्रामसिंह की नई कार सामने आकर रुकगई।

ठाकुर साहब, प्रभावती, श्याम आदि उतर कर रायसाहब के यहाँ बरामदे मे आकर खडे हो गये।

रायसाहब ने देख कर कहा, 'अरे ठाकुर साहब तो यही आगये। मोटर से उतरकर ठाकुर साहब की ओर बढते हुए कहा, "हम लोग तो आपही के यहाँ आ रहे थे।"

ठाकुर साहब—"मै स्वय सपरिवार हाजिर हूँ। ठाकुर साहब सब के साथ बैठक मे पधारे।

बैठक मे पहुँचते ही श्याम ने अपनी माँ को देखकर तुरत पैर छूकर प्रणाम किया। शान्ति ने श्याम को कलेजे से लगा लिया। उसकी आखो मे प्रेमाश्रु छलछला आये।।

ठाकुर साहब ने देखा - कि वह तो वही शान्ति है। वे हकबका कर रह गये।

शान्ति ने प्रभावती से कहा, "बहन, तुमने मेरे साथ बडा उपकार किया। यदि तुमने श्याम की मदद न की होती तो आज यह न जाने कहाँ होता, मै आपकी बहुत ही कृतज्ञ हूँ।"

प्रभावती ने कहा, "आप ठीक कहती है, लेकिन मे समझती हूँ, कि आपने ही मेरा उपकार किया। यदि श्याम को आपने जन्म न दिया होता तो मै अपने कर्तव्य मे कैसे सफल हो सकती थी। आपकी कृपा से ही मुझे सेवा करने का अवसर मिला, यही मेरे लिए बहुत है।"

ठाकुर साहब अपने कलुषित कर्तव्य के भार से दबे जा रहे थे। उन्होने सोचा पापो को छिपाना ठीक नही। उनका प्रायश्चित् करना ही उत्तम है। बोले, "शान्ति, मै अपने अपराधो के लिए क्षमा चाहता हूँ। मैने तुम्हारे साथ बडा दुर्व्यवहार किया है।"

शान्ति ने कहा, "ठाकुर साहब कर्म-फल अनिवार्य होता है। उसे क्षमा करने का अधिकार मानवीय शक्ति से सर्वथा परे है। अत उपकारो से निवृत्ति होने पर पश्चात्ताप करना भी व्यर्थ है। सत्कर्मो के फल स्वरूप ही मानव परोपकार की ओर प्रवृत्त होता है। मनोविकारो के जाल मे पडकर मनुष्य अपने कर्तव्य-कर्म को भूल जाता है और निज कृत-कर्मो का फल भोगने के लिए उसे बाध्य होना पडता है। अत भावुकता और दु:साहस का त्याग ही मनुष्य को कर्तव्य-पथ की ओर अग्रसर करा सकता है," कोरी बिडम्बना कुछ नही कर सकती बस यही है मानव की सफल कर्म-साधना।

आज शांति के अन्दर से उसके पति की आत्मा बोल रही थी। रायसाहब, कमला, ठाकुर साहब और प्रभावती दग रह गये। इन शब्दो को सुनकर शांति एक आदर्श भारतीयनारी की साकार सती साध्वी मूर्ति के समान उनके सामने खड़ी थी, निष्पाप, निश्कलक शांति की सौम्य साधनामयमूर्ति के सम्मुख सभी के मस्तक झुक गये।

मोहन, गिरीश और श्याम वयस्क होने पर भी इस रहस्यमय घटना का सार न समझ सके। वे मौन थे, प्रेमार्द्र और बेहद प्रसन्न।